ISSN : 2582-2039

सर्वभाषा

अप्रैल-जून 2021, वर्ष-4, अंक-2

भाषा, साहित्य, कला और संस्कृति को समर्पित संस्था 'सर्व भाषा ट्रस्ट' की त्रैमासिकी

विनम्र श्रद्धांजलि

कोरोना की दूसरी लहर ने प्रत्येक परिवार को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया है। इस महामारी के कारण प्रत्येक परिवार ने अपने संबंधियों, मित्रों अथवा परिचितों को खो दिया है। मृत्यु का यह काल-चक्र अभी थमा नहीं है।

हमने अनेक वरिष्ठ और युवा साहित्यकारों-पत्रकारों को खो दिया है। अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करते हुए अनेक चिकित्सकों, अस्पतालों के कर्मचरियों और शिक्षकों का निधन हो गया है। 'सर्व भाषा ट्रस्ट' परिवार की ओर से उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि! प्रभु उनके परिवारजन को इस असह्य शोक काल में संबल प्रदान करें! ऊँ शांति! शांति! शांति!

केशव मोहन पाण्डेय
समन्वयक

रीता मिश्रा
सचिव

अशोक लव
अध्यक्ष

भाषा, साहित्य कला और संस्कृति के संरक्षण संवर्द्धन के लिए

सर्व भाषा ट्रस्ट

नई दिल्ली

की सदस्यता लें।

वार्षिक सदस्य: 501 रुपए/-

आजीवन सदस्य: 5100/-

संरक्षक सदस्य: 11000/-

Sarv Bhasha Trust
Account Details

BANK : Corporation Bank
A/C No. : 520101250833639
IFSC Code : CORP0003046

www.sarvbhashatrust.com

E-mail : mail@sarvbhashatrust.com • Contact : 8178694606

सर्वभाषा

वर्ष : 4, अंक : 2
अप्रैल-जून 2021

प्रबंध संपादक
अशोक लव

प्रधान संपादक
केशव मोहन पाण्डेय

साहित्य संपादक
डॉ. सुमन सिंह

संपादकीय सलाहकार
राजीव उपाध्याय (दिल्ली)
नवीन पाण्डेय (गोरखपुर)
डॉ. ध्रुव मिश्र (दरभंगा)
डॉ. आरती पाठक (रायपुर)
कनक किशोर (राँची)

**

महासचिव : रीता मिश्रा
कानूनी सलाहकार : एस. पी. मिश्र
वेब संपादक : जयशंकर प्रसाद द्विवेदी
सोशल मीडिया प्रभारी : चिराग दुआ
क्रिएटिव एडिटर : जलज कुमार अनुपम

**

हमारे प्रतिनिधि
पूर्वोत्तर : आलोक कुमार
कुशीनगर : आलोक कु. तिवारी
भागलपुर : आलोक प्रेमी
जयपुर : प्रमोद त्रिपाठी
गोरखपुर : केतन यादव

सह-संपादक

समस्त पद अवैतनिक

डॉ. मनोज तिवारी (हिंदी)
रीतिका शर्मा (अंग्रेज़ी)
प्रदीप कुमार पाण्डेय (संस्कृत)
डॉ. रामरक्षा मिश्र विमल (भोजपुरी)
गुलरेज़ शहजाद (उर्दू)
राजकुमार श्रेष्ठ (नेपाली)
यशपाल निर्मल (डोगरी)
डॉ. सरोज कुमार त्रिपाठी (मगही)
आशा पाण्डेय ओझा (राजस्थानी)
नीलम पाण्डेय 'नील' (कुमाउँनी)
अजीत आज़ाद (मैथिली)
डाकोरे कल्याणी लिंगुराम (मराठी)
मानार्थ दवे (गुजराती)
प्रदीप कुमार दाश 'दीपक' (उड़िया)
मंजू भट्टाचार्य (बांग्ला)
मनदीप गिल धड़ाक (पंजाबी)
डॉ. राजेश भंडारी 'बाबु' (मालवी)
श्रीप्रकाष 'सृजन' (ब्रज)
डॉ. राकेश मोहन नौटियाल (गढ़वाली)
भावना मिलन अरोड़ा (बुंदेलखंडी)

धरोहर

चित्र में : अज्ञेय, रामवचन राय व फणीश्वर नाथ रेणु

** चित्र Facebook के Phanishwar Nath Renu पृष्ठ से साभार लिया गया है।*

आवरण चित्र : कुँवर रवीन्द्र

- हमारे संरक्षक/आजीवन सदस्य -

सोनू तँवर (थाणे), मुकेश यादव (गुरुग्राम), डॉ. मनोज तिवारी (गुरुग्राम), यशपाल निर्मल (जम्मू), नीलम पाण्डेय 'नील' (देहरादून), मधु त्यागी (गुरुग्राम), राजेश भंडारी 'बाबु' (इंदौर), तरुणा पुण्डीर (दिल्ली), इंदु मिश्र 'किरण' (दिल्ली), डॉ. प्रभा कुमारी (राँची), केशी गुप्ता (दिल्ली) भावना मिलन अरोड़ा (दिल्ली), कविता पुण्डीर (सहारनपुर), डॉ. किरण सोनी (गुरुग्राम), डॉ. उषा किरण (पूर्वी चंपारण), कृष्ण चंद्र महादेविया (मंडी), प्रदीप पाण्डेय (दिल्ली)

प्रकाशित रचनाओं के विचार रचनाकारों के अपने हैं। इनसे संपादक/संपादकगण का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

***समस्त पद अवैतनिक व अव्यावसायिक हैं!** *** स्वामित्व/प्रकाशक : सर्व भाषा ट्रस्ट**

संपर्क : 8178695606, 8920608821, **ई-मेल :** mail@sarvbhashatrust.com, editorsarvbhasha@gmail.com
वेबसाइट : www.sarvbhashatrust.com
पता (पंजीकृत) : जी – 65/66, 3रा तल, गली नं. – 20, राजापुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली – 110059
(पत्राचार) : 363 – सूर्या अपार्टमेंट, सेक्टर – 6, द्वारका, नई दिल्ली – 110075

अनुक्रम

संपादकीय : केशव मोहन पाण्डेय / 5

आलेख/संस्मरण/यात्रा-साहित्य : कहाँ खो गया नवगीत आंदोलन– शिवचरण चौहान / 6–7, प्रेमचंद और शरदचंद्र के कथा–साहित्य में स्त्री–विमर्श– डॉ. चंदना शर्मा / 8–10, दून, दिल्ली और दक्षिण– डॉ. वेदप्रकाश पाण्डेय / 11–12, संबंधों की बुनियाद : सतर्कतापूर्ण व्यवहार– डॉ. अजय शुक्ल / 13–15, होना जे.आर.एफ. का– डॉ. मुन्ना कुमार पाण्डेय / 16–17, शब्द – विकास मिश्र / 19, आलोचना की कसौटी पर तड़पती कामायनी की करुण–कथा– डॉ. हरेराम पाठक / 20, कथाकार रेणु और प्रेमचंद की दृष्टि में गाँवों के फूल, शूल और धूल– डॉ. सुनील कुमार पाठक / 62–66, असमीया संस्कृति में शंकरदेव की देन– सुमि शर्मा / 67–68

साक्षात्-वार्ता: डॉ. सुमन सिंह द्वारा रचना श्रीवास्तव की वार्ता / 37–39

हिंदी कहानी/लघुकथा : सामयिक लघुकथाएँ– अशोक लव / 32–33, षोडशी– डॉ. उषा किरण / 69–70, शबरी का संयोग– डॉ. आशारानी लाल / 71–72, बुलबुल नहीं आई– डॉ. जगमोहन सिंह / फ़र्क– संदीप नारद / 73, रिक्शावाला– अनिता रश्मि / 74

पुस्तक समीक्षा/चर्चा : रामकहानी : एक पुनर्लेखन – अनिरुद्ध त्रिपाठी 'अशेष' / 50–51, प्रेम के दरिया किनारे बैठकर प्रेम का महाउत्सव – शहंशाह आलम / 52–54, स्त्री संघर्ष को बयां करती पुस्तक : बोलने दो – डॉ. कल्याणी कबीर / 55, स्त्री–क्रांति का उद्घोष करती पुस्तक 'स्त्री का पुरुषार्थ'– लिली मित्रा / 56–57, साहित्य वाटिका में बिखरी 'सेदोका की सुगंध' – डॉ. सुरंगमा यादव / 58

हिंदी कविता/गीत/ग़ज़ल : क्षितिज– केशव मोहन पाण्डेय / 7, नाटक थम जाता है– डॉ. सुनील कुमार शर्मा / 12, आस्था की डोर– डॉ. मनोज तिवारी / 17, ज़िंदगी– डॉ. आरती पाठक / 19 / जीवन संकट में– तरुणा पुंडीर 'तरुनिल' / तरक्की– गौरव पाण्डेय / कविता का होना– नीना छिब्बर / मोहब्बत–अरुणा कुमारी राजपूत / 22, ग़ज़ल– इंदु मिश्रा 'किरण' / आज का दिन– श्वेता / जीवन–मूल्य– डॉ. पूजा कौशिक / वह धरती है– राम गौतम / 23, किसको पता था– केवल कुमार 'केवल' / कर्तव्य–पथ पर– डॉ. प्रभा कुमारी / 24, बेजुबान शब्द– डॉ. सुमन बान्तवा / 25, सर्जिकल स्ट्राइक –उत्पल डेका / 39, मुस्कुरा के चलिए– डॉ. गिरिजा किशोर पाठक / 42, ग़ज़ल–राम कृष्ण धर / ग़ज़ल– अमित कामरा 'अमूक' / 51, स्वास्तिक–माधवी पाण्डेय / 54, पकी फसल को देखकर– शिव कुमार पराग / 60, राम अभी बाकी है –कनक किशोर / नदी का बहना– शिव डोयले / 74, सपने होंगे पूरे– आशा बिधुड़ी / ऐ मेरी दुखमयी रातें– केतन यादव / आज सोचती हूँ – डॉ. रितू शर्मा मनोचा / 75, ठहराव– शहजादी खातून / तुम्हारा जाना – डॉ. सांत्वना श्रीकांत / ऋतुराज – नवीन जोशी 'नवल' / 76

कुमाउँनी : मैस जाणनेर भाय– नीलम पाण्डेय 'नील' / 10, स्यावक ब्या– खुशाल सिंह खनी / संदेश– राजू पाण्डेय / मानवता दैण हैजे– भुवन बिष्ट / 41

गिधौरिया : गजल – ज्योतेन्द्र मिश्र / 15

पुंछी : माड़ा रब्ब – रोमी शर्मा / 21

मुलतानी : उजली भोर – अंजू खरबंदा / 21

कांगड़ी : अज्जकल – भगत राम मंडोत्रा / 25

संस्कृत : शारीरिकस्वास्थ्यसंरक्षणाय आयुर्विज्ञानम्– योगेन्द्र भारद्वाज / 17, वज्र मनःहनुमच्चरणाश्रयम् – मार्कण्डेय शारदेय / 25

बुंदेली : धर्म– जयति जैन 'नूतन' / भेद कायखों – भावना अरोड़ा 'मिलन' / 26

बघेली : बिटिया के महतारी– सूर्यभान कुशवाहा / 26

गुजराती : कई बार– स्व. रक्षित दवे / 27

कोशली : जीबनर् महक् – विश्वनाथ भुए / 27

हिमाचली : गीत – कृष्ण चंद्र महादेविया / 28

नेपाली : तिमी – भीष्म उप्रेती / 28

सरगुजिहा : चुनाव – मधु गुप्ता 'महक' / 28

पहाड़ी : ग़ज़ल – अब्दुल वाहिद मन्हास / 29

संथाली: एदेल बाहा– गोपाल किस्कू / 29

सिंधी: पिता जू यादगीरियूं– हरीश करमचंदाणी / 29

पंजाबी : खबरां– मनदीप गिल्ल धड़ाक / 30

मगही : चोरवल कविता – राजेन्द्र पाठक / 30

निमाड़ी : ग़ज़ल / महेश जोशी 'अनल' / 30

अवधी : मुक्तक–नितेश दिव्य / बररत पूस– विनय विक्रम सिंह / 31, कहूँ कोरोना– प्रतीक त्रिपाठी / 44

हाड़ौती : नई पीढ़ी– प्रतिमा पुलक / 31

मालवी : लोट्या बिन पैंदा का – राजेश भंडारी 'बाबु' / मामा का गांव चलागां– नरेन्द्र मांडलिक / 34

मैथिली : हमर बीया– रवि झा / 34

कनौजी : प्रीत की रीत पुरानी– डॉ. प्रखर दीक्षित / 34

हरियाणवी: वृक्षरोपण अब शुरू करो– पृथ्वी सिंह बैनीवाल बिश्नोई / 35

उड़िया : समय बुझेना– वैद्यनाथ पण्डा / 35

सिरमौरी : गीत – अनंत आलोक / 36

राजस्थानी : गजल– आशा पाण्डेय ओझा / 36

डुंगरी : घणी याद आवे – संजय वर्मा 'दृष्टि' / 36

ढूँढाड़ी : बाल पणै ब्याह – बाबूलाल शर्मा 'बौहरा' / 40

कश्मीरी : गुर त्रावुन – बिन्दिया रैना तिक्कू / 40

उर्दू : नज़्म – बुशरा खातून / 40

देवघरिया : ग़ज़ल – डॉ. कौशिक मिश्र / 42

गढ़वाली : बिडंबना – डॉ. राकेश मोहन नौटियाल 'कटकाणी' / 42

बांग्ला : हकेर संगे : मंजू भट्टाचार्य / 43

जौनसारी: आच्छा हामारा रिती रिवाजों– सीमा शर्मा / 43, नशामुक्ति– आदित्य नौटियाल / माघो की मिने की रुकुन / दीक्षा तोमर / 44

भोजपुरी : लिहीं खुरचन– जयशंकर प्रसाद द्विवेदी / गीत– बिम्मी कुँवर सिंह / चुनाव नियराइल– आकाश महेशपुरी / 45, गीत– गुरुविंदर सिंह 'गुरु' / मोर गँउवा– तारकेश्वर राय 'तारक' / 46, खरहा के करेजा– शशि रंजन मिश्र / 47

English : The Battle at Derababa Nanak – Sonu Tanwar/46, Beautiful Nature- Gaurishankar Vaish Vinamra/Life : A Barren Field – Avani Jain/47, Shonar Bangla -Dr. Sudeepta Ghosh/48-49, The Shattered can be Loved – Surbhi Mendiratta - 49

मराठी : ओठांचे मनोगत– सुवर्णा जाधव / मौनातील शब्दांना– संतोष बोंगाळे / 49

डोगरी : गीत– रतन भारद्वाज / ग़ज़ल– मनोज निश्चिंत / 57, गीत– यशपाल निर्मल / 60

तमिल : ज्ञान सिद्धि का गीत / डॉ. संजय रामन / 59

तेलुगु : वक़्त बदला–बदला सा– डॉ. टी महादेव राव / 59

अंगिका : शरदें तोड़ै साग रे – कुमार संभव / 60

दोरली : आलप टिंगनिच– दादा जोकाल / 60

छत्तीसगढ़ी : गीत– केदार दुबे / गीत– जगदीश कुलदीप / 61

बज्जिका : हम तोहर नेह में– हरिनारायण सिंह 'हरि' / गीत – मुकेश कुमार मृदुल / 61

असमिया : वाणप्रस्थ – डॉ. माखन लाल दास / 66

ब्रज : गोरो रंग आजहु कारे पै भारी – मनु वशिष्ठ / 77

नवांकुर : कोरोना : आपदा या अवसर– स्वाथी गुराडा / Time Optimization- Devisha Bhargava / सितारे दूर के– हर्ष लहोटी / 78

केशव मोहन पाण्डेय

सर्वे सन्तु निरामयाः

भारत विचारशीलों और कर्मयोगियों का देश है। यहाँ के लोग सबकी मंगल कामना करते हैं। कोरोना महामारी में जहाँ चीख–पुकार, आह–आँसू, पीड़ा–अवसाद, तड़प–सन्नाटा का बोलबाला रहा है, वहीं अनेक ने इसे अवसर के रूप में भूनाया है। इंजेक्शन्स, ऑक्सीजन और एम्बुलेंस के नाम पर लोग दिनोदिन लाखों कमाने में लगे रहे। हमारे जनप्रतिनिधि दीर्घ श्वाँस में संबंधों का मजाक उड़ाते रहे, 'खेला' की चेतावनी देकर चित करने का दाँव–घात लगाते रहे। कोरोना ने अनेक शिक्षक, चिकित्सक और साहित्यकारों की ईह लीला समाप्त कर दिया। अनेक जन–प्रतिनिधियों की भी आँखें बंद हो गईं। हम जैसे साधारण लोग आपस में फोन पर बातें कर के, रो–गाकर, संवेदनाएँ व्यक्त कर के असंवेदनशील और किंकर्तव्यविमूढ़ बने रहे। फिर भी हजारों, लाखों, करोड़ों हृदय से 'सर्वे सन्तु निरामयाः' की गूंज देश के हर कोने में प्रतिध्वनित होती रही। इस प्रार्थना की शक्ति ने अनेक के प्राण की रक्षा की। अनेक को साहस दिया। 'सह' का आभास कराया।

कई बार हम अप्रिय शब्दों का मुखर विरोध करने लगते हैं तो कई बार पलकें झुकाकर घूँट भीतर–ही–भीतर पी जाते हैं। साहित्यकार उन शब्दों को अपनी लेखनी का शृंगार मानता है और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी लोकमंगल हेतु सृजन करता रहता है। वैश्विक विपदा कोरोना की इस बार की लहर ने भारत की आत्मा को झकझोर दिया। इस लहर में अनेक शीर्षस्थ शब्द–सेवक इस संसार से विदा हो गए। उन जाने वालों ने उम्र का कोई बंधन नहीं माना। हर वय की आत्मा असमय परमात्मा के दरबार में चली गई। जाने की इस घटना के बीच अनेक शब्द–साधकों ने अपने मन को 'सकारात्मक होना' स्वीकार करवाने के लिए खूब पुस्तकें पढ़ीं, खूब साहित्य रचा और अब भी प्रतिकूल बेला को बिता रहे हैं। कई ने समाचार देखना, पढ़ना, सुनना बंद कर दिया। सोशल मीडिया पर जाना बंद कर दिया। 'फारवर्ड' किए गए संदेशों को बिना पढ़े 'क्लीन चैट' करना शुरू कर दिया। वहाँ देखा, पढ़ा, सुना जा रहा सबकुछ पीड़ादायक लगने लगा था। इस कोविड –लहर ने सबकी आँखों में अश्रु दिए हैं, लगभग सबके आँगन को दीप्तिहीन किया है, सबके हृदय से विषादमय बनाया है। आँखें बंद करने पर भी ऑक्सीज़न के लिए लड़ते, भागते और चीखते लोग दिखते रहे। अनेक के शब्द समझ में नहीं आते थे, भाषा समझ में नहीं आती थी, मगर इस कोरोना–काल में विषाद, पीड़ा और भय का दृश्य किसके लिए अनभिज्ञ हो सकता है?

सोशल मीडिया पर प्रतिदिन एक–दो–चार–दस अपने परिचितों, सूचीबद्ध मित्रों या उनके संबंधियों के लिए हम 'विनम्र श्रद्धांजलि' या 'ओम् शांति' लिखते और मन–ही–मन डरते रहे कि अगली बार किस अपने के लिए यह शब्द लिखना पड़े। इन सबके बाद भी सदा गतिशील रहने वाला मानव इस कोरोना–काल में पूरी तरह से मानवता की रक्षा के लिए संघर्षरत दिखाई दे रहा है। मानव जीवन कोविड–19 से त्रस्त है और निरंतर प्रयास करने के बावजूद भी पराजित होता जा रहा है। इस स्थिति में कुछ विफलताएँ राज्य और केन्द्र सरकारों के लिए कलंक का टैटू बन गईं हैं। आमजन के लिए सफलता यह कि उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय के संज्ञान के बाद ही सही, सामाजिक दबाव और नैतिकता के सुगबुगाहट के कारण ही सही, सरकारों द्वारा अनेक सकारात्मक और प्रेरक कार्य भी किए गए। भारतीयों की रक्षा के भरसक प्रयास के साथ भारतीय संस्कृति 'वसुधैव कुटुंबकम्' का मान रखा गया। कोविड के कारण सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, सारी गतिविधियाँ बाधित हो गई हैं, परन्तु भारतीयों के संघर्षों को पार कर सकारात्मकता के उत्सव मनाने का अनेक उदाहरण इतिहास के स्वर्णाक्षरों में अंकित हैं। भारत की मिट्टी ने ऐसी संतानों को जन्म दिया है।

मनुष्य को अवसरवादी कहा जाता है। अनेक लोगों ने आपदा को अवसर समझा और अनेक के लिए इस आपदा ने अवसर भी दिया। कुछ ने कुटीर उद्योग के रूप में मास्क आदि बनाना सीखा और शुरू भी किया। अनेक नवांकुरों ने साहित्य लिखना प्रारंभ किया। कुछ ने अपनी लेखनी को धारदार किया और कुछ आज भी कलम के बदले जबान चलाते रहते हैं।

साहित्य में सहित का भाव है। इस पर देश, काल और वातावरण का प्रभाव पड़ता ही है, मगर इस विषाद और तनाव के वातावरण में सकारात्मकता, साहित्य और स्वावलंब सबसे बड़ा संबल है। साहित्य के उसी सकारात्मकता का परिणाम है कि इस कठिनतम समय में भी साहित्यकारों और विद्वानों के सृजनात्मक सहयोग से 'सर्वभाषा' का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत हो पा रहा है। यह अंक आहत मन में उत्साह और पराजित मन में जीत का पुनर्विश्वास भरने के लिए एक लघु प्रयास है। 'सर्व भाषा ट्रस्ट' द्वारा यह अंक कोरोना के इस विपदा में हमसे बिछड़ गए साथियों के लिए श्रद्धांजलि है और अपनों को विदा दे चुके लोगों के साथ जीवट राष्ट्र को समर्पित है।

केशव मोहन पाण्डेय

कहाँ खो गया नवगीत आंदोलन

हिंदी / आलेख

शिवचरण चौहान

एक समय हिंदी कविता, हिंदी गीतों में अपना राज करने वाला नवगीत आज अपनी पहचान खोता जा रहा है। नवगीत कुछ छापने के लिए ना तो कोई प्रकाशन स्थल है ना कोई काव्य मंच और ना कोई शंभूनाथ सिंह राजेंद्र प्रसाद सिंह अथवा ठाकुर प्रसाद सिंह जैसा नवगीत का ध्वजा वाहक। जो नव गीत कारों को इकट्ठा करे और नवगीत सृजन को आगे बढ़ाएं। नवगीत कारों को मंच दे। हिंदी में आज कोई ऐसा प्रकाशक नहीं है जो नवगीत संग्रह छापे। आज स्थिति ऐसी हो गई है कि नवगीत लिखे तो जा रहे हैं पर उनके प्रस्तुत करने का कोई मंच नहीं है।

बिहार के मुजफ्फरपुर निवासी डॉ राजेंद्र प्रसाद सिंह ने नवगीत की विधिवत शुरुआत की थी उन्होंने अपने हिसाब से नवगीत की परिभाषा भी गढ़ी थी। उनका पहला नवगीत संग्रह गीतांगिनी सन 1958 में आया था। यद्यपि उनके पहले भी सूरदास तुलसीदास कबीर और निराला जाने अनजाने में नवगीत की रचना कर चुके थे। सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की अनेक गीत नवगीत ही हैं।

काशी निवासी डॉक्टर शंभू नाथ सिंह ने विधिवत नवगीत आंदोलन चलाया था। उनके नवगीत उस समय काव्य मंचों पर धूम मचाए रहते थे। इतने सुंदर ढंग से नवगीत लिखते थे उतने ही सुंदर ढंग से नव गीत सुना ते भी थे। डॉक्टर शंभू नाथ सिंह ने भारत भर के नवगीत कारों को एक मंच पर लाने का प्रयास किया था। उन्होंने नवगीत दशक नाम से कई संग्रह निकाले और नवगीत कारों को स्थापित किया था। ठाकुर प्रसाद सिंह प्रथम श्रेणी के अफसर थे और उत्तर प्रदेश के सूचना निदेशक भी। उनके संग्रह वंशी और माद ल में बहुत सुंदर नवगीत संग्रहीत हैं। ठाकुर प्रसाद सिंह ने भी काव्य मंचों से नवगीत की रसधार बहाई थी।

इन नव गीत कारों का मानना था कि आज समय बदल गया है। गीत को महज छायावाद प्रेम वाद से निकालकर जन जन के बीच ले जाना है। नवगीत में भले ही मात्राओं का तुकांत ना मिले परंतु गेयता होनी चाहिए। नया कथ्य नया विषय नए प्रतिमान नए अलंकार होने चाहिए और आमजन की पीड़ा की अभिव्यक्ति नवगीत में होनी चाहिए। जो गीत शोषित पीड़ित आमजन की समस्या ना समझ सके उनका दर्द अपने दिल में समाहित ना कर सके वह गीत किस काम का। सामयिक प्रतिमान, उपमान, उपमेय के साथ आमजन का दर्द, सामाजिक और राजनीतिक परिपेक्ष्य का वर्णन चित्रण गायन नवगीत में होना चाहिए।

इस संदर्भ में नईम के नवगीत टटके टटके दिल में स्थान बना लेते हैं और आज की व्यवस्था पर प्रहार करते हैं। मध्य प्रदेश के शाजापुर के डॉक्टर इशाक अश्क के नव गीत देर तक याद रहते थे। उनकी पत्रिका समांतर लगातार नवगीतकारों को प्रोत्साहित करती थी। मुंबई के हस्तीमल हस्ती गजलों के और नव गीतों के लिए समर्पित होकर काव्या नाम की एक मासिक पत्रिका निकालते हैं। डॉक्टर सूर्यभान गुप्त, जहीर कुरैशी, शांति सुमन, विजय किशोर मानव, डॉक्टर माहेश्वर तिवारी, भारत भूषण, किशन सरोज सूर्य कुमार पांडे य के नवगीत एक समय धूम मचाए रहते थे। हिंदी की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं से लेकर रेडियो दूरदर्शन कवि सम्मेलनों में इनके नवगीत सुने और सराहे जाते थे।

योगेंद्र दत्त शर्मा, प्रसिद्ध नव गीतकार कन्हैयालाल मत्त के सुपुत्र हैं। प्रकाशन विभाग की पत्रिका आजकल का संपादन करते हुए उन्होंने हिंदी नवगीत के लिए बहुत काम किया है। आजकल के कई विशेषांक इसके उदाहरण है। योगेंद्र दत्त शर्मा स्वयं एक कुशल नव गीतकार, कवि है।

कानपुर में जन्मे पढ़े लिखे और अब दिल्ली में बस गए नव गीतकार विजय किशोर मानव ने दैनिक जागरण, दैनिक हिंदुस्तान के रविवारी विशेषांक, परिशिष्ट में अनेक नवगीत कारों को छाप प्रकाशित किया है। नवगीत कारों की एक पीढ़ी दैनिक जागरण और हिंदुस्तान के साप्ताहिक परिशिष्टों से तैयार हुई है। विजय किशोर मानव ने कादंबिनी का संपादन करते हुए अनेक उभरते हुए नवगीतकारों को प्रतिस्थापित किया है।

रामकुमार कृषक ने अपनी पत्रिका का नव गीतकार नईम पर एक विशेषांक छाप कर उल्लेखनीय काम किया है। गोरखपुर निवासी देवेंद्र कुमार बंगाली नवगीत के अद्भुत चितेरे थे। एक पेड़ चांदनी लगाया है आंगने। फूले तो आ जाना एक फूल मांगने।। उनका बहुत चिर परिचित नवगीत है।

बुद्धिनाथ मिश्र ने जितने सुंदर नवगीत लिखे हैं उतने ही सुंदर ढंग से वह मधुर कंठ से नव गीत सुनाते हैं। साहिबाबाद गाजियाबाद निवासी देवेंद्र शर्मा इन्द्र नव गीतों के सम्राट थे। नव गीतकार वीरेंद्र मिश्र उनका बहुत सम्मान करते थे। वीरेंद्र मिश्र के कई नवगीत संग्रहों का संपादन देवेंद्र शर्मा इंद्र ने किया था। मुद्दा है आज की बहस में। चिड़िया क्यों कैद है कफस में।। उनका

चर्चित नवगीत है। नई दिल्ली के राजेंद्र गौतम के नवगीत भी बहुत श्रेष्ठ होते हैं। कानपुर निवासी और दिल्ली में जा बसे राधेश्याम बंधु एक लंबे समय से नवगीत लिख रहे हैं। वीडियो टीवी और पत्र-पत्रिकाओं में उनके नवगीत छपते रहे हैं। उनके कई संग्रह भी हैं। गीतों के राजकुमार गोपाल दास नीरज जी ने अनेक उल्लेखनीय नवगीत लिखे हैं। उनके कई नवगीत फिल्मों में जाकर और अधिक लोकप्रिय हुए हैं।

इलाहाबाद निवासी उमाकांत मालवीय अपने नवगीतों के लिए मशहूर थे। उनके अनेक नवगीत आज भी उनके श्रोताओं को कंठस्थ हैं। उनके पुत्र यश मालवीय भी नव गीतकार हैं। और नि. रंतर सृजन रत हैं। रायबरेली के नवगीत कार गुलाब सिंह ने नए पुराने नाम से एक पत्रिका निकाली थी जिसमें देशभर के नव गीतकारों के नवगीत छपते थे और समीक्षात्मक आलेख भी। नवगीत के बारे में अनेक उल्लेखनीय आलेख नए पुराने पत्रिका में छपे हैं जो ऐतिहासिक है। बालकृष्ण मिश्र जय चक्रवर्ती, कानपुर के विनोद श्रीवास्तव चर्चित नव गीतकार हैं।

कानपुर के अवध बिहारी लाल श्रीवास्तव लाल साहब और साहित्य भूषण वीरेंद्र आस्तिक देश के प्रतिष्ठित नवगीतकार हैं। लाल साहब की हल्दी के छापे नव गीतों की कृति है। वीरेंद्र आस्तिक के कई नवगीत संग्रह आ चुके हैं। आनंद तेरी हार है उनका बहुत चर्चित नवगीत है जो बहुत लोगों को कंठस्थ है। डॉ. रामस्वरूप सिंदूर, हरिलाल मिलन ब्रजनाथ श्रीवास्तव, रामस्वरूप सिंदूर, कन्हैया लाल बाजपेई के नवगीत बहुत चर्चित हुए हैं। कन्हैया लाल बाजपेई का एक संकलन भी लोकप्रिय हुआ है। सुप्रसिद्ध संपादक नव गीतकार कन्हैयालाल नंदन तो कन्हैया लाल बाजपेई का एक नव गीत (सोने के हिरन नहीं होते) अक्सर सुनाया करते थे। कन्हैयालाल नंदन ने धर्मयुग, सारिका नवभारत टाइम्स और संडे मेल में अनेक नवगीत कारों के नवगीत छापे हैं। गगनांचल के संपादक रहते हुए कन्हैयालाल नंदन ने अनेक नवगीत कारों को प्रोत्साहित किया था। सहारनपुर के कृष्ण शलभ के नवगीत अक्सर पत्र-पत्रिकाओं में छपते थे और उनका एक नवगीत संग्रह भी है। लखनऊ के देवल आशीष का असमय जाना सबको रुला गया था। श्री राम शलभ सिंह से लेकर अवनीश सिंह चौहान, अवनीश त्रिपाठी, विनय विक्रम सिंह अनेक नव गीतकार बहुत अच्छे हैं समय अनुकूल नवगीत सृजित कर रहे हैं।

आज नवगीत कारों के सामने सबसे बड़ी समस्या है कि उनके लिए कोई प्रकाशन मंच काव्य मंच नहीं है।जहां वह अपनी प्रस्तु ति कर सकें। आकाशवाणी और दूरदर्शन की हालत इन दिनों ठीक नहीं है। बजट के अभाव में अच्छे कार्यक्रम नहीं बन पा रहे हैं। कोरोना काल के आर्थिक संकट के चलते हिंदी की अनेक पत्र पत्रिकाएं बंद हो गई हैं। दैनिक समाचार पत्रों ने अपने साहित्यिक पृष्ठ या तो कम कर दिए हैं या बंद कर दिए हैं। आज नवगीत कारों को मंच देने के लिए कोई सक्षम नव गीतकार नहीं है। कुछ साल पहले लखनऊ में नवगीत पर दो या तीन सेमिनार हुए थे पर अब वह भी बंद हैं। ■■

❑ कानपुर, उत्तर-प्रदेश

क्षितिज

हिंदी / कविता

केशव मोहन पाण्डेय

वह जो छोर देख रहे हो
वही मिलती है धरती
आकाश से
वही सपने सच होते है
और हक़ीक़त
गलबाँही करती है
सपनों को।

वह जो छोर देख रहे हो
वही हैं
ढेरों सफलताएँ
परंतु वहाँ पहुँचने के लिए
पार करना पड़ता है
समय के पहाड़ को
गुजरना पड़ता है
यथार्थ के जंगल से
अनुभव के दुर्गम रास्ते से
होकर
कई बार तो
सपाट जमीन मिल जाती है
निरंतरता की
और कई बार चुनौतियाँ देती है
असफलताओं की तूफानी नदियाँ
जिसे पार होना ही है
नहीं तो
हार होना ही है।

लोग अक्सर
उस नदी को पार करते हैं
परिश्रम का सेतु बनाकर
कर्म की नाव से
विश्वास के पतवार के भरोसे
तब मिल जाता है वह छोर।

वह जो छोर देख रहे हो
वही मिलती है धरती
आकाश से
और वही होता है
दौड़ पूरा
जीवन का
जीने के लिए,
परंतु कोई नहीं पहुँच पाता
वहाँ तक
दौड़ पूरा नहीं कर पाता कोई
जीवन भर दौड़ने के बाद भी।

पर मुझे वही जाना है
सपनों को पाना है
सफलताओं से मिलना है
और दौड़ पूरा कर के
दिखाना है
दिखाना है मुझे
एक मेहनतकश आदमी की औक़ात।
■■

❑ संपादक, सर्वभाषा, नई दिल्ली

प्रेमचंद और शरदचंद्र के कथा-साहित्य में स्त्री-विमर्श

हिंदी / आलेख

डॉ. चंदना शर्मा

प्रेमचन्द और शरतचंद्र के साहित्य का कथाफलक बहुत विस्तृत है। उन्होंने अपने कथा–साहित्य में मानव अनुभवों को जो आयाम दिये हैं, वे सिर्फ उत्तरभारत या बंगाल से ही परिचित नहीं कराते बल्कि सम्पूर्ण भारतवर्ष के सांस्कृतिक परिवेश को चित्रित करते है। दोनों ने ही अपने साहित्य में 'स्त्री' की स्थिति का सम्यक निरूपण किया है। भारतीय नारी अनेक कुरीतियों से ग्रस्त थी। प्रेमचन्द और शरतचंद्र ने नारी को युगों–युगों के संस्कारों से मुक्ति दिलाकर, उसके स्वतंत्र अस्तित्व और सुदृढ़ पारिवारिक स्थिति का समर्थन किया है। दोनों ने ही भारतीय नारी को अपने साहित्य में गौरव से मंडित कर मानवीय स्तर पर प्रतिस्थित किया है ।

प्रेमचंद एवं शरतचंद्र के कथा साहित्य में नारी– प्रेमचन्द तथा शरतचन्द्र ने अपने कथासाहित्य में नारी को ब्यापक और उदार दृ ष्टिकोण से देखा है। मानव की साधारण कमजोरियों को उसी रूप में चित्रित किया। प्रेम मनुष्य की एक स्वाभाविक प्रवृति है। दोनों कथाकारों ने इसे प्रस्तुत किया है।

गोदान में 'सिलिया' का 'मातादिन' के प्रति कामलिप्सा को प्रेमचन्द ने कर्त्तव्य के साथ बाँध दिया है 'सिलिया' ने काम की सहज इच्छा के साथ–साथ 'मातादिन' को सच्चे हृदय से चाहा। यही भावना प्रेमचन्द की दृष्टि में अधिक महत्त्वपूर्ण है।

शरतचंद्र ने भी मानवीय आदर्श की परिकल्पना में यौन आकर्षण को गौण स्थान दिया है। उसके कारण मनुष्य को हेय नहीं किया। 'राजलक्ष्मी' का 'श्रीकांत' के प्रति आकर्षण भी कर्तव्य और निष्ठा के साथ पिरोया है। 'राजलक्ष्मी' की प्यारी बाई का इतिहास इसीलिए उपन्यास में किसी भी प्रकार से उसके मानवीय पक्ष को कलंकित नहीं करता। वस्तुतः सिलिया अथवा राजलक्ष्मी का आकर्षण केवल शारीरिक नहीं था, उसके साथ उनकी असीमित चाह, कर्तव्य भावना भी समाहित है। अतः उन्होंने काम भावना को समुचित ठहराया है। किन्तु काम की अनियंत्रित प्रवृत्ति को समर्थन नहीं किया।

अनमेल विवाह– अनमेल विवाह के कारण नारी जीवन भर रोती रहती है। प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में ऐसे नारियों की सहृदयता से चित्रण किया है। जैसे 'सेवासदन' उपन्यास की सुमन 'प्रतिज्ञा' उपन्यास की सुमित्रा 'प्रेमाश्रम' उपन्यास की विद्या 'गोदान' उपन्यास की गोविंदी इत्यादि। प्रेमचंद की ही भाती शरतचंद्र की कथा साहित्य में भी दुखी दांपत्य जीवन की झलक दिखलाई पड़ती है। अनमेल विवाह के शिकार स्त्रियाँ यत्र तत्र परिलक्षित होती है। शरतचंद्र के 'चरित्रहीन' की किरणमई 'दर्पचूर्ण' की इंदुमती 'आलो ओ छाया' की प्रतुल 'देवदास' की पार्वती इत्यादि इसके उत्कृष्ट उदाहरण है। दरिद्रता का कूफल समाज में सबसे अधिक स्त्रियों को ही भोगना परता है। दरिद्रता के कारण ही न चाहने पर भी माता पिता अनमेल विवाह कराने को तैयार हो जाते है। दहेज के बिना ब्याह नहीं होता। इसीलिए समाज में लड़कों को लड़कियों से अधिक महत्त्व दिया जाता है। क्योंकि घर में लड़का होगा तो दहेज मिलेगा और लड़की हुई तो दहेज देना पड़ेगा। इस कु–प्रथा के कारण ही नारी को उनका प्राप्य सन्मान नहीं मिलता। प्रेमचन्द ने अपने कथासाहित्य में इसका वर्णन किया है। 'निर्मला' उपन्यास की निर्मला, 'गोदान' उपन्यास की रूपा 'सेवासदन' उपन्यास की सुमन आदि इसी का उदाहरण है।

विधवाओं की समस्या– हिंदू समाज में विधवाओं का कोई आदर नहीं है वह भले ही बंगाल हो असम हो अथवा उत्तर प्रदेश। विधवा होना मानो एक प्रकार का अपराध है। विधवाओं के लिए खान–पान, आमोद–प्रमोद, भूषण आदि की मनाही है। 'नारी का मूल्य' में जी शरतचंद्र कहते हैं "एक स्त्री के जीवित रहते हुए पुरुष अपने घर में और स्त्रियों को लाकर रख सकता है लेकिन यदि बारह बरस की बालिका विधवा हो जाए तो उसे देवी ही होना पड़ेगा।"[1] शरतचंद्र को यह बात बहुत खटकती थी अतः उन्होंने आगे लिखा "अब यह बात पूरी तरह नहीं बताया जा सकता कि इस व्यवस्था ने देश की समस्त नारी जाति को कितना अधिक हीन कर रखा है और उन्हें खींचकर कितनी और अब किस स्थान पर पहुंचा दिया है।"[2]

प्रेमचंद ने विधवा युवतियों के प्रति सहृदयता का प्रदर्शन किया है। परंतु प्रेमचंद के नारी पात्रों में प्रेम का विकास मर्यादा और संयम के भीतर ही होता है। साथ ही वह आकस्मिक ना होकर धीरे–धीरे होता है। 'वरदान' उपन्यास की विरजन 'कायाकल्प' उपन्यास की मनोरमा 'रंगभूमि' उपन्यास की सोफिया 'प्रतिज्ञा' उपन्यास की पूर्णा इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। जहा प्रेम की सृष्टि की गई है वहाँ उसे सामाजिक समस्याओं के सामने गौण रूप में उपस्थित किया गया है। प्रेम को समाज घृणित नजर से देखता है। जैसे आशा रखता है कि विधवा होने के साथ–साथ उसकी काम इच्छा भी खत्म हो जाए। किंतु स्वाभाविक वृत्ति को बलपूर्वक दबाया नहीं जा सकता। फलस्वरुप स्त्री अन्य अवलंवन ढूँढने का प्रयास करती है जहाँ वह अपनी वृत्ति को संतोष दे सके किंतु समाज इस प्रेम की स्वीकृति नहीं देता। प्रेमचंद ने इसकी समाप्ति विधवा आश्रम में अथवा जप तपमें परिवर्तित करके दिखाया है।

विधवा एक तो स्वयं ही उपेक्षित होती है ऊपर से समाज के लोग सहानुभूति की जगह अमानुष एक व्यवहार करते हैं। फलतः विधवाओं की मानसिक स्थिति विपन हो जाती है। सब प्रकार की यातना सरकर भी उसे जीवित रहना पड़ता है। रूढ़िवादी समाज बाल विधवाओं से भी त्याग की

1. शरतचंद्र; नारीर मूल्य; शरत रचनावली; भाग–1;पृ. 916
2. शरतचंद्र; नारीर मूल्य; शरत रचनावली; भाग–1;पृ. 917

आशा करना कितना हास्यास्पद है। प्रेमचंद ने 'नैराश्य लीला' कहानी में कमलेश, 'कुमारी' कहानी में मानी, 'स्वामिनी' कहानी में प्यारी आदि के सहारे बाल विधवा की करुणा तथा दर्द भरी जीवन को चित्रित किया है।

बंगाल की विधवाओं को काफी पाबंदियों के बीच रहना पड़ता है। प्रेमचंद की भाती शरतचंद्र ने भी बाल विधवाओं का निरूपण किया है 'आलो औ छाया' की सुरमा 'पंडित मसाए' की कुसुम 'ग्रामीण समाज' की रमा इसका उदाहरण है। प्रेमचंद और शरतचंद्र ने बाल–विवाह तथा वृद्ध–विवाह का दुष्परिणाम बाल–विधवा में दिखाकर उसका बहुत ही मार्मिक चित्रण किया है। प्रेमचंद की बाल विधवा यथार्थ के धरातल के करीब है। जबकि शरतचंद्र की बाल विधवाओ ने अपनी मनोदशा को ही प्रमुखता दी है।

प्रेमचंद और शरतचंद्र दोनों ने प्रेम की प्रवृत्ति को एक सजीव रूप देने का प्रयत्न किया है। परंतु भारतीय संस्कारों से मुक्त ना होने के कारण विधवाओं के प्रेम को उन्होंने असफल ही बनाया। असफल प्रेम के कारण यह स्त्री या तो जप–तप में अपने को दबा लेती है अथवा विधवा आश्रम के शरण में चली जाती है।

आर्थिक समस्या– स्त्रियों की एक समस्या आर्थिक भी है। पहले प्रेमचंद के समय विधवाओं को अथवा स्त्रियों को सम्पत्ति का अधिकार प्राप्त नहीं होता था। पति की मृत्यु के पश्चात सम्पत्ति पर पत्नी का कोई अधिकार नहीं होता था। अगर संतानहीन हो तो विधवा को सम्पत्ति से बेदखल कर उसे भाई भतीजे की तत्वावधान में रख दिया जाता था। अगर विधवा का संतान है तो केबल उस पर रहने का ही अधिकार था। सम्पत्ति का अधिकार पूरी तरह संतान के हाथों चला जाता था। विधवाओं को आर्थिक व्यवस्था से विवश होकर शरीर बेचने की नौबत तक आ जाती थी। अथवा आत्महत्या कर लेती थी। एक समय जिस घर कि वह स्वामिनी होती थी पति के मरणोपरांत उस घर में उसकी कोई कदर नहीं होता था। प्रेमचंद ने इस समस्या को भी अपनी रचनाओं में उभरा है। 'गबन' उपन्यास की रतन के कोई संतान नहीं था। अतः उसके पति की कमाए हुए सम्पत्ति पर दूसरों का हक हो जाता है और वह राह की भिखारी बन जाती है। उसी तरह 'बेटों वाली विधवा' की फूलमती भी ऐसी ही परिस्थिति का सामना करती है। फूलमती अपने ही पुत्रों द्वारा कष्ट मिलने के कारण अधिक करुण दशा में पहुँच जाती है। फूलमती को अपने पुत्रों के मुख से प्रायः यही सुनना पड़ता है कि कानून यही है कि बाप के मरने के बाद जायदाद बेटों की हो जाती है। उस पर माँ का केवल दाल रोटी का ही अधिकार है।

नारी की यही आर्थिक स्थिति उसे वेश्या भी बना देती है 'सेवा सदन' की सुमन 'वेश्या' की माधुरी 'गबन' की जोहरा आदि नारियां आर्थिक दुरावस्था से परित्रण पाने के लिए ही अपनी शरीर बेचने पर मजबूर हो जाती है।

प्रेमचंद की तरह शरतचंद्र ने भी अपने नारी पात्रों के माध्यम से उनके आर्थिक दृष्टि से अवलंबित रूप का चित्रण किया है। विवाह के पूर्व इस अवलंबन की शिकार है 'आरक्षणीया' की ज्ञानदा, 'पथ निर्देशन' की हेम, 'ब्राह्मण की बिटिया' की संध्या 'परिणीता' के ललिता विवाह के बाद आर्थिक दृष्टि से अवलंबित है। 'चंद्रनाथ' की सरयू, 'विराज बहू' की विराज, 'बिप्रदास' की सती इत्यादि विधवा अवस्था में से गुजरते हुए भी कुछ एक नारी पात्र इस समस्या के शिकार होते हैं। 'आरक्षणीया' की दुर्गा, 'ग्रामीण समाज' की छतरी, 'आरक्षणीया' या के स्वर्ण मंजरी, 'ब्राह्मण की बेटी' की राशि ब्राह्मणी को आर्थिक पराधीनता स्वीकारना परता है।

'आरक्षणीया' की ज्ञानदा एक विधवा की कुरूप कन्या है जिसे विवाह के लिए बार–बार अपने चेहरे का प्रदर्शन करना पड़ता है। लेकिन हर बार उससे नकारात्मक जवाब मिलता है। अगर विधवा दुर्गा के पास धन होता तो शायद वह अपनी बेटी की कुरूपता को दहेज के भार से ढक सकता था। 'आरक्षणीया' कि दुर्गा देवर के घर में विधवा होने के कारण एक अपमानजनक जीवन निर्वाह करती है। बात बात में उससे देवर के मुँह ताकना पड़ता है। अपनी बेटी की शादी के लिए भी उसी की मान्यता को महत्त्व देना पड़ता है। दुर्गा की तरह ही स्वर्ण मंजरी भी अपने देवर के घर में रहती है नि. संतान होने के नाते देवरानी या उसे अक्सर बातें सुनाती है। 'परिणीता' की ललिता आर्थिक संकट से छुटकारा के लिए मुनीम के शरण लेती है तो 'निर्देशन' की ललिता शेखर के।

वेश्यावृत्ति की समस्या– आर्थिक कठिनाइयों से विवश होकर वेश्यावृत्ति लेना नारी के लिए पुरानी परंपरा है। प्रेमचंद की भांति शरतचंद्र ने भी वेश्यावृत्ति का कारण आर्थिक व्यवस्था को ही ठहराया है। 'श्रीकांत' की राजलक्ष्मी, 'शुभदा' की ललना', 'देवदास' की चंद्रमुखी, इनका उदाहरण है। 'श्रीकांत' की राजलक्ष्मी सिर्फ आर्थिक कठिनाइयों से छुटकारा लेने के लिए ही इस पेशे को अपना लेती है। 'शुभदा' की ललना एक बाल विधवा है। जिससे अपने परिवार तथा खुद की देखभाल करनी पड़ती है। एक अशिक्षित रमणी के लिए शरीर बेचना ही आर्थिक संकट को दूर करने का उपाय बन जाता है। 'देवदास' की चंद्रमुखी अथवा 'अंधारे आलो' की बिजली बाई आर्थिक अभाव का ही शिकार है। प्रेमचंद की तरह ही शरतचन्द्र ने भी वेश्या चित्रण के लिए उदार मनोवृति को अपनाया है।

आत्मनिर्भर नारी– प्रेमचंद और शरतचंद्र का साहित्य स्वाधीनता के पहले और बाद के समय का उदाहरण है। उन्होंने नारी की आत्मनिर्भर प्रकृति पर भी प्रकाश डाला है। दोनों ने ग्रामीण परिवेश में आत्मनिर्भर नारी और शहरी परिवेश में आत्मनिर्भर नारी का चित्रण किया है। ग्रामीण परिवेश की आत्मनिर्भर नारियाँ कृषक, जमींदार, उद्योगपति के यहां मजदूरी करके जीवन व्यतीत करती हैं। खेती हर किसान निर्धन कृषक वर्ग की स्त्रियाँ भी आर्थिक अवस्था को सुधारने के लिए घर से बाहर निकली आई है। प्रेमचंद की 'गोदान' की धनिया, सीलिया, चुहिया, 'सुभागी' कहानी की सुभागी इत्यादि इस कोती में आती हैं। 'गोदान' की धनिया आत्मनिर्भरता से परिपूर्ण नारी है। आर्थिक व्यवस्था एवं चिंताओं से भी धनिया अपनी पति की सहायता के लिए उसके साथ खेतों में काम करती है। साथ में पति के साथ मजदूरी भी करती है। 'गोदान' के चुहिया भी एक आत्मनिर्भर नारी है। वह अपनी रोटी खुद कम आती और लकड़ी बेचकर अपना पेट पालती। 'गोदान' की सिलिया भी आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी है। मातादीन के साथ संपर्क स्थापित होने पर भी उसका काम

करके अपना जीवन निर्वाह करते हैं। 'रंगभूमि' उपन्यास की रानी जाह्नवी भी आत्मनिर्भर नारी है। वह अपनी संपत्ति पर पूर्ण अधिकार जताती है और रानी होने के कारण सहज ही राज्य से सुख भोग उसे उपलब्ध है।

शरतचंद्र ने भी आत्मनिर्भर नारी का चित्रण किया है। 'ग्रामीण समाज' की रामा एक बाल विधवा होने पर भी पैतृक संपत्ति से समाज में अपना अस्तित्व बनाए रखने में समर्थ होती हैं। उसी तरह 'बड़ी दीदी' उपन्यास की माधवी भी पैतृक संपत्ति एवं पति की संपत्ति पर आत्मनिर्भर बनती है। 'विप्रदास' की दयामायी 'श्रीकान्त' के अन्नदा दीदी भी एक आत्मनिर्भर नारी है जो शारीरिक श्रम से अपने तथा अपने पति की आवश्यकताओं को पूर्ण करती है।

शिक्षा नारी को आत्मनिर्भर बनाने का पहला सोपान है। प्रेमचंद और शरतचन्द्र की शिक्षा संबंधी धारणा इस बात को पुष्ट करती है। 'कर्मभूमि' उपन्यास की सुखदा, 'गोदान' की मालती इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। 'गोदान' की मालती इंग्लैंड से डॉक्टरी की शिक्षा लेकर लौटी है और उसे अपने पेशे के रूप में अपनाकर जीवन निर्वाह करती और अपने पिता का भी भरण पोषण करती है। 'कर्मभूमि' के सुखदा बच्चों को शिक्षा देकर अपना गुजारा निकालती हैं और अपने पति की मदद भी करती हैं।

शरतचन्द्र के बहुत से नारी पात्र शिक्षित है। 'कृष्णा' उपन्यास के कमल इसका अच्छा उदाहरण है। 'चरित्रहीन' की किरणमई भी बौद्धिक प्रतिभा का निदर्शन है। 'श्रीकांत' उपन्यास की अभया भी इस दृष्टि से एक महत्वपूर्ण चरित्र है।

निष्कर्ष– प्रेमचंद और शरदचंद्र के नारी पात्रों को आर्थिक और सामाजिक मान्यताओं का सामना करना पड़ा था।आर्थिक विषमताओं के कारण ही नारिया पत्नी और विधवाओं के संस्थापक दबाव के नीचे पीसकर निजी व्यक्ति तक खो चुकी थी। दहेज की कुप्रथा असहाय नारी को अधिक उम्र के वर के साथ अपनी कन्या देने को विवश करते थे। कन्या भी भाग्य की दुहाई देकर अपनी कल्पनाओं को विसर्जन कर ससुराल की और चल देती थी। विधवा होने पर पुनः उसे एक असहाय स्थिति से गुजरना पड़ता था। दोनों कथाकारों ने वेश्यावृत्ति का मूल कारण नारी की दयनीय आर्थिक दशा को माना। नारी प्रधानतः पुरुष पर अवलमवित रहती है। अनमेल विवाह की शिकार बाल विधवा अथवा युवती अपनी इच्छा कक्षाओं कामनाओं को पति के साथ ही वशीभूत कर एक स्वादहीन जीवन बिताने के लिए मजबूर हो जाती है और इस परिस्थिति से केवल आत्मनिर्भरता ही और आर्थिक स्वाधीनता ही उसे परित्रण दिला सकती है। इस बात को प्रेमचंद और शरतचन्द्र ने उसी समय समझा था और अपनी लेखनी के माध्यम से नारी को शिक्षित और आर्थिक रूप से स्वाधीन होने की प्रेरणा भी दिया था। भारतीय नारी की आज जो स्थिति है जिस सीमा तक आज वह स्वतंत्र है उसकी कल्पना उसी समय प्रेमचंद और शरतचंद्र ने की थी। नारी की आज जिस स्थिति में पहुंची है उसमें इन दो महान साहित्यकारों का कहीं ना कहीं योगदान अवश्य है। ■■

संदर्भ ग्रंथ –

1. प्रेमचंद; गोदान; संस्करण–1999, प्रकाशक– अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद

2. प्रेमचंद; सेवसादन; संस्करण–1997, प्रकाशक–राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

3. चट्टोपध्याय शरतचंद्र; शरत रचनावली; संस्करण–2002, प्रकाशक– जुथीका बूकस्टल, रतन राय, कोलकाता–700073

❑ सह अध्यापक, हिन्दी विभाग
प्रागज्योतिष महाविद्यालय, गुवाहाटी, असम

मैस जाणनेर भाय

कुमाऊँनी / कविता

नीलम पाण्डेय 'नील'

तुम ना सूर्ज छिया,
ना चंधर्मा,
ना तार छिया,
ना अगास।

तुम स्वैण छिया,
स्वैण,
जो बखत दगड़
बखत बण बेर बदेली गया।

तुम हाव छिया,
हाव,
कतकै गरम, कतकै ठंड
कतकै गुम,
कतकै सर्रर कबेर नैह गया।

तुम पाणी छिया,
पाणी,
कतकै गुलतुल, कतकै अरड़पट्ट
कतकै रूकणी, कतकै बगणी
कतकै भाप जस फूर्रर उड़ै गया।

तुम डाव बोट हया,
डाव बोट,
कतकै स्योव दी, कतकै हाव दी
कतकै फल–फूल दी,
कतकै घा पात
कतकै ठांगर जस चाईयै रै गया।

तुम मैस भया,
मैस,
कतकै पहाड़, कतकै उज्याड़
कतकै रूणम, कतैकै समावड़म
कतकै खर्चिल,
कतकै सगुर, कतकै बेसगुर,
कतकै स्वाहा, कतकै अहा
कतकै दयैब्त
कतकै मनखी लै नी भया।

मैस जाणनेर भाय कि
सैणी थाम रनि स्वैणा कैं
सैणी थाम रनि हाव कैं,
पाणी कैं, डाव बोट कैं,
संसार कैं, मैसुं कैं,
दुनी भरी रौयाट बौयाट कैं,
मनौ उड़भाड़, चलक लै
थाम लिनी,
धरती हयी सैणी
भीतेर बै ज्ये लै हौय,
भ्यार बै छाजनेरै भयी। ■■

❑ देहरादून, उत्तराखंड

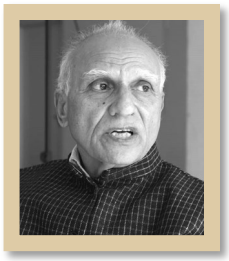

दून, दिल्ली और दक्षिण

हिंदी / यात्रा–साहित्य

डॉ. वेदप्रकाश पाण्डेय

28 मार्च को प्रातःकाल हरिद्वार से ट्रेन से चलकर हम दिल्ली आ गये। 'निजामुद्दीन' रेलवे स्टेशन से छोटे पुत्र विवेक अपनी गाड़ी से अपने 'वसंत कुंज' स्थित (किराए के) फ्लैट में ले आए। कई महीनों के बाद पौत्र (विशेष) को देखकर अच्छा लगा। 29 मार्च का दिन विश्राम में बीता। 30 मार्च को हवाई यात्रा करके तिरुपति पहुँचे। इस यात्रा में तनिक कठिनाई हुई। दिल्ली से तिरुपति की सीधी–उड़ान किसी कारण से निरस्त हो गयी। उसी उड़ान (स्पाइस जेट) से हमें चेन्नई जाना पड़ा। चेन्नई पहुँचे तो शाम हो गयी थी। रिजर्व टैक्सी से हम तिरुपति पहुँचे तो रात के 10 बज चुके थे। होटल पहले से तय था। अतः सीधे अपने–अपने कमरों में दाखिल हुए। चाय पी। फ्रेश हुए। भोजन किया। सो गये। थके होने के कारण नींद अच्छी आई।

31 मार्च की सुबह बड़े बेटे आलोक भी हैदराबाद से ट्रेन से चलकर सपरिवार तिरुपति आ गये। अब हम पूरे आठ हो गये। दो हम, दो बेटे, दो बहुएँ और दो बच्चे। एक पौत्री, एक पौत्र। नहा –धोकर हम दो गाड़ियों से 'तिरुपति देव स्थानम' के लिए चल पड़े। सुबह का समय, मौसम का मिजाज ठीक और साथ में पूरा कुनबा। सफर अच्छा लगा। रास्ते में एक जगह सख्त चेकिंग से गुजरना पड़ा। माल–असबाब सबकी जाँच हुई। हवाई अड्डों की तरह कड़ी जाँच। आतंकवादियों का भय जो न कराए। प्रकृति के दृश्यों का अवलोकन करते, पहाड़ी सर्पीले मार्ग की चढ़ाई का लुत्फ उठाते हुए हम शिखर पर स्थित देवस्थान पहुँच गये। मन्दिर–प्रशासन ने अब आने–जाने के मार्ग अलग कर दिए हैं। सड़कें अच्छी और प्रशस्त होने से यात्रा सुगम और आरामदेह हो गयी है। दुर्घटना की आशंका भी समाप्त प्राय–सी।

इस यात्रा का प्रथम प्रयोजन (विवेक के बेटे विशेष का मुण्डन–संस्कार) वी.आई.पी. तरीके से पूरा हुआ। लाभ में रही हंसा (आलोक की बेटी)। उसे खूब पैसे मिले। दीदी होने और पारम्परिक तौर पर खोंइछा (आँचल) में बाल रोपने के उपलक्ष्य में। मुण्डन के समय विशेष का ज्यादा चिल्ल–पों न करना विशेष रूप से अच्छा लगा। ऐसे अवसर पर बच्चे प्रायः बहुत परेशान करते हैं। मुण्डनोपरान्त औरतों ने बच्चे को नहलाकर नये वस्त्रों में सज्जित कर दिया। जमकर फोटोग्रैफी हुई–कई–कई रूपों में, कई–कई कोणों से 10 बजते–बजते हमें (हम दोनों को) देव–दर्शन हेतु वरिष्ठ नागरिकों की पंक्ति में स्थान ले लेने की नीयत से बच्चों ने एक गाड़ी से मुख्य प्रवेश–द्वार तक भेज दिया। हमारे लिए पहले से टिकेट की व्यवस्था नहीं हो पाई थी। बच्चों ने अपना इन्तजाम पहले से कर रखा था। हम लाइन में लग गये। चैत रामनवमी का प्रथम दिन होने के नाते भीड़ ज्यादा थी। पंक्ति में वरिष्ठ नागरिकों के साथ युवक–युवतियाँ और बच्चे भी बहुत थे। संभव है ये सहायक के रूप में प्रवेश पा जाते हों। दोनों ओर से तारों से घिरे सँकरे मार्ग की वह घुमावदार कठिन यात्रा मुझे रास नहीं आई। कुछ दूर जाकर मैं बाहर निकल आया। पत्नी को मजबूरन मेरे साथ निकलना पड़ा। वह बाला जी का दर्शन कष्ट उठाकर भी करना चाहती थीं। मेरी जिद ने उन्हें थोड़ा दुखी जरूर किया किन्तु देव–दर्शन की मेरी व्याख्या, वरिष्ठ नागरिकों के लिए की गयी मन्दिर–प्रशासन की कुव्यवस्था, एक ओर निःशुल्क दर्शन की सुविधा और दूसरी ओर लगभग चार घंटे तक उन्हें खड़ा रखना आदि देखकर उनके दु ख का दबाव कम हो गया। बाहर आकर हमने दक्षिण के व्यंजनों का आस्वाद लिया। इधर–उधर घूमकर कुछ देखा और तपते हुए पत्थरों पर छनछनाते पैरों से चलकर बाहर गाड़ियों के पास आ गये। बच्चों ने पूर्व व्यवस्थानुसार दर्शन किए। हालाँकि उन्हें भी दर्शक–दीर्घा में भूखे–प्यासे कई घंटों तक खड़ा रहना पड़ा। इस कार्य में विवेक की चप्पलें भी छूट गयीं। उनके पैरों को भी तपना पड़ा। खैर, अच्छा यह रहा कि हमें छोड़कर सभी ने देव–दर्शन का लाभ प्राप्त किया।

दर्शनोपरान्त सभी ने उस परिसर के एक प्रसिद्ध होटल में भोजन किया। भोजनोपरान्त आलोक अपने परिवार के साथ गाड़ी पकड़ने के लिए एक कार लेकर नीचे चले गये और हम लोग थोड़ी देर वहाँ ठहरकर दूसरी कार से होटल लौट आए।

सायंकाल आटो से नगर–स्थित 'पद्मावती' मन्दिर (जिसे बाला जी की पत्नी का मन्दिर कहा जाता है) गये। यहाँ भी टिकेट लेकर, वह भी कई श्रेणी का, दर्शन का विधान है। मन्दिर बड़ा व प्रसिद्ध है, अतः ताम–झाम भी बड़ा है। जाँच–व्यवस्था भी है। पैसे के अनुसार प्रसाद–व्यवस्था भी।

मनुष्य ने अपने स्वार्थ के लिए कैसे–कैसे प्रबन्ध कर रखे हैं, कितने और कैस नियम बना रखे हैं। मन्दिर के गर्भ–गृह में प्रतिष्ठित देव–प्रतिमा या देवी–प्रतिमा के दर्शन (वह भी क्षण भर) के लिए पैसे देकर, टिकेट खरीद कर जाना और पैसे या टिकेट के अनुसार प्रसाद पाना। यह सब अच्छा नहीं लगता मुझे। दर्शनार्थियों को दूर से ट्रेन, बस, कार से या पैदल चलकर अथवा हवाई यात्रा करके आना है। आने, रहने, खाने, पीने, पूजा, प्रसाद में खर्च करना ही है। दान–दक्षिणा उसकी

उसकी श्रद्धा पर छोड़ देना चाहिए। हाथ बाँधकर कर लेना ठीक नहीं लगता।

तिरुपति देव स्थानम की यह यात्रा भी मेरी दूसरी यात्रा थी। यहाँ तीन–चार वर्ष पूर्व मैं विवेक के साथ ही आया था। हम दोनों सपरिवार थे। वह यात्रा भी उनके सौजन्य से ही हुई थी। उस बार हम लोगों ने साथ–साथ मदुरै, रामेश्वरम्, कन्या कुमारी, तिरुअनन्तपुरम् आदि स्थलों को देखा था। कन्याकुमारी से हम लोग चेन्नई आये थे। चेन्नई से वे दिल्ली और हम हैदराबाद (आलोक के पास) चले गये थे। तिरुपति की मेरी दूसरी यात्रा भी विवेक के विशेष आग्रह पर हुई। उनके बेटे के मुण्डन का मंगल–अवसर था। उनका आग्रह टालना संभव नहीं था।

31 मार्च की रात हमने उसी होटल में गुजारी। 1 अप्रैल को प्रातः विवेक अपनी माँ के साथ समीप के 'गोविन्द राज' मन्दिर (जो बाला जी के भाई का बताया जाता है) में गये। मैं आराम करता रहा। मुझे मनुष्य के भाई–भतीजावाद का पता तो था किन्तु देवताओं के भाई–भतीजाबाद का ज्ञान वहीं हुआ। इस नये ज्ञान ने मुझे अन्यमनस्क कर दिया। इस अर्थ में मुझे उत्तर–भारत के मन्दिरों की व्यवस्था उचित प्रतीत होती है। एक ही मन्दिर में लक्ष्मी–नारायण स्थापित हैं। गरुड़ भी। शिव–मन्दिर है तो उनका पूरा परिवार विराजमान है। साथ में नन्दी भी है। राम मन्दिर है तो राम के साथ सीता जी भी हैं। पार्श्व में हनुमान जी भी। पुरी के विश्व प्रसिद्ध मन्दिर में कृष्ण अपने अग्रज बलराम और बहन सुभद्रा के साथ हैं। उत्तर के कृष्ण मन्दिरों में राधा रानी भी प्रतिष्ठित हैं। देव मण्डल के तमाम देवी–देवताओं को बाँटकर, उन्हें अलग–अलग मन्दिरों में पहरे में रखकर कमाने–खाने की यह बीमार मानसिकता मुझे व्यथित करती है।

कितने अच्छे हैं उत्तर के मन्दिर जहाँ देव–दर्शन निर्बाध सुलभ है। काशी के 'संकट– मोचन' मन्दिर में कम भीड़ नहीं होती। आप वहाँ खाली हाथ भी जा सकते हैं। अयोध्या की राम–जन्म–भूमि हो या हनुमान गढ़ी, लोगों का ताँता लगा रहता है। सुरक्षा –व्यवस्था की साधारण–सी दिक्कत को छोड़कर कहीं कोई कठिनाई या दबाव नहीं है। पहली अप्रैल को प्रातः तिरुपति से ट्रेन से चलकर दो अप्रैल की दोपहर में हम दिल्ली आ गये।

■■

❑ बालापार, गोरखपुर, उत्तर–प्रदेश

नाटक थम जाता है

हिंदी / कविता

डॉ. सुनील कुमार शर्मा

कामनाओं की घुड़दौड़
का खेल है ये सब,
खेल की भागदौड़ में
सब मगन है।
सबकी हथेलियों पर
रखी छोटी–बड़ी अगन है,
मगन हो पकड़ रहे
भ्रांतियों की,
आकांक्षाओं की छायाएँ,
संभव नहीं,
जो कभी पकड़ी जायेंगी।
पीछे जब जितना भागे
दूर उतनी चली जायेंगी।
हाँ घुड़दौड़ छोड़ना तो संभव है,
छोड़ पाए तो
भीतर छुपे केवली को
देखना भी ना असंभव है।
पर नहीं कोई भी
यहाँ सामान्य है
चल रहा है जो
असामन्य हो जाने का
नाटकीय सोपान है,
शक्ति और सौन्दर्य
दोनों ही यहाँ सूत्रधार हैं
शक्ति और सौन्दर्य का रचा
नाटक यहाँ खूब चल जाता है
दूर तलक
चलता ही चला जाता है
नाटक चलता है
भीतर में
रिश्तों में
परिवारों में
समाजों में।
नाटक की अपनी भाषा है
मानुष की अलग उसकी
परिभाषा है।
आदम इच्छाओं के
करीब से दौड़ते हुए
नाटक ढूँढता है
नई कहानी
'एक नए कल की'
और गढ़ लेता है नए किरदार।
फिर वासनाएं मांगती हैं
'नए कल' से अपनी तकदीर,
पर नहीं बदलती तस्वीर,
वृत्तान्त वहीं खड़ा रह जाता है
पर वो कल नहीं आता
मन 'ये सच' ही बस
नहीं मान पाता।
चेतना भी पदार्थों के
मायाजाल में फंस छटपटाती है।
उम्र हाथ से फिसलते फिसलते
फिसल ही जाती है
दौड़ते भागते जब
कभी किन्तु किसी क्षण
ज्ञान जग जाता है
जान ही जाता है
क्या है गति
कहाँ ले जा रही मति,
छूट जाता है तब परिग्रह,
और स्वयं ही स्वयं में
उतरता जाता है ।
दौड़ के बंधनों से मुक्त
भीतर में तब महावीर सा
एक सिद्ध
जनम जाता है।

■■

❑ मुख्य रोलिंग स्टॉक इंजी. (फ्रेट), दक्षिण पूर्व रेलवे
गार्डनरीच, कोलकाता–43.

संबंधों की बुनियाद : सतर्कतापूर्ण व्यवहार

हिंदी / लेख

डॉ. अजय शुक्ल

आधारभूत सम्बन्ध : जीवन में सम्बन्धों के महत्व को समझने के लिए सजगतापूर्ण नज़रिया अपनाते हुए कार्यप्रणाली विकसित करने का व्यापक आधार व्यक्ति के व्यवहार पर निर्भर करता है। सामान्य रूप से विचार करने पर यह ज्ञात हो जाता है कि व्यक्तिगत् जीवन की स्थिति स्वयं के सम्बन्ध में किस प्रकार से गतिशील है। व्यक्तिगत् एवं सामाजिक परिवेश के अन्तर्गत मानवीय सम्बन्धों की बात की जाती है तो आपसी संवाद का केन्द्र बिन्दु दूसरे व्यक्तियों को बनाने का प्रयास किया जाता है। व्यक्ति की निजी सोच यह स्वीकार करने के लिए कभी तत्पर नहीं हो पाती ह$^{\circ}$ कि आपसी सम्बन्धों की कड़वाहट के लिए वह स्वयं भी उत्तरदायी हो सकता है। जब व्यावहारिकता की कसौटी पर निकटता का आभास सम्बन्धों में होने लगता है तब यह भाव प्रकट किया जाता है कि इस प्रगाढ़ता की स्थिति हेतु वह व्यक्तिगत् रूप से जिम्मेदार है। आपसी सम्बन्धों के विभिन्न प्रयास करने से पूर्व स्वयं का स्वयं के साथ सम्बन्ध होना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अनिवार्य है। प्रायः व्यक्ति के द्वारा यह तय किया जाता है कि वह अपने बारे में क्या सोच रहा है? और यह मनन–चिन्तन की प्रक्रिया व्यावहारिक जगत् में प्रकट होने के लिए कहॉ तक तैयार है? यदि अन्तर्मन की स्वीकृति से जुड़ी स्थिति, भाव एवं विचार पक्ष के सम्बन्ध में स्पष्ट है तब उसके प्रभाव की स्थितियों पर गौर करते हुए परिणाम तक पहुॅचा जा सकता है। स्वयं की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति का प्रथम पायदान अर्न्तजगत् की भावनात्मक पृष्ठभूमि पर निर्भर रहता है क्योंकि यहीं से व्यक्त भाव का स्वरूप निर्धारित होता है। जीवन की विविधता में सम्बन्धों को लेकर अधिकतमम् वाद–विवाद की स्थिति निर्मित होती है और आरोप–प्रत्यारोप तक पहुॅचते–पहुॅचते सम्बन्ध विच्छेद हो जाते हें। सम्पूर्ण घटनाचक्र पर पश्चाताप होने के पश्चात् यह तय किया जाता है कि आखिर गलती कहॉ और किससे हो गयी, जिससे नौबत यहॉ तक आ गयी।

मानवीय सम्बन्धों की गतिशीलता का सिलसिला उस समय तक अच्छा चलता रहता है जब तक व्यक्ति के द्वारा सोचने एवं समझने की क्रिया को विधिवत् रूप से अपनाते हुए निर्णय लिए जाते हैं। व्यक्तिगत् सम्बन्धों को बनाते समय अथवा समाजिक रिश्तों को निभाते समय सबसे अहम् बात भावनाओं के साथ अपेक्षा एवं मानसिक स्तर का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक होता है। अधिकतर मामलों में यह पाया जाता है कि व्यक्तित के द्वारा पूर्ण सतर्कता से व्यवहार करने की कोशिश की गयी परन्तु दूसरे व्यक्तियों को किसी न किसी रूप में उत्पन्न स्थिति का आघात पहुॅच ही गया। आधारभूत सम्बन्धों की बुनियाद तभी स्थायी तौर पर टिकी रह सकती है जबकि भावना और व्यवहार के मध्य मानवीय पक्ष को स्वीकार कर लिया जाए।

भावनात्मक निष्ठा : व्यावहारिक जगत् में सम्बन्धों के संदर्भ की बात उठने पर संवेदना से जुड़ी भानात्मक पक्ष की पैरवी किया जाना आवश्यक हो जाता है। मानवता की रक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति का परम् कर्त्तव्य होता है इसलिए सर्वप्रथम मानवीय भावनाओं को सम्मान प्रदान करने के साथ उसके संरक्षण के प्रयास किये जाते हैं। सामान्य तौर पर व्यक्तिगत् एवं सामूहिक व्यवहार के समय इस मन्तव्य को अन्तर्मन से समझने की चेष्ठा की जाती है जिसमें किसी भी प्रकार से किसी व्यक्ति की भावना को ठेस नहीं पहुॅचाने की स्थिति बनी रहे। कई बार यह देखने में आता है कि किसी व्यक्ति के प्रति आन्तरिक श्रद्धा का निर्माण तभी हो पाता है जब दोनों पक्षों द्वारा एक दूसरे की भावनाओं का सम्मान किया जाए। इस प्रकार की स्थिति विश्वसनीयता के मामले में भी निर्मित होती है जिसके अन्तर्गत् आपसी सम्बन्धों की बुनियाद पूर्णतः विश्वास पर निर्भर होती है और इसका प्रादुर्भाव भावना से होकर गुजरता है। भावनात्मक स्वरूप की विवेचना का सबल एवं दुर्बल पक्ष उस समय प्रकट हो जाता है जब किसी व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार को लेकर अपनी अभिव्यक्ति में विविध प्रकार की भावनाओं को सम्मिलित करते हुए विचार किया जाता है, जिसके कारण सकारात्मक एवं नकारात्मक भावनाओं का निर्माण व्यक्तिगत् एवं सामूहिक तौर पर उत्पन्न होना स्वाभाविक हो जाता है। मानवीय संदर्भ को रे खॉकित करते समय भावनात्मक निष्ठा को बनाये रखना वर्तमान परिवेश में एक चुनौतीपूर्ण कार्य बन गया है जिसकी पुष्टि जीवन के असंतोष को देखकर की जा सकती है। भावनाओं की प्रति संवेदनशील हो जाना व्यक्तिगत् स्वभाव का हिस्सा हो सकता है, परन्तु जीवन में स्वाभिमान और अहम् को अपनी हैसियत के अनुसार उपयोग करते हुए समयानुसार प्रकट करने की लालसा सहज भावों को विरोधाभासी बनाने से नहीं चूकती है।

आपसी सम्बन्धों को मजबूती प्रदान करने में भावनात्मक निष्ठा का बड़ा योगदान रहता है वहीं दूसरी ओर इन भावनाओं का सुनिश्चित ध्यान नहीं रखने पर गहरे आघात की स्थिति निर्मित होते देर नहीं लगती है। व्यक्तिवादी दृष्टिकोंण को अपना लेने के कारण केवल मैं और मेरा के अतिरिक्त व्यक्ति को कुछ

भी दिखायी नहीं देता है जिसके कारण सामान्य व्यवहार में दूसरे व्यक्तियों की भावनाओं का सम्मान नहीं कर पाने की घटना सर्वविदित हो जाती है। भावनात्मक निष्ठा की उपयोगिता को सजगता से अनुभव करने पर यह ज्ञात हो जाता है कि व्यक्ति की भावनाओं का सहज सम्मान या विरोध करने की नियमित गतिविधि के अतिरिक्त दोनों पक्षों के भाव की टकराहट से निकल समाधान की दिशा में अग्रसर होने का प्रयास करना चाहिए। सामाजिक सम्बन्धों के अन्तर्गत भावनात्मक स्वरूप की निष्ठा को अक्षुण्य बनाये रखने हेतु विश्वास के धरातल पर खरा उतरने के मानदण्ड निर्धारित करने के साथ-साथ उसके दुरूपयोग न होने की संभावना पर पूर्ण विचार कर लेना चाहिए। व्यक्तिगत् जीवन से लेकर सामूहिक व्यवहार की सहज स्वीकारो. क्ति, भावनात्मक निष्ठा की गहरायी में निहित होती है जिसका प्रकटीकरण अति लघु व्यवहार की सम्मानजनक स्थिति से लगाया जा सकता है।

अपेक्षित संतुष्टि : सम्बन्धों की बुनियादी अवधारणा छोटी-छोटी अपेक्षाओं से जुड़ी होती हैं जिनकी पूर्णता अथवा अपूर्णता का स्वरूप निर्धारित करना कठिन होता है। कई बार यह देखने में आता है कि प्रत्यक्ष रूप से कोई व्यक्तिगत् सम्बन्ध नहीं होने के बावजूद भी मानवता को ध्यान में रखकर की जाने वाली मदद् अन्तर्मन को संतुष्टि प्रदान कर देती है। जब व्यक्ति किसी असहाय स्थिति में होता है तो उस समय सहायता के लिए निक. ली पुकार जब संवेदना के चरम् तक पहॅच जाती है तब ऐसे में किसी अनजान से मिलने वाला सहयोग एक अविस्मरणीय दृष्टांत बन जाता है। आपसी सम्बन्धों के अस्तित्व को उस स्थिति में आघात पहुॅचता है जबकि अपेक्षा के अनुकूल मदद् नहीं मिल पाती है। सामान्य तौर पर यह कहा जाता है कि जिसे अपना मानते हुए स्वीकार कर लिया था वो लोग आवश्यकता के समय पीछे हट गये और जिन्हें हम जानते भी नहीं थे उन्होंने आकर हमारी सहायता कर दी। मानवीय प्रवृत्ति का व्यावहारिक सामन्जस्य स्वयं के सानिध्य की अनुभूति करते हुए सुखद एवं दुःखद परिदृश्यों से सम्बद्ध रहता है जिसमें किसी बाहरी हस्तक्षेप की गुंजाईश लगभग न्यूनतम् ही संभव हो पाती है। प्रायः व्यक्ति के द्वारा अपने अनुभवों को अन्ततः असहनीय पीड़ा की मनःस्थिति से जोड़कर तथा आनंद के क्षणों में सहभागी बने लोगों के सहारे अपेक्षित संतुष्टि को ढूॅढ़ने का प्रयास किया जाता है।

व्यक्तिगत एवं सामाजिक सम्बन्धों की पुष्टि जब इस तथ्य के सहारे अभिव्यक्त होती है जिसमें व्यक्ति द्वारा सर्व को संतुष्ट नहीं कर पाने की स्थिति का उल्लेख किया जाता है तब उस स्थिति में असमर्थता का बोध कराने की कोशिश सम्पन्न की जाती है। किसी व्यक्ति के बारे में यह पूर्वानुमान लगा लेना कि उसके द्वारा मेरे साथ कम से कम इस प्रकार का व्यवहार तो किया जाएगा जिससे मुझे अथवा मुझसे जुड़े व्यक्तियों को किसी भी प्रकार की पेरशानी नहीं होगी, ऐसी मानसिकता प्रायः एकांगी स्थिति के बोध का परिचायक होती है। आपसी सम्बन्धों के संदर्भों का उल्लेख इसलिए किया जाता है जिससे विश्वास की नींव का आस्था के सिलसिले में उपयोग किया जा सके और किसी भी स्थिति में न्यूनतम् मदद् की स्थिति यथावत् बनी रहे। व्यावहारिक सम्बन्धों की कसौटी पर अधिकतम् अपेक्षा के कारण विरोधाभास की स्थिति निर्मित हो जाती है और व्यक्तिगत् व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन किया जाने लगता है जिसके अन्तर्गत् यह कहा जाता है कि मैंने तो इनके साथ ऐसा किया था और इन्हें भी इस प्रकार से अथवा इतना तो किसी भी रूप में ध्यान रखते हुए सहयोग करना ही था। स्वयं की विचारगत् एवं भावना प्रधान सोच किसी भी स्थिति में यह स्वीकार नहीं कर पाती है कि यहॉ मेरे साथ निश्चित तौर पर जो कुछ व्यवहार संपादित किया जा रहा है अथवा सामने वाले व्यक्ति द्वारा उसकी क्षमता और सामर्थ्य के अनुसार सहयोग किया जा रहा है वह किसी प्रतिरोध का परिणाम नहीं है बल्कि सामान्य जीवन की गतिविधि है। जीवन में संतुष्टि का सिद्धांत इस बात की स्वीकृति नहीं देता है जिसके अन्तर्गत् सम्पूर्ण व्यावहारिक पक्षों के ऑकलन को महत्व प्रदान करते हुए न्यूनतम् और अधिकतम् की स्थिति को मुद्दा बनाकर गतिशीलता का प्रयास किया जाए। सकारात्मक दृष्टिकोंण को विकसित करने का सर्वाधिक लाभ यह कि संतुष्टि की स्थिति को स्वीकारने की बात अपेक्षा से रहित होकर की जाती है।

मर्यादित स्तर : व्यक्तिगत् एवं सामाजिक जीवन के परिप्रेक्ष्य में व्यवहार करते समय मानसिक स्तर का ध्यान अवश्य रखना चाहिए जिससे आपसी सम्बन्धों की मधुरता कायम रह सके। सामान्यतः व्यक्ति के द्वारा अपनी आदतों तथा अभिरूचियों के अनुसार व्यावहारिक सम्बन्ध बनाने की प्रवृत्ति पायी जाती है। स्वयं से मिलती -जुलती सामाजिक और शैक्षणिक गतिविधियों के आधार पर सम्बन्धों की प्रगाढ़ता के प्रयास व्यक्तिगत् स्तर पर पूर्ण करने की कोशिशें आज भी समाज में निरन्तर जारी हैं। जब कभी सम्बधों की निर्बाध गतिशीलता हेतु विभिन्न मर्यादित सीमाओं का निर्धारण किया जाता है तो उस समय एक दूसरे के मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर व्यवहार करने की सलाह दी जाती है।

आपस में व्यवहार करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक होता है जिसके अन्तर्गत् एक व्यक्ति द्वारा अभिव्यक्त किये जाने वाले विचार एवं भावनाओं का स्तर क्या होना चाहिए जिससे दूसरे पक्ष को वह बात अथवा मन्तव्य का स्पष्ट आभास समझ के स्तर पर सहजता से अनुभव में आ सके। अधिकतर सामाजिक सम्बन्धों की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन यह बताता है कि व्यक्तिगत् व्यवहार से लेकर सामाजिक संरचानाओं से सम्बद्ध अलग-अलग स्थितियों के सम्बन्धों में मानसिक स्तर के प्रति पर्याप्त रूप से ध्यान नहीं दिया जाता है। सामाजिक सम्बन्धों के अन्तर्गत् जब अपने साथ दूसरे व्यक्तियों के मानसिक स्तर का ज्ञान कर लिया जाता है तब वहॉ सम्बन्धों की वास्तविक बुनियाद रखी जा सकती है। सम्बन्ध बनाने की स्थितियों के लिए यह तर्क

दिया जाता है कि यह आसान कार्य है जबकि निभाने की प्रक्रिया अत्यन्त कठिन है क्योंकि इसमें त्याग की आवश्यकता पड़ती है। व्यावहारिकता की पृष्ठभूमि में एक बात यह भी कही जाती है कि किसी बात को कहने से पहले कई बार सोचो क्योंकि एक बार तीर कमान से निकल गया तो वह फिर वापस लौटकर नहीं आता है। यहाँ एक बात और समझने की है जिसमें केवल विचार और भावनाओं का मुद्दा नहीं है बल्कि व्यक्ति से जुड़े सभी पहलुओं पर गौर करते हुए व्यवहार का निर्धारण करने की स्थिति से है जो आपसी सम्बन्धों की गहरायी को और भी मजबूती प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो सकेंगे। एक दूसरे की भावनाओं का ध्यान रखते हुए जब आपस में व्यवहार करने का प्रयास किया जाता है तब दो व्यक्तियों के सम्बन्धों में किसी प्रकार की गलतफहमी उत्पन्न नहीं होती है। स्वयं के व्यवहार का निर्धारण नहीं कर सकने की स्थिति में अन्य व्यक्तियों के साथ किसी व्यक्तिगत् एवं सामाजिक सम्बन्धों की स्वस्थ परम्परा का पालन करना असंभव हो जाता है। निजी व्यवहार जब पारिवारिक एवं सामाजिक परिवेश में परिवर्तित होता है तब सम्बन्धों की बुनियाद का निर्माण संभव हो जाता है और सजगता के साथ व्यवहार करने की प्रेरणा प्राप्त होने लगती है।

सजगतापूर्ण व्यवहार : मानवीय पक्षधरता को जब रेखाँकित करने की बात होती है तब सम्बन्धों को बनाने के लिए सकारात्मक व्यवहार को महत्व प्रदान किया जाता है। जीवन में विभिन्न स्थितियों के मध्य स्वयं के सम्बन्धों की बुनियादी अवधारणा वर्तमान परिदृश्य में सजगतापूर्ण व्यवहार पर निर्भर करती है। व्यावहारिक जगत् की व्यवस्था का अध्ययन भावनात्मक निष्ठा को प्रतिपादित करने की चेष्ठा करता है लेकिन भावना के साथ विवेक सम्मत सम्बन्धों को ही सामाजिक स्वीकृति अन्ततः प्राप्त हो पाती है। आपसी सम्बन्धों के निर्धारण में किसी भी प्रकार से अपेक्षित संतुष्टि प्राप्त हो जाए यह संभव नहीं हो पाता है। क्योंकि व्यवहार के प्रति न्यूनतम् या अधिकतम् की स्थिति सहज सम्बन्धों की गतिशीलता में प्रायः बाधा बन जाया करती है। व्यक्तिगत् एवं सामाजिक सम्बन्धों के निर्वहन को किस प्रकार से निर्देशित किया जाए जिससे एक दूसरे व्यक्ति के मानसिक स्तर का स्पष्ट रूप से पता चल जाए और जो अन्ततः सजगतापूर्ण व्यवहार को अपनाने का ठोस कारण भी बन सके। एक व्यक्ति सकारात्मक व्यवहार से यह दावा कर सकता है कि उसके जीवन में आधारभूत सम्बन्धों का निर्धारण इसलिए संभव हो सका क्योंकि उसके द्वारा मनन-चिन्तन की प्रक्रिया के साथ आपसी समझ को हमेशा महत्व प्रदान किया गया है। संवेदनाओं के स्तर पर कार्य करते समय आपसी विश्वास को बनाये रखते हुए आत्मसम्मान के प्रति सजग दृष्टि और दूसरे की भावनाओं को किसी भी परिस्थिति में आघात नहीं पहुँचाने की मनःस्थिति भाव-जगत् की निष्ठा का प्रमाण होती है। स्वयं को संतुष्ट करने और अन्य लोगों को भी संतुष्टि प्रदान करने की पद्धति सबसे पहले भेद दृष्टि को कम करने में मददगार साबित होती है जिसके परिणाम स्वरूप सहज व्यवहार से जुड़ी अपेक्षाओं की पूर्ति की जा सकती है। यदि विधिवत तरीके से प्रयास किया जाए तो निश्चित ही आपसी व्यवहार के मध्य मानसिक स्तर का ऑकलन संभव हो सकता है जो अन्ततः मिथ्या धारणाओं को दूर करते हुए सम्बन्ध निभाने में सहयोगी बन सकता है। व्यक्तिगत् अथवा सामाजिक सम्बन्धों की गुणवत्ता को बनाये रखने में सकारात्मक व्यवहार के निरन्तर योगदान को किसी भी स्थिति में भुलाया नहीं जा सकता है। अतः आपसी सम्बन्धों में भावनात्मक निष्ठा के साथ अपेक्षित संतुष्टि की स्थिति को तभी कायम रखा जा सकता है जबकि जीवन में मानसिक स्तर के प्रति सतर्कतापूर्ण व्यवहार को मानवीय सम्बन्धों की बुनियाद के तौर पर स्वीकार कर लिया जाए। ■■

❑ देवास, मध्य-प्रदेश

गज़ल

गिधौरिया / ग़ज़ल

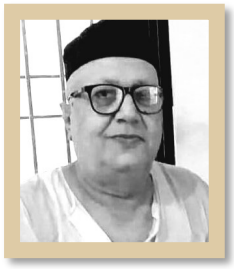

ज्योतेन्द्र मिश्र

जिला जमुईया के, फुटलय ढोल
हरिबोल, हरि बोल हरि हरि बोल

डक्टरबा सभ भेलय बैमान
कोरोनमा के खुलि गेलय पोल

कहाँ गेलौ? जन जन के नायक
भागलौ की ? सभ कौआ कोल

अपने जिलबा सब जलिबजबा
जुटलौ सभे, करलकौ झोल

कइसें हत्यारा सब मिलि के
रपट भेजइलको गोलम गोल!

लाबय हौ अफसर चुनि चुनि के
जाति, विरादर और भुसकोल

होबय बेमारी या महामारी
खुनमा खींचय, भरि भरि डोल

जिलबा के कैलको बदनाम
की रहलौ जन्नत के मोल
■■

❑ सी-18, वित्त कॉलोनी, खाजपुरा, पटना, बिहार

होना जे.आर.एफ. का

हिंदी/संस्मरण

डॉ. मुन्ना कुमार पाण्डेय

ना! ना! ऐसा बिल्कुल नहीं था कि भैयाजी चिरकुट थे। अलबत्ता वे तो इतने तेजस्वी थे कि जहाँ लोग एम. ए. हिंदी में 55 प्रतिशत के लिए झँखते थे, वहाँ उन्होंने 60 प्रतिशत उठाया था। यकीन मानिए तब यह 60 प्रतिशत 80 से कम न होता था क्योंकि उनके समय एक प्रोफेसर अपने अधिकतम 50 अंकों में से 18–20 से ऊपर किसी को नहीं देते थे। इसकी वजह थी कि उनके किसी झक्की गुरु ने उस पेपर में उनको इसी के आसपास नम्बर दिया था। सो, भैयाजी विभाग में साठ फीसदी वाले तेजस्वी थे। सोशल कितने थे यह मालूम नहीं पर हॉस्टल में रहने की वजह से जबरिया सोशल होना पड़ता था। इसी बीच रेडियो–बाजे जैसे किसी विषय पर शोध वाला काम कर बैठे सो एक बड़े नामचीन आलोचक का नाम अपनी तरफ से जोड़कर हिंदी समाज को बताने लगे कि ''अमुक ने मेरा नाम लेकर ऐसा कहा कि उस यूनिवर्सिटी में ऐसे ही विषयों पर काम होगा अब।''– भैयाजी के ही किसी नजदीकी मित्र ने उस नामचीन से एक रोज पूछ डाला कि अमुक का स्टूडेंट अमुक विषय पर, आपने कुछ कहा क्या?– नामचीन बबवा चिलम खींचकर बनारसी वाला देते हुए बोला– ''अब कुकुरो–बिलार पर हम बोलत रहब का? हद बा।''

तो खैर किस्सा भैयाजी का। भैया जी तेजस्वी थे, ओजस्वी वक्ता, लेखन ऐसा कि जी चाहता हाथ चूम लें। वाकई, और अगर इस बात में तनिक भी खोट निकले तो गंगा माई की सौगंध जो कहो सो हार जाएँ।

भैयाजी पढ़ने, बोलने, तर्क में किसी का भी कान काट लें। पर हॉस्टल के सुरक्षित कमरे में बैठकर हिंदी को, हिंदी वालों को, कूबत भर गरियाने वाले भैयाजी अपने हिंदी में उत्तरआधुनिक गुरु की नज़रों में समा जाने के लिए वह सब करते, जो एक पारंपरिक शिष्य निष्ठापूर्वक करता होगा। लेकिन वे थोड़ा अलग थे। वे 'खास' थे। वे विभागीय व्याख्यानों की कैसेट्स रिकॉर्ड करके उसको अपने खर्चे से खरीदे गए कागज पर, पार्कर वाली स्याही से बढ़िया किस्म की ब्लैक कॉफी के दर्जन भर मग पियायी और आँखें फोड़ने के बाद हॉस्टल से निकल कर गुरु को यह तीनेक दिन–रात का अद्भुत हासिल छुपाए हुए दिखाने यूँ जाते जैसे कभी वह वैज्ञानिक भागा होगा ''यूरेका, यूरेका'' करता हुआ।

गुरु जी भी चंट थे। भैयाजी से सभी कागज और कैसेट्स लेकर मीठी बात कर, स्वास्थ्य आदि पूछकर भेज देते। भैया खुश हो जाते, एकदम गच्च। इतने गच्च कि आप कहें ''हडसन लेन चलें सर?'' वे खुशी–खुशी जाते और जो चाहे खिलाते।

वह कहते हैं न जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर को खुदा ने हजार नेमतें अता की थीं पर वह साहिबे औलाद न हुआ। इसके लिए उसने देवी–देवताओं, पीर–फकीर, मौलवियों के दरवाजे पर सर पटका तब कहीं जाकर जनाब सलीम चिश्ती के करम से सलीम मिला। ठीक वैसे ही भैयाजी का सब ठीक था पर 'नॉन नेट फेलोशिप' से गुजरती जिंदगी एक दिन पाँच सर्दियाँ और चार गर्मियों में घसीटने के बाद जे.आर.एफ. हो गई। भैया जी जे. आर.एफ. जिंदगी हुए।

उस सदी में और लोग भी थे पर भैयाजी ने सबको बिना नागा हर मुद्दे के बीच ऐसा रोजनामचा दर्ज किया कि विभाग के कमजोर दिल वाले उनको देख आजू–बाजू सरक लेते थे। उनसे घबराकर नहीं बल्कि उनके जे.आर.एफ. महिमा पुरान को सुनकर वे अपने कानों में मवाद भरना नहीं चाहते थे। हॉस्टल में भैया नए टॉवल में दिखते, कोई पूछ देता– ''अरे भैयाजी, नया तौलिया?''

भैया रुककर मुस्कुराते और फिर पूछने वाले की शामत– ''जेआरएफ है गुरु, तुम भी निकालो और चांदी काटो। ऐसे थोड़े है, घिसे हैं।''– पूछने वाला भी सोचता नाहक ही पूछ बैठा। भैयाजी अपने हॉस्टल जूनियरों को किसी रेस्तरां में ले जाते, मतलब रेस्तरां भैयाजी जैसा ही होता, वहाँ कोई शुक्रिया कह देता तो भैया जी कहते ''जेआरएफ हैं दोस्त, इसलिए तो इतना कर देता हूँ। जानते हो घिसा है इसके लिए।''

शुक्रिया कहने वाला अपच, सरदर्द, बवासीर जैसे कचहरिया बीमारियों की जद में आ जाता। अब सब भैयाजी को उनके हालातों में स्वीकार चुके थे। और उनका 'घिसा है' शब्द भी उनके मुख से निकल–निकल कर घिस चुका था। इसी बीच नई खेप में कुछ अलग किस्म के छात्रों का दल आया था। उनमें एक थे रुप्पन बाबू। दिन भर कॉमन रूम में फिल्म देखना, इश्क लड़ाना, शाम को क्रिकेट खेलना, डिनर के बाद टीटी खेलना और गाहे–बगाहे 'वृद्ध भिक्षु' के कुछ प्याले गटककर सो जाना ही उनकी दिनचर्या में थी। रुप्पन, भैयाजी के विभागीय ही नहीं उनके ही हॉस्टल के थे। तो जो चीज भैयाजी 'घिसट –घिसट' के पाए थे, वह रुप्पनवा ऐसे ही ले बैठा। और यह खबर देने वह दौड़कर भैया जी के पास पहुँचा। भैया जी हमेशा की तरह सिनिसियर तरीके से कमरे में अंधेरा कर लैंप जलाकर पढ़ या शायद कैसेट ट्रांसक्राइब कर रहे थे। वह क्रिकेट खेल

कर सीधे रिजल्ट बताने भैया जी के पास पहुँचा था– ''भैया जी, जे.आर.एफ. हो गया।''

कसम से, भैयाजी का मुखमंडल खुशी से दैदीप्य हो उठा और तुरंत म्युनिस्पैलिटी के खंभे पर टंगे बल्ब की तरह भूक–भुकाकर बंद हो गया। भैया जी देवदास के दिलीप कुमार हो गए और रुप्पन खुद को चंद्रमुखी समझने लगा, हॉस्टल का वह कमरा ठीक इसी समय चंद्रमुखी का कोठा हो गया। रुप्पन समझ न पाए कि हुआ क्या? तभी भैया जी कि आवाज किसी पाइप के दूसरे सिरे से आती सुनाई दी– ''बधाई हो मित्र, बधाई हो। अब सबका हो जाता है, हमारे समय यह बेहद टफ होता था। अब तो इसका सिलेबस काफी हल्का आ गया है...।''

रुप्पन गेट पर खड़े सुनता रहा और भैया बोलते रहे। रुप्पन इस डाटा पर आश्चर्य में था क्योंकि यूजीसी ने बीते कई सालों से उस सिलेबस का 'क' भी न बदला था। लेकिन यह भी उतना ही सच था कि भैयाजी ने खुद से कॉफी बनाई, जी वही ब्लैक कॉफी और रुप्पन को पिलाई। उनकी कॉफी बनाने और पिलाने के बीच की कक्षा के बीच भैयाजी ने रुप्पन को यह बता दिया था कि चूँकि वह अब जे.आर.एफ. है, अतः खास है। वह अब सामान्य हिंदी वाला नहीं। रुप्पन को भी लग रहा था कि वह अब हजार की भीड़ में से अकेला मुरब्बा हुआ है, बाकी सब अभी आँवला ही रह गए हैं। उधर भैयाजी दीक्षित कर रहे थे– ''तो तुमको चाहिए कि अब अपनी क्लास को समझो। भैयाजी जैसे सीनियरयों के साथ ही बतियाओ, उन्हीं के संग उठो, बैठो।''

इस पूरी बातचीत में भैया जी ने यह बताना बिल्कुल नहीं छोड़ा कि यू.जी.सी. का सिलेबस हल्का हो गया है। पहले जे.आर.एफ. पाँच से छः दर्जन होते थे, अब साढे चार सौ जे.आर.एफ. होने लगे हैं। शिक्षा का स्तर गिरने लगा है। कॉपियाँ ठीक से नहीं जाँची जा रही। रुप्पन ने कॉफी गटका और बाहर भाग चला। उसका मन यूजीसी को गरियाने या कॉपी ठीक से नहीं जाँचने से परे था।

रात को रुप्पन ने अपने खास सोलह–सत्रह दोस्तों के साथ भैयाजी को भी डिनर पर आमंत्रित किया। तय हुआ कि आंध्र भवन जाकर डिनर करेंगे। भैया जी भी खुशी–खुशी तैयार हो साथ हुए। सब जे.आर.एफ. की पार्टी में आंध्रा थाली खा रहे थे और उधर भैया जी इसी बीच आंध्रा भवन की टेबल पर सबके सामने यूजीसी की अकर्मण्यता, खराब सिलेबस, कॉपी जाँचने वाले शिक्षकों की कर्तव्यहीनता और उनकी कमबुद्धि के साथ ही अकादमिक जगत का अँधकार में डूबता भविष्य इन सब पर बड़ा प्रश्नवाचक चिह्न लगा चुके थे।

कहने का तात्पर्य यह कि भैयाजी ने पाँच मौसम सर्दी, चार मौसम गर्मी में 'घिसने' के बाद अपनी तमाम तेजस्विता, वाकपटुता, अध्ययनशीलता के साथ जिस जे.आर.एफ. को प्राप्त किया था। वह इतनी जल्दी, इतनी सहजता से रुप्पनवा को कैसे मिल गई। इसकी वजह उनके पुराने हॉस्टल वाले सीनियर ठाकुर साहेब ने बताई थी– ''रे छौड़ा, भैयाजिउवा का लोड न लेना, उसको बबासीर है। उसी का दर्द रह रहकर उपट जाता है।'' रुप्पन इसे गाँठ बाँध चुका था और दर्द उठने की गति से वह इस निष्कर्ष पर आ चुका था कि ठाकुरजी सही बोले थे। ले. किन यह भी ज्ञात सत्य है कि रुप्पन भैयाजी के मंत्र को गाँठ बाँध अपने को सुरेंद्र वर्मा का सिलबिल सरीखा सबको मंडी हाउस में चिल्ला–चिल्लाकर सबको बता देना चाहता था कि वह अब 'जे.आर.एफ.' है। वह जे.आर.एफ. धारी हो गया है। आखिर कुछ भी हो, भैयाजी ने ही यह मंत्र दिया था। अब भाड़ में जाए यूजीसी का खराब सिलेबस, अलाँ–फलाँ। पर इस घटना के बाद हॉस्टल वालों ने भैयाजी से फिर कभी 'जे.आर.एफ. चालीसा' न सुना। जो 'घिसकर' पाया था, वह सब घिसकर खत्म जो हो गया था। ■■

❑ सहायक प्रोफेसर, हिंदी–विभाग,सत्यवती कॉलेज
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

आस्था की डोर

हिंदी/कविता

डॉ. मनोज तिवारी

तुमसे मिलने के बाद
मेरा मन फिर से
आस्था की डोर पकड़ने लगा है
मेरे हृदय में एक गिरिजाघर है
जहाँ रोज
बिना बपतिस्मा किए प्रार्थना करता हूँ।
जमजम के पानी से आचमन कर
पूजा करता हूँ
मैं रोज गंगा जल से वुजू कर
मस्जिद में आयतें पढ़ता हूँ
मेरे मन में एक प्रश्न
बार–बार उठता है कि
क्या बगैर बपतिस्मा किए
ईशु मेरी प्रार्थना स्वीकार नहीं करेगा ?
या ईश्वर जमजम के पानी से आचमन
कर पूजा करने पर नाराज हो जाएगा ?
या फिर गंगा जल से वुजू करने पर
अल्लाह मेरी नमाज कबूल नहीं करेगा ?
यदि हाँ, उसे स्वीकार है
तो तुम, क्यों लहू–लुहान हथेलियों में
खंजर लिए खड़े हो
चौराहों पर ?
■■

❑ से–56, गुरुग्राम, हरियाणा

शारीरिकस्वास्थ्यसंरक्षणाय आयुर्विज्ञानम्

संस्कृत / आलेख

योगेन्द्र भारद्वाज

वर्तमानसन्दर्भे सामाजिकजनाः शारीरिकमानसिकस्वास्थ्यमवलम्ब्य अतिचिन्तायुताः प्रतीयन्ते। कोरोणासंक्रमणकाले बहवः जनाः मृताः, रुग्णाश्च। अतः प्रसङ्गेऽस्मिन् भारतीयचिकित्साप्रणाली आयुर्वेदस्य वा भूमिका अतीव महत्त्वपूर्णा। आयुर्वेदस्य काश्चन परिभाषाः सन्ति, यथा– "आयुषो वेदः आयुर्वेदः (The science of life is Ayurveda.) तथा "आयुरस्मिन् विद्यतेऽनेन वाऽऽयुर्विन्दतीत्यायुर्वेदः।" "आयुः शरीरेन्द्रियसत्वात्मसंयोगः तदस्मिन्नायुर्वेदे विद्यते अस्तीत्यायुर्वेदः।'' अथवा "कस्मादायुर्वेदः? तत्रायुर्वेदयतीत्यायुर्वेदः, कथमिति चेत्, उच्यते– स्वलक्षणतः सुखासुखतो हिताहिततः प्रमाणाप्रमाणतश्च वेदयत्यतोऽप्यायुर्वेदः। तत्रायुष्याण्यनायुष्याणि च द्रव्यगुणकर्माणि केवलेनोपदेक्ष्यन्ते तन्त्रेण॥" (चरक संहितायाम् 30.23) अर्थात् स्पष्टोऽयं यत् आयुर्वेदप्रयोगेणार्युवर्धनं भवति अथवा स्वास्थ्यलाभः भवतीति।

सम्प्रति विषमपरिस्थितेः निराकरणं प्राकृतिकचिकित्सामाधारी–कृत्य कर्तुं शक्यते। सामान्यदिनचर्यायां प्रातः सायङ्काले वा योगासन–प्राणायाम–ध्यान–व्यायामस्य च समावेशः करणीयः, यतोहि अद्यतनीयकाले कोरोनासंक्रमणावरोधे एतेरुपायाः समीचीनाः। अस्य इदमेवकारणमस्ति यत् कोरोनासंक्रमणस्य प्रसारः श्वास–प्रतिश्वासमाध्यमेन भवति। किन्तु सामान्यस्वास्थ्यलाभाय विटामिनप्रोटीनसंवर्धनाय च हरितशाकस्य प्रयोगः आहारे करणीयः। वस्तुतः सावधानीपूर्वकाहारग्रहणेन स्वास्थ्यसंरक्षणं भवति, ततोद्दिश्यैव आयुर्वेदिकग्रन्थानां आयुर्वेदाचार्यैः विशदरूपेण आहारचर्चा (नित्यं हिताहारविहारसेवी समीक्ष्यकारी व्यसनेष्वसक्तः... इत्यादयः) कृता।

भोजनमात्रास्वीकरणे चरकसंहितासूत्रेदं वर्णितमस्ति यत् "यावद्व्यस्याशनमशितमनुपहृत्य प्रकृतिं यथाकालं जरां गच्छति तावदस्य मात्राप्रमाणं वेदितव्यं भवति।" तत्रायुर्वेदे आहारसंगठनविषये निर्दिष्टं यत् "स्वास्थ्यमुभयथा परिपाल्यते– विशुद्धाहारचाराभ्यां सदा क्षीयमाणशरीरपोषणेन प्रत्यवायहेतुपरिहारेण च। यथा दीपपरिपालनं स्नेहवर्तिदानात् पोषणेन क्रियते, तथा शलभवातादिनिर्वापकहेतु–परिहारेण च।" (चरकसंहितायाम्)

अधुना 2020तमे वर्षे जनाः शारीरिकस्वास्थ्यचिन्तया सह मानसिकरूपेणापि रुग्णाः सन्ति। शोधैकानुसारेण समग्रजनसंख्यायाः 43 % जनाः मानसिकरूपेण रुग्णाः वर्तन्ते, अतएव अयं चिन्तायाः विषयः स्यात्। सन्दर्भेऽस्मिन् आयुर्वेदाचार्यैः निगदिताः यत् जनाः मानसिकरूपेण प्रसन्नाः भवेयुः, आयुर्वेदनिर्दिष्टपथ्यापथ्यविचारपूर्वकं दैनिकचर्यायारनुसरणं कुर्युः। मानसिकरुग्णस्य प्रायः कारणं गृहकलह–एकाकीजीवनयापनं–धनचिन्ता–आजीविकाचिन्ता–आवागमनावरोधे–त्यादयः दृश्यन्ते। चरकसंहितायामुल्लिखितं यत् "मतिर्वचः कर्मसुखानुबन्धं सत्त्वं विधेयं विशदा च बुद्धिः। ज्ञानं तपः तत्परता च योगे यस्यास्ति तं नानुपतन्ति रोगाः॥" अर्थात् जितेन्द्रियनिर्मलबुद्धिज्ञानयुततपस्याध्यानसंलग्नयोगीजनाः रोगमुक्ताः भवन्ति। आयुर्वेदज्ञैः हर्षशोकयोः कारणं मनः स्वीक्रियते। श्रीमद्भगवद्गीतायामप्युक्तं यत् "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।" अतएव स्पष्टमस्ति यत् जितेन्द्रियं जनं रोगाः नानुपतन्ति।

आयुर्वेदे पथ्यापथ्यविवेचने ऋतुचर्यायाः अपि वर्णनं स्यात् अर्थात् कस्यां ऋतौ कीदृशी दिनचर्या भवेदिति चिन्तनं तत्र कृतम्, यथा– "हैमन्तिकं दोषचयं वसन्ते प्रवाहयन् ग्रैष्मिकमभ्रकाले। घनात्यये वार्षिकमाशु सम्यक् प्राप्नोति रोगान् ऋतुजान्न जातु ॥" चरकसंहितायाः श्लोकोऽयं दोषसंशोधनविषये दिशां निर्दिशति। तत्रोच्यते यत् तुषारसमये (हेमन्तर्तौ–Pre Winter) स्निग्धाम्ललवणान् रसान्, गोरसानिक्षुविकृतीर्वसां तैलं नवौदनं स्वाहारे प्रयोक्तव्यम्। शिशिरर्तु हेमन्तसदृशः भवति। अस्यामर्तौ लघुशीतवातवर्धकपदार्थाः त्यजेदिति। वसन्तर्तौ (in Spring) गुर्वम्लस्निग्धमधुरान् पदार्थान् वर्जयेदिति। अस्यामर्तौ व्यायामोद्वर्तनसुखाम्बुशौचविधिम् अनुसर्तव्यम्। ग्रीष्मर्तौ (in Summer) मद्यमल्पं त्यजनं वा, लवणाम्लकटूष्णपदार्थान् त्यजेत्। दिवसे शीतगृहे निशि च चन्द्रांशुशीतले निद्रा विश्रामो वा कुर्यात्। वर्षर्तौ (in Rainy season) दिवाशयननदीजलसेवन–व्यायामातपंच त्यजेत्। सम्प्रति अम्ललवणरसप्रधानपदार्थाः खादितव्याः।

ततः शरदर्तौ (in Winter season) अन्नपाने मधुरलघु–शीतसतिक्तकान् रसान् अनिवार्यम्। शीतचन्द्रांशुयुक्तहंसोदके जले (पवित्रसरोवरजले) स्नानपानमस्यामर्तौ अमृततुल्यं वर्तते। अनेन प्रकारेण ऋतुसात्म्यसम्मितवचनं गृहीत्वा स्वास्थ्यलाभः भविष्यति नात्र संशयः। आयुर्वेदनिर्देशानुसारं जीवनचर्यायापनं चेत् जनेषु रुग्णतायाः समावेशः न भविष्यति, नापि चिकित्सकावश्यकता। अतएव मूलसारमस्ति यत्–आयुर्विज्ञानमनुसृत्य सर्वे निरामयाः सन्तु इति शुभम्। ■■

❑ शोध छात्र, संस्कृतप्राच्यविद्याध्ययन संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

विकास मिश्र

शब्द

हिंदी / आलेख

मेरे शब्द अब बेरंग से लगते है। तुम्हें ना लिखने के बहाने ढूँढते है। तुम्हारा नाम भी लिखूँ तो बिदक जाते है, मुँह फुलाते है। इधर–उधर भागते है। नज़्म का सलीका भूल कर कुछ बेतुकी–सी बातें करते है। कभी मैंने इन्हें पंखे से लटकते तो कभी ऊँचाई से नीचे पटकते देखा। गिरने दिया, मरने दिया, दिल में कहीं दफ़न किया या फिर अपने साथ–साथ दिन–रात इनको भी जलाया, लेकिन कागज पर नहीं उतरने दिया। वे रोये बहुत, छटपटाये बहुत। बिल्कुल वैसे, जैसे मेरा सीना छटपटाता है तुम्हें गले लगाने के लिए।

मेरे शब्द अनपढ़ थे, तुम्हारी आँखें उन्हें पढ़ तो पाती थीं लेकिन महसूस नहीं कर पाती थीं। मेरे शब्द दिशाहीन थे, दृष्टिहीन थे। तुम्हारी आँखों से होकर तुम्हारे दिल तक उतरने का रास्ता नहीं ढूँढ पाये। मेरे शब्द मौन थे, चाहे मेरे अंदर कितना भी शोर मचाये, मेरी सिसकियाँ तुम तक पहुँचाने में वे नाकाम हुए। मेरे शब्द, अपाहिज थे, मुझसे तुम तक का सफ़र नहीं तय कर पाये। मेरे शब्द मेरे घाव पर खूब थूकते रहे। मज़ाक उड़ाती रही तुम्हारी ख़ामोशी मेरे शब्दों का। एहसास दिलाती रही कि मेरे शब्द कितने कमजोर हैं, खोखले हैं, अर्थहीन हैं। मेरे हिस्से उसने उम्मीदें लिखी, सपने लिखे, ख़्वाहिशें लिखी, इंतजार लिखा। तुम्हारे हिस्से उसने चैन और सुकून लिखा। तुम्हारे हिस्से उसने खूबसूरती लिखी और मैं अपने बदसूरत शब्दों को तुम्हारी खूबसूरती से सँवारता रहा, तुम्हें लिखता रहा।

मैं जनता था कि जो तुम हो कभी शब्दों में बयाँ हो नहीं पाओगी। मेरे शब्द तुम्हारे व्यक्तित्व को न्याय नहीं दे पायेंगे, पर तुम्हें मुझसे जोड़े रखने का जरिया भी तो यही थे। इन शब्दों की खूबसूरती तुमसे है, मेरी कविताओं में साज तुम्हारा है।

हर गद्य–पद्य में अगर तुम नहीं, तो किस काम के ये शब्द? बहुत वक़्त के बाद कलम हाथ में है, और फिर वही शब्द– सारे स्वर व्यंजन जोड़ कर, एक ही तस्वीर बना रहे है। वह तस्वीर तुम्हारी है। प्रातः काल के पहले प्रहर से तुम, मेरी मेज के नाइट लैम्प से छनती रोशनी से धुँधले से नजर आ रही हो। काश ये शब्दों से में तुम्हें बाँध पता। खैर तुम अपना ख्याल रखना प्रिय। ■■

❑ पाण्डेय खरेया, सोनहुला, गोपालगंज (बिहार) 841503

ज़िंदगी

हिंदी / कविता

डॉ. आरती पाठक

ज़िंदगी आज तुमको फिर सुना
मन खुशी से झूम उठा
झलक गया दर्द भी साथ
तुम थी तो ज़िंदगी
अहा! ऐसी थी मानो
ढलते सूरज की कोमल छाँव–सी
वह अधखिली कली चम्पा की–सी
वह नर्म, मुलायम, रेशमी, चाँदनी–सी
इनको महसूस करना अभी–अभी
शुरू ही किया था ज़िंदगी
कहाँ चली गई तुम
फिर से मुझे उन्हीं झंझावतों
उलझनों में उलझा कर
जिंदगी तुमको गाना था अभी
गुनगुनाना भी तो था अभी
तुम्हारे कोमल नर्म स्पर्श का
आह ! स्पंदन महसूस करना भी था अभी
रह गया सब अधूरा, अधूरी–सी रह गई
खैर ! जितना सुना अब तक तुमको
मेरे चेहरे पर उसकी ही तो स्निग्धता है
मेरे अधरों पर उसकी ही तो मुस्कान है
ज़िंदगी आज तुमको फिर सुना
मन खुशी से झूम उठा।
अतीत फिर परचम लहरा गई
मानो जैसे आम की डाली में बौरा आ गई
छा गई सतरंगी छटा फ़िजाओं में
ज़िंदगी फिर तेरी बीन की धुन
मुझको फिर नचा गई

❑ सहायक प्राध्यापक, साहित्य एवं भाषा अध्ययनशाला, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर (छत्तीसगढ़)

आलोचना की कसौटी पर तड़पती कामायनी की करुण कथा

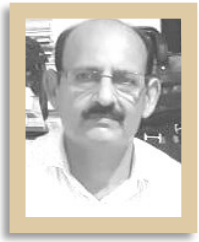

डॉ. हरेराम पाठक

हिंदी / आलेख

बीसवीं सदी के श्रेष्ठ महाकाव्यों में 'कामायनी' का सर्वोच्च स्थान है। हिंदी के शीर्षस्थ आलोचकों ने कामायनी पर अपने बहुमूल्य विचार प्रस्तुत किए हैं। ऐसे आलोचकों में आचार्य शुक्ल से लेकर नंद दुलारे वाजपेई, डॉ नगेन्द्र, मुक्तिबोध, विजय देव नारायण साही, राम स्वरूप चतुर्वेदी, प्रभाकर श्रोत्रिय, रमेश कुंतल मेघ, विजय बहादुर सिंह, सुधीश पचौरी, सुरेश गौतम और विनोद शाही काफी चर्चित रहे हैं।

इन आलोचकों ने अपने-अपने तरीके से कामायनी की आलोचना की है और उसकी गहराई में पहुँचने की पुरजोर कोशिश की है, किन्तु सभी आलोचकों के साथ परेशानी यह रही है कि कामायनी की सर्वांगीण आलोचना करने की जगह वे एक दूसरे की काट करने में अपनी अधिकांश बौद्धिक ऊर्जा ख़तम कर देते हैं। परिणाम यह होता है कि कामायनी की तथ्यतः समीक्षा नहीं हो पाती है। सभी आलोचक स्वनिर्मित बौद्धिक दायरे में सिमटते हुए अपने पूर्ववर्ती आलोचक की कमियों को गिनाते-गिनाते, साथ में अपनी दलील प्रस्तुत करते अपने मौलिक चिंतन की इति श्री कर लेते हैं।

मुक्तिबोध के पहले कामायनी की आलोचना मनस्तात्विक एवं रस निरूपण के आधार पर तो हुई है पर मुक्तिबोध के बाद की आलोचना, मुक्तिबोध को जवाब देने के लिए की जाती रही है। केंद्र में मुक्तिबोध रहे हैं जब कि केंद्र में कामायनी होनी चाहिए। यद्यपि हिंदी आलोचना अपने जन्म काल से ही भटकाव का शिकार रही है तथापि यह भटकाव आज इतना बढ़ गया है कि आलोचना अब आलोचना कम, प्रत्यालोचना ज्यादा लगने लगी है। प्रत्यालोचना से लाभ यह है कि सामान्य पाठक किसी पुस्तक पर अन्य आलोचकों द्वारा की गई टिप्पणियों से अवगत हो जाता है परन्तु इससे नुकसान यह होता है कि आलोचक चिंतन के उस तल तक नहीं पहुँच पाता है जहाँ पहुँचकर विचारों के अनमोल रतन पाए जाते हैं।

बहरहाल, मुक्तिबोध की कामायनी संबंधी आलोचना की पड़ताल न करते हुए मैं सीधे इस बात पर आना चाहता हूँ कि कामायनी की केंद्रीय वस्तु मानव-मन को विभिन्न स्तरों पर समझते हुए सभ्यता के विकास एवं विनाश में उसके निहितार्थ का विश्लेषण करना है। इस विश्लेषण के लिए आत्मज्ञान का होना आवश्यक है जो शैव दर्शन के 'प्रतिभिज्ञा चिंतन' का एक रूप है। प्रतिभिज्ञा दर्शन के अनुसार आनंद प्राप्ति की ओर मन को मोड़ना 'कर्तव्य-पथ से पलायन' नहीं है जैसा कि बहुत से आलोचकों ने प्रसाद पर यह आरोप लगाया है, आनंद 'चिंता' से प्रारंभ होकर विभिन्न मनोविकारों से गुजरते हुए आंनद तक पहुँचने की एक अंतरयात्रा है। मनु 'मन' के प्रतीक हैं। प्रलय के बाद उनकी जीवन यात्रा 'चिंता' से शुरू होती है। चिंता और आनंद के बीच संघर्ष का निर्बाध क्रम चलता है। आनंद की प्राप्ति के लिए संघर्ष आवश्यक है। इसी संघर्ष के लिए श्रद्धा अपने पुत्र मानव को ईडा के पास छोड़ जाती है। यह आश्चर्य लग सकता है कि जिस ईडा के संपर्क से मनु के प्रति प्रजा का विद्रोह होता है, मनु मूर्छित होते हैं, उसी ईडा को अपना पुत्र सौंपना (भावी पीढ़ी को सौंपना) कितना विश्वसनीय है? प्रश्न यहाँ विश्वसनीय/अविश्वसनीय होने का नहीं है, प्रश्न है संघर्ष का। बुद्धि (ईडा) के साथ रहकर संघर्ष। विपरीत परिस्थितियों के साथ संघर्ष का प्रशिक्षण। केवल हृदय (श्रद्धा) के बल पर हम सभ्यता का इतिहास नहीं रच सकते। बुद्धि और हृदय का संघर्षमय समन्वय के लिए भावी पीढ़ी को तैयार करना होगा, तभी हम सभ्यता का श्रेष्ठ तैयार कर सकेंगे। मनु (मन), ईडा (बुद्धि) के पास तब जाते हैं जब उनकी आधी उम्र बीत चुकी होती है, ऐसी अवस्था में मनु ईडा के साथ स्वयं को समायोजित नहीं कर पाते हैं। यही कारण है कि श्रद्धा बचपन से ही मानव को ईडा की देख भाल में सौंप देती है।

कामायनी का फलक बहुत विस्तृत है। इतिहास, दर्शन, मनोविश्लेषण, सभ्यता विकास आदि समग्र दृष्टिकोणों से कामायनी पर एक साथ चिंतन-विश्लेषण अब भी शेष है।

आलोचक विनोद शाही एक इतिहासबोध संपन्न हिंदी के दार्शनिक आलोचक हैं। उनकी पुस्तक 'जयशंकर प्रसाद : एक पुनर्मूल्यांकन' पुस्तक 2006 में आधार प्रकाशन से प्रकाशित होकर आई थी। इस पुस्तक में कामायनी के दार्शनिक पक्षों पर चर्चा न देखकर मुझे हैरानी हुई और मैंने आदरणीय शाही जी को फोन लगाया। यह शाही जी की सदाशयता है कि उन्होंने मुझे उत्साहित करते हुए मेरी बात का समर्थन किया और उन्होंने इस पक्ष पर पुनः चिंतन करने और उसपर पुस्तक लिखने बात कही।

फिलहाल, विनोद शाही की यह पुस्तक कामायनी में निहित सभ्यता विमर्श के विभिन्न आयामों को खोलती है। और एक नए नजरिए से कामायनी को देखने के लिए प्रेरित करती है। फिर भी कामायनी की सर्वांगीण आलोचना आज की महती आवश्यकता है। मैं स्वयं इस क्षेत्र में अपना कदम बढ़ा चुका हूँ, ज्ञान यज्ञ में एक छोटी-सी समिधा बनकर।

■■

❑ सरिता विहार, गोयला मोड़, नजफ़गढ़, नई दिल्ली

माडा रब्ब

पुंछी / कविता

रोमी शर्मा

ओ बाड़ीयां,
माड़े दादे ने टाके ते बन्ने
गल्लां
ओ खत्म ओई गइयां उन्ने कन्ने।
माँ माड़ी खब्बल खुरपै
पंड चुक्के सिरे'र काए नी
थापियां थप्पी पालै असें की
कन्ने दुद्ध बेची गाईं ना।
टैम सारेयां ना एक जेया नेई ओना
इस जिन्दगी च बंदा, हसना तै रोना
जेड़ा इन्सान टैम पिछला
अपना भुल्लीया
आखन बुजुरगें ना,
ओ लोटे चा डुल्लीया।
हर गल्ल असें की सोची समझी बानी चाहिनी
उच्चीयां लम्बीयां उडारीयां भरी वी
आखिर बस दो गज जमीन ऐह चाहिनी।
डरना चाहिना उस रब्बे कोला,
जबाब देना उसकी गच्छी
पाप दा दिल दुखाना कुसै ना वी
भला करा सारेयां ना
इस दुनिया'च अच्छी।
माड़ा रब्ब माड़े माँ प्यौ दे
अक्खी खोलनेया जेड़े देक्खे मैं
हर साह माड़ा जप्पै
नाह उन्ने नां,
स्वर्ग नरक, चरणे'च उन्ने ने
अस ऋण चुकाई नीं सकने कदे उन्नेना
जेहडे तकलीफां देक्खी आप्पै हजार
तत्ती हवा जेहडे बच्चेयां गी
लगने नी देने।
पैसे ते दुनियादारी च अन्ने ना होवा
टैम, प्यार, इज्जत देया माऊ प्यो की
दिल दुखा ना कदे उन्नेना
आशीर्वाद हमेशां इन्नहा उन्नेना। ■■

❑ 75, सलारिया ऑफिसर्स एन्क्लेव, से.–21
द्वारका, नई दिल्ली –75

उजली भोर

मुलतानी / लघुकथा

अंजू खरबंदा

"तवाकुं क्या सूझयी हे हीं ओम्र वेच्च स्कूटी सिखण दी !" शेखर ने श्रेया कुं स्कूटी सिखदे डेख आख्या।

"कोझ सिखण दी कुई ओम्र होंदी हे क्या ! तें वल्ल मेडी केड़ी ओम्र निकल गई हे!" श्रेया ने खिल्लदे वय आख्या।

"हेक वारी मेडे कोल्ल पूच्छया तें होंदा कि स्कूटी चलावणा सेख घिन्ना!" शेखर ने थोड़े तैश वेच्च आख्या।

"पूच्छ्ण नाल केड़ा तुस्सां हा कर डेंदे ! हा हेक गाल जस्सो जेड़े वेले तुस्सां कोझ करेन्दे वे तें क्या साकूँ औरतें कोल्ल पोच्छ कें करेन्दे वे!"–श्रेया ने वी तुनक कें जवाब डित्ता।

"तेडा कोझ वंजणा कयनी तें सामणे आले दा राहवणा कयनी! मार–मूर डेसें डू चार कूँ!" शेखर ने तंज कसदे वये आख्या।

"मेडा स्कूटी सिखणा इत्ती नागवार लगदा पये तें सिद्धा आख डेवो कि ना सेक्ख!" श्रेया थोड़ी झइं रुंआसी झीं थी अई।

"मेडे आखण नाल केड़ा तूं मन्न वेसें ! ठान गिद्दे सीखण दा तें सेक्ख कें ई राहसें!" शेखर ने श्रेया कुं घूरेन्दे वये आख्या।

"अरे वाह! तुस्सां तां खूब जाणदे वे मेडे बारे वेच्च!" श्रेया ने हत्थ नचेंदे वये तल्खी नाल जवाब डित्ता।

"कइं कुं मार अउसें तें भरणा तें मेकूँ ई पउसी ना !" शेखर ने ईवें आख्या मन्नों कुई कांड कर अई होवे श्रेया।

शेखर ने ईवें आख्या मन्नों कुई कांड कर अई होवे श्रेया।

"ए जेड़यां सारयां औरतां स्कूटी चलेंदयेन ओ क्या एक्सीडेंट करेन्दयां फिरदेंन!" होण श्रेया दा पारा वी हाई थीवण लग प्या।

"हा तुस्सां खोद ई डेख घिन्नो ! ज्यादातर एक्सीडेंट औरतां ई करेन्देंन । लेफ्ट राइट कोझ डेदयां कयनी! बस हर कम्म दी जल्दी होंदी हे हीन्एं कुं!" ईवें लगदे शेखर अज्ज सारी भड़ास कढ कें ई छूड़ेसी।

"एक्सीडेंट कुई दी लापरवाही नाल थीन्दे ना कि हींदे नाल कि गड्डी आदमी चलेंदा पये या औरत!" श्रेया ने खोदद कुं संयत करेन्दे वये शेखर कुं समझावण दी कोशेश कीती।

"त्वाडे नाल होण कौण उलझे सवेले–सवेले! वंज तें होण बी सेक्ख स्कूटी चलावण!" शेखर पता नी केड़ी लौ वेच्च बुलेंदे ई वेंदे हन्न।

मैं उट्ठी चली तां अई पर मन वेच्च बार बार कई विचार उमड़दे–घुमड़दे रये वल श्रेया ने नकारात्मक विचारां कुं तेजी नाल झटकया, स्कूटी चाती तें खुली हवा वेच्च निकल गई! ■■

❑ दिल्ली

जीवन संकट में

हिंदी/कविता

तरुणा पुंडीर 'तरुनिल'

चारों ओर तिमिर घना है,
जीवन संकट में पड़ा है।
प्रकृति को बाँधने चला था,
आज स्वयं बंधक बना है।।
भूल बैठा था ये धरती,
वन्य जीवों का भी घर है,
अहंकार के मद में तूने,
सभी हदों को पार किया है।।
समुद्र की भूमि को छीना,
वनों के पेड़ों को लीना,
जियो और जीने दो के,
सिद्धांत को भूल चुका है।।
कब तक सहती रहे प्रकृति,
जी भर उसका दोहन किया है,
अपने कर्मों का फल मिलेगा,
यही नियति का सिलसिला है।।
माँग ले अब भी तू माफ़ी,
प्रकृति का दिल बहुत बड़ा है,
संभल कर कदम तू रखना,
काल मुँह बाये खड़ा है।। ■■

❑ मालवीय नगर, नई दिल्ली

तरक्की

हिंदी/कविता

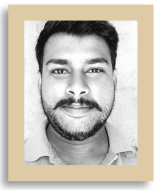

गौरव पांडेय

शहर ने आज कितनी तरक्की कर ली
रोटियाँ बंटी, हजारों ने धक्कामुक्की कर ली
तरक्की–मतलब, ट्रेनें कारें मेट्रो, और रफ्तार
मगर वह सब ठप पड़ी, हँस रही है उस पर
देख तू मुझसे, गाँव तक नहीं जा सकता
तरक्की की बड़ी इमारतें, हँस रही है उस पर
देख तू मुझमें, अपना दुख नहीं छिपा सकता
पाँच सितारा होटल, हँस रहा हैं उस पर
देख तू मुझसे, अपनी भूख नहीं मिटा सकता
सूखी आँखों से टपके, आँसुओं की बूंदें मोटी
तरक्की बाँटता शहर, उसे नहीं बाँटना रोटी
किसी को बीमारी ने औ कुछ मर गए भूख से
कुछ मरे डर से, कि मर ना जाए भूख से
बीमारी नहीं, किया भूख ने, गरीब की दुर्दशा
शहर ने देखा तमाशा, पैदल चलता चल बसा ■■

❑ विवेक नगर, हनुमान मंदिर रोड, बिछिया, गोरखपु (उ.प्र.)

कविता का होना

हिंदी/कविता

नीना छिब्बर

दिल में आग और आँखों में खून उतरे
धड़कनों में ज्वार–भाटा हो अरमानों का
सारी प्रकृति कहे कुछ अनकही कहानियाँ
मन की आँखें दिखाएँ, अनोखे सपनों की राह
सपने जो लिपटे हों कल्पनाओं की बेलों से
भीतर की सारी सुगबुगाहट शब्द बन जाए
तब कविता बनती है।।
सूरज की पहली किरण जब जगाए भाव
कड़ी धूप भी जीवन को लगे छाँव घनेरी
साँझ का तारा, मन आकाश में टिमटिमाए
चांदनी तन मन, आत्मा में रच बस जाए
बादलों के मनचाहे चित्र अनेक गीत बन जाए
रातों की नींद और दिन का चैन खो जाए
तब कविता बनती है।।
आसपास के दुःख–दर्द अपने बन जाएँ
टूटते रिश्ते, बिखरते संबंध टीस जगाए
भीड़ में भी अकेलापन ही मन को भाए
अपने ही पीठ में खंजर चुभा मुस्काएँ
दर्द सुख का पर्यावाची सा बन जाए
शब्द निर्मल झरने से कागज को भीगों जाएँ
तब कविता बनती है।। ■■

❑ 17/653, चौपासनी हाऊसिंग बोर्ड़, जोधपुर (राजस्थान) 342008

मोहब्बत

हिंदी/कविता

अरुणा कुमारी राजपूत

मोहब्बत...
दिल की आवाज़
रुह का एहसास
मोहब्बत...
दर्द–ए–दास्ताँ
दिल–ए–सुकून
मोहब्बत...
एक अफ़साना
अनसुना फसाना
मोहब्बत...
ख़िजाँ का मौसम
बसंत का बहार
मोहब्बत...
आँखों की भाषा
संबंधों की परिभाषा
मोहब्बत...
रस्म–ए–इबादत
हर एक की हसरत
मोहब्बत...
आग का दरिया
अमृत का मंथन
मोहब्बत...
रस्म–ओ–रिवाज़
जमाना खिलाफ़
मोहब्बत...
मेरी तेरी कहानी
लोगों की जुबानी। ■■

❑ C-49 A, अपना घर कालोनी, हापुड़ (उ.प्र.)

ग़ज़ल

हिंदी/ग़ज़ल

इंदु मिश्रा 'किरण'

न कोई शिकायत न कोई गिला है
मिला है वही जो ख़ुदा ने दिया है

जो बढ़ने लगी है कुदूरत दिलों की
न जाने चली आज कैसी हवा है

करो कुछ इनायत मेरी ज़िंदगी पर
मुझे इस ज़माने ने अक्सर छला है

पयाम आपका जब भी आया है मुझ तक
महकने लगी फिर ये सारी फ़िजा है।

हवा नफ़रतों को वो देते 'किरण' अब
ज़माने की हर बात से जो खफ़ा है।
■■

❑ 13E/K, शेखसराय, फेस–2, नई दिल्ली–110017

आज का दिन

हिंदी/कविता

श्वेता

आज का दिन कैसा हो ?
यह प्रश्न आया तो
जवाब कुछ ऐसा आया
आज का दिन शुभ हो
सुखद हो, सार्थक हो
सौहार्दपूर्ण हो, श्री वृद्धि हो
आत्म चिंतन का हो
खुद से खुद की मुलाकात का हो
हर फिक्र को
धुएँ में उड़ाने का अभ्यास हो
सुरक्षित रहने का प्रयास हो
गुनगुनाने का अभ्यास हो
समाज सेवा का भाव हो
अनुभवों की संपत्ति का दान हो
प्रकृति के पास हो
सकारात्मक अहसास हो
'सुनहरे कल का ख़्वाब' सार्थक हो।■■

❑ छत्तरपुर, नई दिल्ली–110074

जीवन–मूल्य

हिंदी/कविता

डॉ. पूजा कौशिक

अभिमान ना कर हे सूर्य कभी
हर शाम तुझे ढल जाना है,
नहीं शीतल छाँव नसीब तुझे
खुद ही खुद में जल जाना है।

ना इतरा चाँद रूप पर तू
हर रोज यह रूप बदलना है,
नहीं रोशन खुद के दम पर तू
सूरज के दम पर दमकना है।

है निश्चित सूर्य का ढल जाना
और घटना–बढ़ना चाँद का भी,
यहाँ हर सुबह ने तोड़ा है
अभिमान घनेरी रात का भी।

मन गर्व नहीं जो करता है
धरती पर पाँव जमाता है,
मर कर भी अमर हो जाता वह
हर दिल से दुआ कमाता है।
■■

❑ एच/43डी, साकेत, नई दिल्ली–110017

वह धरती है

हिंदी/कविता

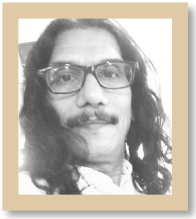

राम गौतम

वह, जो
तेरी तीसरी आँख में
सदियों से
किरकिरी सी फिरती है
और
उसी कोर में से
आँसू लगातार
टपकाया करती है
वह धरती है, जो
बड़ी घुमक्कड़ी है...

घूमती है खुद भी
सबको घुमाती है
पाने के पागलपन में
दिन–रात
क्या–क्या गँवाती है
और
तुझको सताया करती है
वह धरती है...

पाले है शौक कइयों
लतें भी लगी हैं उसे
और
बिगड़ैलों की सरदार है
ना जाने कितनी
पाठशालाएँ एवं
सुधार–केन्द्र खोलकर
बैठी है
वह धरती है...

नया बनाने के जुनून में
पुराना बिगाड़ने में
निर्दयता और क्रूरता से
पेश आती है
ममता की मूरत बनी
ढोंग भी बहुत से करती है
वह धरती है...

उतार देती है उजाले
चेहरे पर
अँधेरे पुतवाने के लिए
और समझती है
वही हैं सोलहों सिंगार
उसके
रिश्ते तलाशने लगती है
बन–ठन के ठसककर
चलती है
वह धरती है...

मोह–भंग तेरा भी
होता नहीं है उससे कभी
अर्द्धांगिनी से छुपाता है
पीड़ा अपनी
सहता रहता है उसकी
मनमानियाँ
जो वह करती है...
तेरी तीसरी आँख में
सदियों से
किरकिरी सी फिरती है
और उसी कोर में से
आँसू लगातार टपकाया
करती है
वह धरती है...■■

❑ 408/23, कांदीवली (प), मुंबई

किसको पता था

हिंदी / कविता

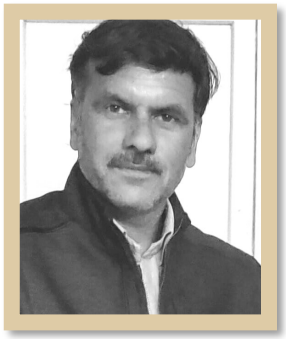

केवल कुमार 'केवल'

गिरजाघर देवालय बंद हो जाएँगे
गुरुद्वारे, विद्यालय बंद हो जाएँगे।
पर्यटन, कार्यालय बंद हो जाएँगे
मस्जिद व शिवालय खुल नहीं जाएँगे।।
किसको पता था?

समस्त देशों में तालाबंदी हो जाएगी।
अर्थ व्यवस्था भी मंदी हो जाएगी
महानगर बाज़ार सब वीरान हो जाएँगे
गाँवों के गाँव भी सुनसान हो जाएँगे।
किसको पता था?

छोटा–सा किटाणु महामारी बन जाएगा।
मुखौटा लगाना लाचारी बन जाएगा।
संपूर्ण संसार की रफ़्तार रुक जाएगी
हर एक देश की सरकार झुक जाएगी
किसको पता था?

होटल, मॉल, हॉल सब बंद हो जाएँगे
पिकनिक स्पॉट सब बंद हो जाएँगे
समस्त संसार में कोरोना ऐसे आएगा
दोस्तों के हाथ से हाथ छूट जाएगा।
किसको पता था?

शादियों में डीजे अब बज नहीं पाएँगे
दुल्हे संग बाराती अब सज नहीं पाएँगे
बरात में मित्रों की फौज नहीं होगी
पहले जैसी शादियों में मौज नहीं होगी
किसको पता था?

अंत्येष्टि में अल्प जन ही जा पाएँगे
बांधवों के बिना प्राणहीन को जलाएँगे
घर पर रहकर ही सब शोक मनाएँगे
हाथ मिलाने को भी सब कतराएँगे
किसको पता था?

अतिथि का कोई अभिवादन नहीं करेगा
आए हुए मेहमान से हर कोई डरेगा
ज्योतिषियों की भविष्यवाणी फेल हो जाएगी
अपने ही घर में जेल हो जाएगी
किसको पता था?

आरक्षी सामरिक नैया पार लगाएँगे
स्वस्थ्य कर्मचारी भी योद्धा बन जाएँगे
घर से ही गुरुजी मोबाइल पर पढ़ाएँगे
बैठ ऑनलाइन सभी बच्चों को समझाएँगे
किसको पता था?

प्रदूषण के उपबाद का उद्धार हो जाएगा
स्वच्छता का ऐसे ही संचार हो जाएगा
निर्मल नदियाँ, नभ अम्लान हो जाएगा
धरा का संतुलित तापमान हो जाएगा
किसको पता था?
■■

❑ बड्डूई, मैरामांद्रेया अखनूर,
जम्मू (जम्मू व कश्मीर)181201

कर्तव्य–पथ पर

हिंदी / कविता

डॉ. प्रभा कुमारी

धूँ–धूँ जल रहा श्मशान
आकाश लपटें छू रही नित
हाथ बाँधे रिश्तों का जमघट
दूर, भयातुर खड़े विचलित
अपनों ने ना दिया मुखाग्नि
हुआ न कोई संस्कार समर्पित
न हुआ कोई दान लकड़ी का
क्रियाएँ सारी वेदमन्त्र रहित
नहीं उच्चारण राम नाम सत्य का
जल रहा सत्य आज होकर सम्मिलित
हल्दी से देह रहा अछूता
पंचतत्त्व से सत्य हो रहा एकीकृत
श्मशान आज बन गया हर घर
मधूर नहीं कोई आवाज़ मुखरित
मच रहा आजू–बाजू हाहाकार
'रेमडिसिविर' आज बाजार से आलोपित
'टाकलुजिमस' भी नहीं मार्केट में
ऑक्सीजन की नहीं आसान मिल्कियत
'छोड़ रही साँसें अपना जिस्म
रूह हो रही एक साथ रुखसत
सपने सारे धूल–धूसरित
खरीद ली गई पुष्पक विमानें
सेन्ट्रल विस्टा अद्भुत निर्मित
दुनिया में जोड़ जिसका नहीं विदित
जहाँ ऑक्सीजन बिना रहे लोग तड़पते
फाइवस्टार हो कुछ के लिए गया पंजीकृत
कहाँ भारत है गणतांत्रिक
हर कदम पूँजीपतियों की जीत
हैं मानवता कितना बचा देश में
रेमडिसिविर मिल रहा नकली निर्मित
एक तरफ आर्तनाद से भरा नभ है
राज किसी की दूसरी तरफ हो रहा स्थापित
हाल अस्पताल का अपना इतना विदिर्ण
कभी पानी, कभी दवा, कभी एंबुलेंस अनुपस्थित
याद रखना मेरा वतन, मुझे प्यार है बेइंतहा है
न रहूँ कभी कर्तव्य विचलित। ■■

❑ डिप्टी चीफ मेडिकल ऑफिसर
सेन्ट्रल हास्पिटल डकरा, डकरा, खलारी
राँची, झारखंड–829210

वज्र मनःहनुमच्चरणाश्रयम्

संस्कृत / कविता

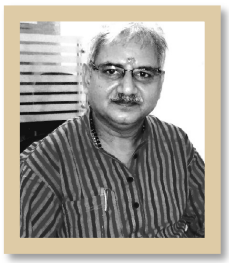

मार्कण्डेय शारदेय

अवति यः सततं शरणाश्रितं त्रिविध–तापविनाशकरो वरः।
सहजतुष्टिधरः पवनात्मजो व्रज मनःहनुमच्चरणाश्रयम्।।

अतुलनीय–बली बलिपंगवो मतिमतां मतिदो मतिमूर्तिमान्।
गतिमतां गतिदायक–नायको व्रज मनःहनुमच्चरणाश्रयम्।।

कुजन–कुंजर–केहरि–रूपधृक् सुजन–सौरभ–सेवन–तत्परः।
अधन–भूतिरशक्त–बलं परं व्रज मनःहनुमच्चरणाश्रयम्।।

रघुपतेरनुगेभ्य–कपीश्वरः शिवमयःशिवशक्ति–सुरूपवान्।
अरुणवस्त्रधरः स्वरुणप्रभो व्रज मनःहनुमच्चरणाश्रयम्।।

मधुपवत् खलु दाशरथेर्गुण–सुमरजो–रसपान–समुत्सुकः।
हरिकृपा–सरणिः शरणार्थिनां व्रज मनःहनुमच्चरणाश्रयम्।।

जनकजा जननी जनतोषिणी जनकजाधव एव पिता महान्।
हरिजना इति यस्य प्रिया जना व्रज मनःहनुमच्चरणाश्रयम्।।

बलि–बलग्रह–बालि–सहोदर–सचिवराट् शुचिमन्त्र–नियोजकः।
स्वपति–राघव–सख्य–सहायको व्रज मनःहनुमच्चरणाश्रयम्।।

असुर–पौरुष–धूलि–समानकृत् कनकवन्नगरी–परिदाहकः।
दशमुखे प्रथमो भयवापको व्रज मनःहनुमच्चरणाश्रयम्।।

■■

❑ पाटलीग्राम अपार्टमेंट, बजरंगपुरी, गुलजारबाग, पटना (बिहार)–800007

बेजुबान शब्द

हिंदी / कविता

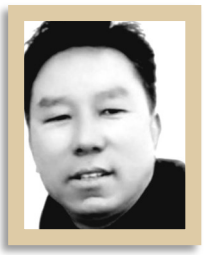

डॉ. सुमन बान्तवा

बेजुबान शब्द
माँग रहे हैं
एक आवाज
एक भाव
एक अर्थ, कवि से।

बेजुबान शब्द
माँग रहे हैं
एक आसमान
एक जमीन
एक घर, कवि से।

बेजुबान शब्द
माँग रहे हैं
एक कपड़ा
एक रोटी
एक सपना, कवि से।

बेजुबान शब्द
माँग रहे हैं
एक साँस
एक धड़कन
एक जीवन, कवि से।

बेजुबान शब्द
माँग रहे हैं
एक आकार
एक रूप
एक नाम, कवि से। ■■

❑ अतिथि प्राध्यापक, नेपाली विभाग
सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक

ऊडडाकल

कांगड़ी / मुक्तक

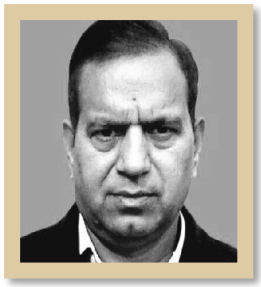

भगत राम मंडोत्रा

ये महामारियां दा दौर भगता।
आहां–कराहां कनै शोर भगता।
निश्चे नै बैठी करी सोच कनै,
कर अपणे कर्मां पर गौर भगता।1

हर पासें हाहाकार भगता।
कुत्थू है सैह् सरकार भगता?
काळखा जो गुआळणे तांईं,
सुण सावणे दा प्रचार भगता।2

माह्णू चांदी कुटदा भगता।
कुदरत जो है लुटदा भगता।
कुदरत दा करोध कोरोना,
कहर बणी नै टुटदा भगता।3

कोई दुद्धें नीं धुळेया भगता।
कहर इंञा ही नीं डुळेया भगता।
सिस्टम बिमार ते पब्लिक बेजार,
गरीब बेचारा रुळेया भगता।4

किछ झूठी वदनामी भगता।
किछ सच्ची नाकामी भगता।
अप्पू जो संभाळी रख तूं,
लहर नीं सुनामी एह् भगता।5

हर पासें तबाही ही तबाही भगता।
फेल सिस्टम दी है एह् गुआही भगता।
चोंह् खाने चित होई गइयां सरकारां,
जिन्हां लुट्टी थोथी वाहवाही भगता।6

सैह् पहलें भी आया था जगाणा भगता।
पर लोक लगी पै थे सुस्ताणा भगता।
कोरोना मुड़ी आया जिह्ड़ा होई,
हुण खराब करी ता तिन्नी खाणा भगता।7

लगदा इस तौळे नीं है हुण जाणा भगता।
पता नीं होर कितणा कहर मचाणा भगता?
दो गज दरेड़, नक–मुंह च मास्क कनै टीका;
इन्हां कन्नै सिक्ख तूं हुण निभाणा भगता।8

■■

❑ 'कमला कुटीर' चम्बी, संघोल, जयसिंहपुर, कांगड़ा (हि. प्र.) 176091

धर्म

बुंदेली/कविता

जयति जैन 'नूतन'

राम संगे जावे लाने
सिया ने घर छोड़ो हतो
अपनो पत्नीधर्म निभावे
महलन खौ त्याग करो हतो
ऐसी घटना घटित भई
रावण ने सिया खौ हरो हतो
जीतकर घरे लियाये सिया खौ
जनता खौ अस्वीकार हतो
बौ का समझे कहवे वाले
धर्म कित्तो बड़ो हतो
सिया गयी जब जंगल में
राम लला भी रोओ हतो
अपनी प्रिय धना के संगे
जीने रंगी जीवन सोचो हतो
खुदई धर्म के आगे उने
सिया खौ साथ छोड़ो हतो।
■■

❑ 441, से.–3, शक्तिनगर, BHEL, भोपाल (म.–प्र.) 462024

भेद कायखों ?

बुंदेली/कविता

भावना अरोड़ा 'मिलन'

जौ देखो हम पढ़–लिख कें,
आज बन गए एन सुपर–स्टार,
गाड़ी–मोटर चलाएँ,
हवाई जहाज एन उड़ाएँ,
एयर होस्टिस बनकें,
सबरे में फिरयाएँ।
चूला–चौका बाल–बच्चा,
चाए होबे नौकरी,
सब आबे मोड़ियन खों,
जा केलाए चाकरी।
खेल–कूद चाए होबे कुस्ती,
हर क्षेत्र में पार लगाई कस्ती।
तुमसें कायमें कम आएँ हम,
सबरे फर्ज निभाबे को रक्खें दम।
रु भेद कायखों करत हों तुम,
लैंगिक आधार पै,
कुचल–कुचल कें मान हमाओ,
जन्में कांसें? जौ देखो बिचार कें।
■■

❑ कालकाजी, नई दिल्ली

बिटिया के महतारी

बघेली/कविता

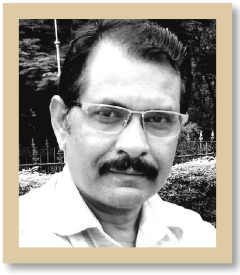

सूर्यभान कुशवाहा

केखर केखर सुनी बेवत्था केखर केखर गारी
भिंसारेन से मुहूं फुलाये,बिटिया के महतारी
आनेंकेर चाकरी कइके,दिन भर जिउ का घोटी
रातौ भर के घर मा आये,सुत्ते मिलै न रोटी
महगाई बेड़ना अरझाये,केत्ता करी कमाई
फाट फूट सब ओन्हा लत्ता,फटही धरी रजाई
मेरे मूड़े जउन बिपत है,ओही कइसन टारी
भिंसारेन से मुहूं फुलाये बिटिया के महतारी।।
सझिअउरे दुअरा मा बइठे,लड़िका हमहीं ताकैं
पापा आज कुछू लैअइहै,मुलुर मुलुर सब झांकैं
दउड़ परै दुअरा के नेरे,कबरी पिलिया जइसन
हमही का ले आया पापा,पूछै लागै अइसन
गभुआरन के चुलुक देखिके,कुरूअन आंसू ढारी
भिंसारेन से मुहूं फुलाये,बिटिया के महतारी।।
सोनुवा कहैले आये लइया,पपुआ कहै कि टाफी
मोनुवा हांथ पसारे दउरै,लइआये हैं कांपी
लउब बिहानें कहि के हम,कइसौ के बउराई
झूर झार जब झोरा देखै,भरे तरइना आंई
कइसन के समझाई इनखा, दइऔ इनसे हारी
भिंसारेन से मुहूं फुलाये बिटिया के महतारी।।
इनसे कइसौ पीठ छोड़ाके,भीतर कइती आयन
फुग्गा जइसन मुंहूँ फुलाये,मलकिन कांही पायन
ब्रियत्तन के तेल लगाये,बकुरी या महरानी
कहिस ले आबा हरबिन जाके, दस डिब्बा पानीं
हैण्डपंप मा कसरत कइके,कइसौ मइसौ आयन
बीसन ठे फरमइसन मां हम,सुत्ते सोय न पायन
बरस पड़ी बिटिया के अम्मा,जस मछेह के छत्ता
बागीथे लुगरी हिलगाये,जोरि जोरि के लत्ता
काल्है हमी बेसाहा धोतिया,बिटियन खीतिर सूटर
टिकुली बुंदवा क्रीम पाउडर,अउर मोबाइल दूसर
लड़िकन के खेलै के खीतिर लया बेसाहे लारी
भिंसारेन से मुंहू फुलाये, बिटिया के महतारी।।
सब अनाज गल्लन के कीमत भागत हे मनमाना
नोन तेल सब्जी भाजी के, कीमत सबके जाना
या महगाई हमहूं भइया, केतना जोर लगाई
च्लत रहै दुई जूना रोटी, अइसै जुगुत भिड़ाई
जनत्या तुम्हूं जो पापा होत्या,हम होइत महतारी।।
भिंसारेन से मुहूं फुलाये,बिटिया के महतारी।।■■

❑ मरौहां, सतना (मध्य–प्रदेश)

કેટલીય વાર...

ગુજરાતી / કવિતા

હિંદી–કેશવ મોહન પાણ્ડેય

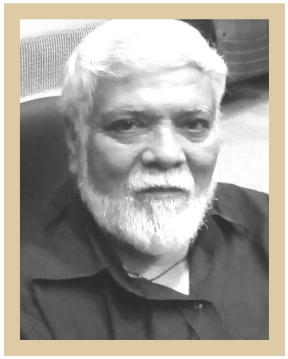

સ્વ. રક્ષિત દવે

❑ અહમદાબાદ, ગુજરાત

કેટલીય વાર
અકારણ
રોવાનું મન થઈ જાય છે
ખુદથી જ
ખોવાઈ જવાનું મન થઈ જાય છે
મન થાય છે
ઉદાસ ચહેરાં પર
સ્મિત ખીલવવાનું
વિખૂટા પડેલાં યુગ્મોને
અંતર સુધી મેળવવાનું
મન તો થાય છે
જ્યારે પણ મન ઉદાસ થઈ જાય
આકાશમાં ઉડતો જાઉં
કેટલીય વાર
ત્હારી પાસે
આવવા ઈચ્છુ માં
કેટલીય વાર
એકાએક હસી પડું છું
મ્હારી મૂર્ખતાથી
જ્યારે હું રિસાઈ જાઉં છું
ત્હારા જેવો
અધિકાર જમાવવા કોઈ નથી આવતું
માં ! ત્હારી માફક
વારંવાર મનાવવા કોઈ નથી આવતું .

■■

कई बार...

कई बार
बिना वजह
रोने का मन करता है
अपने आप से ही
खोने का मन करता है
मन करता है
उदास चेहरों पर
हँसी खिलाने का
बिछड़े जोड़ों को
अंतर तक मिलाने का
मन तो करता है
उड़ता जाऊँ आकाश में
जब भी मन उदास होता
कई बार
आना चाहूँ माँ
तेरे ही पास में।
कई बार
एकाएक मुस्कुरा उठता हूँ
अपनी बेवकूफी से
जब मैं रूठता हूँ
आप जैसा
कोई नहीं हक जताने आता
माँ! आप जैसा
कोई नहीं बार–बार मानाने आता। ■■

ଜୀବନର୍ ମହକ୍

କୋଶଲୀ / କବିତା

ବିଶ୍ୱନାଥ ଭୁଏ

ଜୀବନର୍ ଉଷତ୍ ମହକ୍ ଟା
ମହକି ଯଉଛେ ଚାର୍'ହିକୁତି
ପାଏବାର୍ କେ ହେଲେ ଇଟା
ବନ୍'ବାର୍ କେ ପଡ଼୍'ବା ମହମ୍'ବତୀ....!
ଦୁଇ ଦିନିଆ ମୁନୁଷ୍ ଜୀବନ୍
ଦର୍'କାର୍ ନାଇଁ ଟଁକା ସଂପତି
ଅଛେ ଦର୍'କାର୍ ଭାବର୍
ହୁରୁଦ୍ ଭରା ସତ୍ ପିର୍'ତୀ....!
ନୁହଁନ୍ କିହେ ଅଲ୍'ଗାଟା
ଯିଏ ହଉ ଭି ଯେନ୍ ଜାତି
ସଭେ ଆମେ ସମାନ୍ ବଲି
ହକ୍ ଥି କହେମା ପିଟି ଛାତି....!
ସମ୍ଭବ ହେବା ଇ ସବୁଟା
ଯଦି ସାହାଯର୍ କାମେ ଯିମା ମାତି
ସେବାର୍ ଗୁନ୍ ଅଛେ ଯେତେ
ନିଜର୍ ଭିତ୍'ରେ କରୁଁ ଭର୍'ତି....!

■■

❑ କେଶାଇପାଲି, ଭଟ୍ଟିଲ, ବରଗଡ଼ (ଓଡ଼ିଶା)

जीबनर् महक्

जीबनर् उषत् महक् टा
महकि जउछे चार्'हिकुति
पाएबार् के हेले इटा
बन्'बार् के पड़्'बा महम्'बती...!
दुइ दिनिआ मुनुष् जीबन्
दर्'कार् नाँई टँका संपति
अछे दर्'कार् भाबर्
हुरुद् भरा सत् पिर्'ती...!
नुहँन् किहे अल्'गाटा
जिए हउ भि जेन् जाति
सभे आमे समान् बलि
हक् थि कहेमा पिटि छाति...!
संभब हेबा इ सबुटा
जदि साहाजर् कामे जिमा माति
सेबार् गुन् अछे जेते
निजर् भित्'रे करुँ भर्'ति...!

■■

तिमी

नेपाली / कविता

भीष्म उप्रेती

म यहीँ छु
तर तिमी छैनौ।

मैले निरन्तर माया गरेको
अगाध श्रद्धा गरेको
अनन्त तपस्या गरेको
तिमी,
मेरो स्वतन्त्रता
मेरो लक्ष्य
मेरो गन्तव्य
मेरो प्रतिबद्धता।

म भने छु
तर तिमी छैनौ।

तिमी बिना म कसरी छु ?
कसरी पूर्ण छु ?
कसरी ज्योतिर्मय छु ?

म पूर्ण हुन चाहन्छु
ज्योर्तिमय हुन चाहन्छु।

म उठ्छु
अघि बढ्छु
लड्छु अवरोधहरूसँग

म
तिमी सहितको भइछाड्ने छु। ■■

❑ निदेशक, नेपाल राष्ट्र बैंक, काठमांडू (नेपाल)

चुनाव

सरगुजिहा / कविता

मधु गुप्ता 'महक'

चुनाव कर माहौल हवे
संभल संभल के रहिया भाई
सुघर ला वोट नई पड़ही तो
पईहा फिर ठेंगा भाई
चुनाव कर...

वोट देहे कर हक हवे
जम्मो झन जाना भाई
जेमे दिल राजी हो होए
ओही ला जितईहा भाई
चुनाव कर...

कोई देही दारु हड़िया
ओमे झिन भुलईहा भाई
कम्बल सुटर कपड़ा देख
कटिको मत ललचईहा भाई
चुनाव कर...

कुरसी कर लल्हा मन
सुघर पहचनिहा भाई
देश भक्त पहिचान के
सुघर बटन दबहिया भाई
चुनाव कर...

नेता रहे भगवान जईसन
तबे तरक्की हो ही भाई
भ्रष्टाचारी आंतक लूट
फिर मचही तबाही भाई
चुनाव कर...

सबकर वोट जरुरी है
ऐला मत भुलईहा भाई
काम धाम ला छोड़ के
पोलिंग बूथ जईहा भाई
चुनाव कर... ■■

❑ सीतापुर, सरगुजा, (छत्तीसगढ़)

गीत

हिमाचली / गीत

मूल गीतकार : विनोद श्रीवास्तव

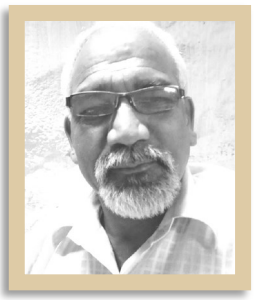

कृष्ण चंद्र महादेविया

म्हारी देहा सा तपणा
त्हारी धूपड़ क्या जाणे।

बड़डे डूघेनी रिश्ते हुदें
रंक–राजे रे
ना मांडे ग्रावां री माटी
केस्सी रे जुट्टे आई–जाई के।

म्हारे ग्रावां रा सुफना
त्हारा भूपड़ क्या जाणे।

नशे मंझ हन बौहत जादा
अमीरी तुहां री कम उंबरी
गरीबी चुप हन फिरी बी
जवाड़ी जाया दी ध्याड़–दिनं
त्हारे सोखा रा बधणा,
त्हारा कूपड़ क्या जाणे।

म्हारी पीड़ा टाटी हन
त्हारे कन्न टौणे हन
त्हारा हास़ा उथल़ा हन
म्हारे घाव डूघे हन।

म्हारी भूखा रा उठणा।
त्हारा सूपड़ क्या जाणे। ■■

❑ महादेव, सुन्दरनगर, मंडी, (हि.प्र.)

गज़ल

पहाड़ी / कविता

अब्दुल वाहिद मन्हास

मौसम मौसम गर्द निं माए।
रुत्तां होइयां जर्द निं माए।।

खुशबू खुशबू तेरियां यादां।
रातां खाब बेदर्द निं माए।।

एह् बेल्ले न सिरखुल घोड़े।
थम्मे केह्ड़ा मर्द निं माए।।

मौत, हयात खुदा ने कब्जे।
बेबस हर पल फर्द निं माए।।

निंघ फिजा निं नाल खड़ी तूं।
आल दुआला सर्द निं माए।।

कुंगली नर्म सी कुरबत मां निं।
हून कंडे बेपरद निं माए।।

वाहिद सेज फुल्लां निं लेकिन।
सरके तेरा दर्द निं माए।।

■■

(देवनागरी लिप्यांतरण – यशपाल निर्मल)

❑ पहाड़ी सैक्शन, जम्मू–कश्मीर कला, संस्कृति व भाषा अकादमी, जम्मू

पिता जूं यादगीरियूं

सिंधी / कविता

हरीश करमचंदाणी

मूं कोन कयो कड़हिं
उन्हीअ जमीन जो स्पर्शु
न डिठमि उहे जरखेज बनियूं
न डिनमि
उन सीतल ऐं निर्मल नदीअ में टुबियूं
न वेठुसि दरिया जे कप ते कड़हिं
कहाणी उन जमीन ऐं बनियुनि जी
तो बुधाई
संगीत
नदीअ ऐं दरियाह जे वहकुरे जो
तो सुणायो ऐं इहो कन्दे
तुंहिंजी कोशिश रही
त मां रहा बिलकुल बेख़बर
त तरी आया आहिनि गोढ़ा
तुंहिंजियुनि अखियुनि में
ऐं भरिजी आयो आहे तुंहिंजो गलो...
हा पिता
मूं उन जमीन, बनीअ, नदीअ ऐं
दरियाह जो
शिद्दत सां कयो आ अहसासु
पंहिंजे अन्दर में

ऐं न लगा आहिनि उहे मंजर
तुंहिंजियुनि सिमृतियुनि जा
कड़हिं बि मूं खे
अण–जातल अण–सुजातल। ■■

❑ जयपुर (राजस्थान)

एदेल बाहा

संथाली / कविता

गोपाल किस्कू

होड़ को मेना
एदेल बाहा
गुन दो बानुः आना
जेल जोङ गे चोरोक;
ईञीञ मेना
एदेल बाहा
गुन दो मेनाः आना
आपे बापे बाडाया पोरोख।
होड़ को मेना
एदेल बाहा
बानुः आ सोंधाड़ सो,
ईञीञ मेना / एदेल बाहा
अडी सोंधाड़ गे सो
सांवते तिस हों बाङ गोसोः।
होड़ को मेना / एदेल बाहा
चेद कामी रेहों
बाङ लागाः, / ईञीञ मेना
एदेल बाहा
सुद रे रेबेद लागिद
जेल कोपे न्हाः मिद दिन

दिसोस कुड़ी को लांगाः।
होड़ को मेना / एदेल बाहा
हाट बाजार रे
किरीञ आखरिञ बाङ गानोः,
ईञीञ मेना / एदेल बाहा
ए.सी. ऑडिटोरियम रे,
सावदा कातेञ देखावापे
जेलते आलो न्हाः पे हायरानोः।
एदेल बाहा गो
एदेल बाहा !
ओकोय कोपे हातावा
एदेल बाहा !
चे, ओकोय कोपे बाहाया ?
खाली मिद धाव
सुद रे रेबेद बिडाव पे
आपेयारू सुद ए सोभाया ।
डांगुवा कुड़ी को
आर बाङ बहू कुड़ी को
सानाम आदिवासी सांवता
जाकात रिन / दांव को ञामा,

ओकोय चेहरा, बेस ओकोज
रेबेद ए गान खान,
उनी गे ...
मिस एदेल बाहा, मिसेस एदेल बाहा
सिर्फाय आमेट जोङ मा।
चिली डांगुवा कुड़ी
चे, चिली बहू कुड़ीम जेल को
रास्का बाको साम्बड़ाव लेद ते,
सेटेरेना को सेलेदोः
आंजोम काते डाकरा।
चेतात मिस एदेल बाहा
चे, चेतात मिसेस एदेल बाहा
सिर्फा कोदो
बाञ हाटिञ बाड़ायेद,
बापे जेलीञ काना?
पुयसा काउडी जाला ते
ईञ दो बाहाञ बेपारा !! ■■

❑ चाईबासा (झारखंड)

ਖਬਰਾਂ

ਪੜ੍ਹੋ ਦੇਸ਼ ਮੇਰੇ ਦੀਆਂ ਛੱਪੀਆਂ ਖ਼ਬਰਾਂ ਨੂੰ ,
ਤਾਂ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰੋਂਗੇ ਰੋਦੇਂ ਹੋਏ ਅੱਖ਼ਰਾਂ ਨੂੰ।

ਕੋਈ ਦੁਖੀ ਹੈ ਯਾਰੋ ਆਪਣੀ ਗ਼ਰੀਬੀ ਤੋਂ,
ਪਰੇਸ਼ਾਨ ਹੈ ਕੋਈ ਆਪਣੇ ਹੀ ਕਰੀਬੀ ਤੋਂ ।

ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਖੋਹੀ ਹੋਈ ਕੁਰਸੀ ਦਾ ਦੁੱਖ ਹੈ,
ਕੋਈ ਹੁੰਦਾ ਜ਼ੁਲਮ ਵੇਖ ਕੇ ਵੀ ਚੁੱਪ ਹੈ।

ਕੋਈ ਲੱਗਿਆ ਜਾਤ-ਧਰਮ ਦਾ ਪੱਤਾ ਖੇਡਣ ਤੇ,
ਆਪਣੀ ਜ਼ਮੀਰ ਤੇ ਦੇਸ਼ ਨੂੰ ਵੇਚਣ ਤੇ ।

ਨਿੱਤ ਹੁੰਦੇ ਲੱਖਾਂ-ਕਰੋੜਾਂ ਦੇ ਘਪਲੇ ਵੇਖ ਲੈ,
ਜਾਣ-ਬੁੱਝ ਕੇ ਉਲਝਾਏ ਹੋਏ ਮਸਲੇ ਵੇਖ ਲੈ।

ਇਸ਼ਤਿਹਾਰਾਂ ਤੇ ਵੇਖ ਹੁੰਦੇ ਖ਼ਰਚੇ ਨੂੰ ,
ਕਈਆਂ ਦੀ ਜਾਨ ਲੈਂਦੇ ਹੋਏ ਕਰਜ਼ੇ ਨੂੰ ।

ਹੱਕਾਂ ਲਈ ਲਗਦੇ ਹੋਏ ਧਰਨੇ ਵੇਖ ਲੈ ,
ਲੀਡਰਾਂ ਨੂੰ ਗੁਮਰਾਹ ਕਰਦੇ ਵੇਖ ਲੈ।

ਧਰਮ ਦੇ ਨਾਂ ਤੇ ਹੁੰਦੇ ਏਥੇ ਦੰਗੇ ਨੇ,
ਜਾਤ-ਪਾਤ ਤੇ ਹੋਰ ਵੀ ਕਈ ਪੰਗੇ ਨੇ।

■■

ਪੰਜਾਬੀ / ਕਵਿਤਾ

ਮਨਦੀਪ ਗਿਲ੍ਲ ਧੜਾਕ

ख़बरों

पढ़ो देश मेरे की छपी हुई ख़बरें को,
तों महसूस करोगे रोते हुए अक्षरों को।

कोई दुःखी है यारों अपनी गरीबी से,
परेशान है कोई अपने ही करीबी से।

किसे को छीनी हुई कुर्सी का दुःख है,
कोई होता जूल्म देख कर भी चुप है।

कोई लगा जात–धर्म का पत्ता खेलने में,
अपनी जमीर और देश को बेचने में।

यहाँ होते लाखों–करोड़ों के घोटाले देख ले,
जान–बूझ कर उलझाएँ हुए मसले देख ले।

हक के लिए लगते हुए यहाँ धरने देख ले,
वोटरों को गुमराह करते यहाँ नेता देख ले।

धर्म के नाम पर भी होते यहाँ दंगे ने,
जात–पात आदि और भी कई पंगे ने।

लीडरों का हुआ है यहाँ विकास बड़ा,
गरीब आज भी मनदीप वहीं है खडा।

■■

❑ धड़ाक कलां, साहिबजांदा अजीत सिंह नगर,
मोहाली (पंजाब)

गज़ल

पाणी नी हइं, दाणो नी हइं।
जिनगी थारो ठिकाणो नी हइं।

जेतरा लोग बतावज् स्याणो,
यार, तू एतरो स्याणो नी हइं।

हेर म्हारी बी देख करी नऽ,
हाउं बी यार बिराणो नी हइं।

सात समुंदर बीऽ नी पुरता,
तिस्या न को उमाणो नी हइं।

कांऽ तक बैल नऽ सी चमकग्,
थारा पास पिराणो नी हंइ?

'अनल' सयर मंऽ असो गुताण्यो,
गांव मंऽ आवणो–जाणो नी हंइ।

■■

निमाड़ी / ग़ज़ल

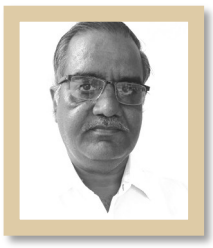

महेश जोशी 'अनल'

चोरवल कविता

हम अप्पन एगो चोरवल कविता कहित ही।
आधा रसखान के, बाकी मलखान के
बच्चल सुलेमान के
हीरो सलमान के बतिया के धरित ही।
हम अप्पन एगो चोरवल कविता कहित ही।

इंकर बतिया उनका में,उनकर बतिया इनका में,
ओने से उधार ले के ऐने नगद धंधा करित ही।
हम अप्पन एगो चोरवल कविता कहित ही।

नाना के दादा के मामू के फुफ्फा के
कविता सन्दूक भर पडल हे,
ओकरे में से खींच खींच, बतिया के फिंच–फिंच
सजाधजा के धरित ही
हम अप्पन एगो चोरवल कविता कहित ही।

अपने जब रखली जोगाड, बनजाउँ बड़का लिखाड़
खेलूँ बनके खेलाड,काहे ला सहित ही।
हम अप्पन एगो चोरवल कविता कहित ही। ■■

मगही / कविता

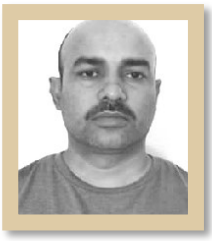

राजेन्द्र पाठक

❑ 40, नर्मदानगर कालोनी, खरगोन, (म.प्र.) 451001

❑ न्यूज़–18 ऑफिस, नायक कैम्पस, जेल रोड पूर्णिया (बिहार)

मुक्तक

अवधी / व्यंग्य

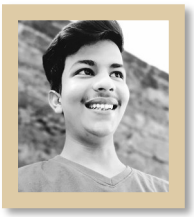

नितेश दिव्य

जब हमका लड़ेक अकेलेन है, फिर कउन जरूरत साथी के।
अबकी करब सामना तगड़े से, हम छप्पन इंची छाती के।
का गठबंधन तुम ना करिहौ यू, सुनतै सइकिलिहा बोलि परा,
जो चूंटी काटे मरि जात होय, का मतलब है अस हाथी के।।

खुद का विद्वान जो मानत हो तव मूरख कइहाँ घेरव न।
वाकयिम बात कय पक्के हव तो बातन से मुंह फेरव न।
जब नाय आस्था दिल मा है, काहे पूजा कय ढोंग करव,
आये हव जब हरि दर्शन का हरि छोड़ हरेरी हेरव न।।

आपस मा हमका तुमका, हर बार लड़ावत बाबू जी।
नेतन पर कीचड़ उछलै, यू रोज मनावत बाबू जी।
कहाँ धरी अतनी अक्किल, संसद मा बइठे लोगन के,
नेता हैं बिल पास करत, सरकार चलावत बाबू जी।।

■■

❑ सिपहिया हुलास, नन्दवल, फखरपुर, बहराइच (उ.प्र.)

बरसत पूस

अवधी / कविता

विनय विक्रम सिंह

भोर दुवारे लिहे खरहरा, झारै रतिया रंग।
ब्यालै चिरई पखना ख्वालो, फिरो बयरिया संग।1

सुर्ज भवा नेउतहरी जइसा, कुहरा बीच लुकाय।
धुंध गरेरे चूल्हा–चकिया, आगिउ लुकि–लुकि जाय।2

पाला जकड़िस दिनु कै घुटुवा, बइठा तपता बाल।
किरैं दाँत बररि के पूसौ, घामौ बिसरा चाल।3

बदरी–बदरी नीमि सुहावै, मोशतियहरी भै ओस।
धुंध मोहारे रुइ कस फाहा, भ्वारौ भै मदहोस।4

देखि सोन जस फूली सरसों, सुरजौ जरि भकुसाय।
लहकै पियरी पहिरे भुइँया, कजरी रही सुनाय।5

ठिठुरै सवन चिरई बुड़की ले, थिर भा अकड़ा ताल।
बिकट जाड़ सिसियावै अपुनौ, फिरहुँ बजावै गाल।6

■■

❑ 1989, वार्ड–17, अरुण विहार, सेक्टर–37, नोयडा (उ. प्र.)

नई पीढी

हाड़ौती / कवित

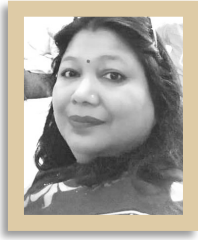

प्रीतिमा पुलक

बड़ा बुढियार सहमा बैठ्या छै
देख रैया छै
मीलां मील दूर जाती नुईं पीढ़ी ने
संम्भाळ रैया छै विचारां री गठरियां ने
खंगाल रैया छै अन्तस् का खुणा
हाथां मं संस्कारां की
झीणी सी डोरी थाम्यां
कंस्यां रोकां
कुण कुण ने
कद कद टोकां
संस्कारां की डोर तोड़ फकाणति
रीवांजां रो मोळ झुठलाती
मनखपणा सूं दूर होती
घणा पढ़या लिख्या
दिमागदारां की टोली ने
जो फरक न कर सके
काईं कुरीति छोड़ा
काईं संस्कार अपनावां
बुढियार चसमां का
कांच पोंछ पोंछ देखे छै
नुया जमाना री सभ्यता
जो
न अठी की री न वठी की
बीच की झोलां मं
तनाव
दुःख
मं तरती उतरती
नुईं पीढ़ी जो दोड़याँ जारी छै
बस दोड़याँ जारी छै।

■■

❑ अध्यात्म, C–1 कपिलवस्तु कॉलोनी
पाटन रोड, झालावाड़ (राजस्थान)

अशोक लव की सामयिक लघुकथाएँ

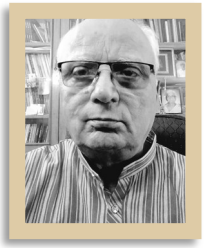

अशोक लव

निश्चित क्या है

लाखों मर चुके थे। हर की पौड़ी पर कुंभ–स्नान जारी था। स्नान के पश्चात् संत अखाड़े में लौट आए थे।

महामंडलेश्वर चिंतित थे। शिष्य ने पूछा– ''क्या बचेंगे?''

महामंडलेश्वर बोले– ''हो सकता है!''

शिष्य ने कहा– ''गुरुवर, निश्चित बताएँ!''

महामंडलेश्वर ने दीर्घ श्वाँस लिया। फिर पूछने लगे– ''तुम्हीं बताओ, निश्चित क्या है?'' ■

असहाय न्यायालय

कोरोना के कारण राजधानी में हाहाकार मचा हुआ था। अस्पतालों में बेड नहीं थे, ऑक्सीजन नहीं थी। लोग मर रहे थे। न्यायालय में बहस चल रही थी। दो न्यायाधीशों की बेंच वरिष्ठ अधिवक्ता रागिनी चौधरी की याचिका पर विचार कर रही थी।

रागिनी चौधरी का मोबाइल बजा। मोबाइल बंद करके वह कहने लगी– ''सर, इस बहस को यहीं रोक दें। मैं अपनी याचिका वापिस लेती हूँ। अब आप क्या, कोई भी कुछ नहीं कर सकता। मैं हार गई सर, मैं हार गई।'' कहकर वह फूट–फूटकर रोने लगी। एक जूनियर एडवोकेट उसे संभालने लगे। दोनों न्यायधीश दंग रह गए। रागिनी चौधरी को आज तक किसी ने इस प्रकार भावुक होते नहीं देखा था।

''रागिनी जी, क्या हुआ? बताइए तो सही !'' न्यायमूर्ति भसीन ने पूछा। रागिनी चौधरी ने साहस जुटाया। वह रुँधे गले से कहने लगी– ''सर, छोटे भाई का निधन हो गया है। उसे बेड नहीं मिल सका, ऑक्सीजन नहीं मिल सकी। उसने दम तोड़ दिया है। अभी–अभी भाभी का फ़ोन आया था। मैंने भाई को आश्वासन दिया था कि डॉक्टर लाख मना कर दें, न्यायालय अभी जिंदा हैं। मैंने उसकी ओर से याचिका दी थी कि न्यायालय उसे बेड और ऑक्सीजन उपलब्ध करा देगा। सर, मैं हार गई ! मैं भाई को बचा नहीं सकी।'' कहकर वह रोते–रोते कुर्सी पर बैठ गई।

कमरे में सन्नाटा पसर गया। दोनों न्यायाधीशों की आँखें भर आईं। न्यायामूर्ति भसीन कहने लगे– ''रागिनी जी, आप नहीं हारीं, हम हार गए हैं, देश हार गया है, व्यवस्था हार गई है!''■

अपवाद

ऋतु के अस्पताल से डिस्चार्ज होने से पहले एक लाख रुपए का बिल जमा कराना था। परितोष तीन लाख पहले दे चुका था। उसने इतने रुपयों की व्यवस्था कैसे की थी, वही जानता था। उसके समक्ष सगे–संबंधियों के चेहरे घूमने लगे। जिन–जिनसे सहयोग माँगा, सबने बहाने बना दिए। उसने सुना था कि संकट में सगे–संबंधी तक मुँह मोड़ लेते हैं। देख रहा था।

उसे लगा सब दरवाजे बंद हो चुके थे। एक ही विकल्प बचा था। ऋतु के आभूषणों को बेचना! वह प्रातः आभूषण ले आया था। वह जानता था ऋतु को आभूषणों से भावात्मक लगाव था। प्रत्येक पत्नी को होता है। वह मित्र अतुल की प्रतीक्षा कर रहा था। उसे ऋतु के पास बिठा कर उसने आभूषण देने जाना था।

तभी यशिका आ गई। उसके बॉस यशवंत की पत्नी थी। वह कुछ देर तक ऋतु से बातचीत करती रही। फिर परितोष को कमरे से बाहर ले आई लाकर कहने लगी– ''परितोष जी, भगवान का शुक्र है ऑपरेशन सफल हो गया है। फर्स्ट स्टेज पर ही कैंसर का पता चल गया था। मेरी छोटी बहन के कैंसर का पता ही नहीं चला। ऑपरेशन कराने के बावजूद बच न सकी।'' कहते–कहते यशिका की आँखें भर आईं। फिर स्वयं पर नियंत्रण रखते हुए कहा– ''मैं जानती हूँ ऑपरेशन और अन्य उपचार पर बहुत खर्च आ गया होगा। यशवंत जी ने बताया था। यह दो लाख मैं अपनी ओर से लाई हूँ। रख लें। मैं अपनी बहन को तो बचा नहीं सकी थी, ऋतु भी बहन के समान ही है।''

परितोष को लगा भगवान यशिका के रूप में सामने खड़े थे।■

बारी–बारी

पहली तारीख थी। शुभदा ने रात को ही तैयारी कर ली थी। एक बैग में कपड़े आदि रख लिए थे। दूसरे छोटे बैग में साबुन, तेल, पेस्ट, ब्रश आदि रख लिए थे। बैग पकड़े वह ऊपर की मंज़िल पर जाने वाली सीढ़ियाँ पार कर रही थी। सहसा वह अपनी दशा पर मुस्करा दी।

उसने बेल बजाई। बड़ी बहू प्रोतिभा ने दरवाज़ा खोला। सास को देखकर चकित होकर बोली– ''अरे, माँ जी! हमें तो स्मरण ही नहीं रहा पहली तारीख है! आइए–आइए !''

शुभदा की अब एक महीने के लिए बड़े पुत्र आनंदो के यहाँ रहने की बारी थी। ■

मोह के धागे

पद्मजा प्रसन्न थी। घर की घुटन और चौबीसों घंटो की चिक–चिक से छुटकारा मिल गया था। अब न बहू के व्यंग्य बाण थे, न पुत्र प्रभाकरन के उपेक्षा भाव थे। वह खिड़की से बाहर देखती है। लॉन की हरियाली, खिले गुलाब और पारिजात के पुष्पों का सौंदर्य मन–मस्तिष्क में ताज़गी भर देता है। उसने निर्णय लेने में विलंब कर दिया था। बेकार ही मोह–माया ममता में पड़ी रही। जब प्रभाकरन और बहू ने ही संबंधों के धागे तोड़ डाले थे तो फिर पोते–पोती के मोह में क्यों पड़ी रही ?

उसने ठंडी साँस ली। मोह के धागे बहुत मज़बूत होते हैं।

उसने ठंडी साँस ली। मोह के धागे बहुत मज़बूत होते हैं। फिर भी तोड़ने ही पड़ते हैं। जब तक देह रहती है, मोह–ममता बनी ही रहती है। जीवन में जब–जब निर्णय करने पड़ें, कर लेने चाहिएँ। स्थगित नहीं करने चाहिएँ। वह कितने वर्ष इसीलिए पीड़ा और अपमान सहती रही थी। प्रभाकरन ने फ़्लैट अपने नाम करा लिया था। उसमें रहे। मैंने मरने के पश्चात् कौन–सा अपने साथ ले जाना था! मेरे बाद भी उसी का होना था। और किसी से हो न हो, संतान से बहुत अपेक्षा रहती है। यह अपेक्षा ही पीड़ा देती है।

वह अब अपनी इच्छा से जी रही थी। प्रिंसिपल के पद से सेवानिवृत्त हुई थी। वृद्धाश्रम के मासिक खर्चों के पश्चात् भी बीस हज़ार बच जाते थे। सारी पेंशन लेकर भी प्रभाकरन सिर पर सवार रहता था। अब उसका अपना जीवन था, बंधनहीन!

''पद्मजा, चलो लंच का समय हो गया है।'' ललिता ने आकर कहा। वह उठकर तैयार होने लगी।

उसे लगा उसके जीवन में जीवंतता लौट आई थी। ■

भयभीत

राघव हड़बड़ाकर उठा। आहट सुनकर तन्वी भी उठ गई। उसने लाइट जलाई। सामने पति को बदहवास–सी स्थिति में बैठे देखकर घबरा गई। ''क्या हुआ?'' उसने पूछा।

''श्मशान घाट में लकड़ियाँ समाप्त हो गई हैं। तुम्हारा दाह–संस्कार कैसे होगा?'' परेशान राघव इतना ही कह पाया था। तन्वी ने भयभीत होकर पति को झिंझोड़ते हुए कहा– ''क्या कह रहे हो? मैं तुम्हारे सामने बैठी हूँ।''

राघव ने आँखे फाड़कर तन्वी को देखा। उसने तन्वी को गल लगाया और फूट–फूटकर रोने लगा।

तन्वी ने उसे ढाढ़स बँधाया और कहने लगी– ''दिन भर कोरोना से मरने वालों के समाचार सुनते रहते हो। श्मशान घाटों में शवों के अंबार लगने के समाचार सुनते रहते हो! तुम्हें मना करती रहती हूँ। वही बातें सपनों में आ रहीं होंगी। न जाने मरा कोरोना कब मरेगा ? लाखों के प्राण तो ले चुका है।''

दोनों रात भर सो न सके। ■

पिता जी की अलमारी

हम भाई–बहनों में से किसी का साहस नहीं होता था कि कोई पिता जी की अलमारी को हाथ लगा जाए। वे अलमारी में प्रत्येक वस्तु संभालकर रखते थे। उन्हें पता होता था कि कौन–से पेपर कहाँ रखे थे, कौन से कपड़े किस शेल्फ़ में थे। माँ जी जीवित थीं तो वे भी उनसे पूछकर ही अलमारी को हाथ लगाती थी। माँ जी के निधन के पश्चात् केवल पिता जी उसे खोलते थे।

पिता जी के निधन के पश्चात् प्रतीक ने आज उनकी अलमारी खोली थी। ऊपर के शेल्फ़ से प्लास्टिक कवर में लिपटा पैकट आ गिरा प्रतीक ने उसे उठाकर खोला। वह आश्चर्यचकित रह गया। उसमें उसकी स्कूल यूनिफार्म थी। उस पर स्लिप लगी हुई थी– 'प्रतीक ने बारहवीं कक्षा उत्तीर्ण कर ली है। वह अब यह यूनिफार्म नहीं पहनेगा। देखते ही देखते वह कितना बड़ा हो गया है!'

उसे ऊपर के शेल्फ़ से झाँकती एक और यूनिफार्म दिखाई दी। उसने उस पैकेट को उठाकर खोला उस पर स्लिप लगी हुई थी– 'सुविदिता अब बड़ी हो गई है। अब उसे के.जी. की यह यूनिफार्म पूरी नहीं आती।'

पिता जी का नया रूप प्रतीक के सामने था। उनके हृदय में उसके और बहन सुविदिता के प्रति इतना प्रेम था, उसने इसकी कल्पना तक नहीं की थी। यूनिफार्म पकड़े वह वहीं बैठ गया। उसकी आँखों से बहते आँसू थमने का नाम नहीं ले रहे थे। ■

दो ईमानदार

उद्योगपति तपनदास चिंतित थे। कोरोना के कारण अस्पतालों में ऑक्सीजन समाप्त हो रही थी। अनेक रोगी दम तोड़ चुके थे। रेमडेसिविर इंजैक्शन कहीं नहीं मिल रहा था। दोनों की खूब ब्लैक हो रही थी। उनका इकलौता पुत्र अस्पताल में था। डॉक्टर ने ऑक्सीजन का तुरंत प्रबंध करने के लिए कहा था। रेमडेसिविर इंजैक्शन का भी प्रबंध कर लेने का परामर्श दिया था। उन्होंने अपने कर्मचारी मलय को दोनों का प्रबंध करने सुबह से भेज रखा था। परेशान होकर वे इधर से उधर टहल रहे थे।

तभी मलय का फोन आया– ''सर, ऑक्सीजन और इंजैक्शन दोनों का प्रबंध हो गया है। यह सेल्समैन सत्तर हजार माँग रहा है। आपसे बात कराऊँ ?''

''कुछ कम कराने का प्रयास कराओ। नहीं माने तो ले लो। लेकर सीधे अस्पताल पहुँच जाना'।' तपनदास ने कहा।

मलय सेल्समैन से मोलभाव करने लगा। सेल्समैन एक पैसा कम करने के लिए तैयार नहीं हुआ ।

मलय ने लगभग गिड़गिड़ाते हुए कहा, ''भैया, मैं तो सेठ साहब का नौकर हूँ। सुबह से ऑक्सीजन और इंजैक्शन के लिए धक्के खा रहा हूँ। कुछ मेरा भी कल्याण कर दो।'' सेल्समैन हँस पड़ा। फिर कहने लगा– ''तुम भी क्या याद करोगे, साठ हज़ार दे दो। दस हज़ार तुम रख लो। हाँ इसी तरह काम दिलाते रहना।'' ■

मेरे शहर के बच्चे

कोई नहीं जानता कौन बचेगा और कौन मरेगा? बच्चे भी नहीं जानते। वे घर में बंदी हैं। खिड़कियों से झाँकते हैं। उनकी सहमी आँखों में अजीब–सा भय है। उन्हें लगता है उनकी कहानियों का राक्षस जंगल छोड़कर शहर की सड़कों पर निकल आया है। जो सड़क पर आता है, वह उसे खा जाता है।

उनकी आँखों में इस राक्षस का भय तैरता है। वे मरना नहीं चाहते।

बच्चों ने हठ करना छोड़ दिया है। वे चुपचाप माता–पिता का कहना मान लेते हैं। वे पार्क में खेलने का हठ नहीं करते। वे मॉल में घुमा लाने की फ़रमाइश नहीं करते।

मुझे लगता है वे बच्चे नहीं रहे, वे पिता की भाँति प्रौढ़ हो गए हैं। ■

❑ 363, सूर्य अपार्टमेंट, प्लॉट नं.–14, सै.–6, द्वारका, नई दिल्ली–110075 / मोबाइल–91 8920608821

लोट्या बिन पैंदा का

मालवी / कविता

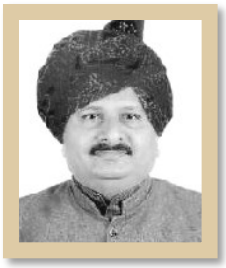

राजेश भंडारी 'बाबु'

मालवा में लोट्या घणा होवे है उपयोगी,
सब बापरे इके कई गृहस्थ ने कई योगी,
उपर से चोऊंगली पकड़ो तो जाव नदी नाला,
गलो पकड़ो उको तो दिखे पाणी पिण वाला,
पूजा में रखो इके तो यो देवता बनि जावे,
और बिना ईका कोई स्नान नि करी पावे,
कोई पैंदा वाला और कोई बिन पैंदा होवे,
राजशाही में भी इनकी घणी निंदा होवे,
जयडी फायदों देखे जदेज वयडी रडकी जावे,
सच्चाई बोलो दो तो जदेज भड़की जावे,
जीके देता था पाणी पी पी के वि गाळी,
अबे उनिज पार्टी का वि बनी गया माळी,
गिरगिट की तरे वि बदली रिया है रंग,
कोई कई करे आखा कुवा में पड़ी है भंग,
पराकास्ठा है इन्सानी जमीर का पतन की,
मठ्ठो डाली रिया है इ जड़ में वतन की,
समझो फरक इनका बार बार लड़कने में,
घर बैठाओ जो लग्या है मलई सुड़कने में।

■■

❑ महावीर नगर, इंदौर (मध्य–प्रदेश)

मामा का गांव चलागां

मालवी / कविता

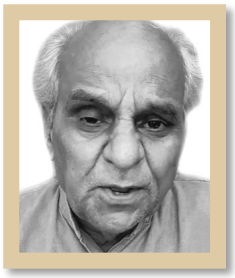

नरेन्द्र मांडलिक

छुट्टिनां में मामा गांव चलागां।
ठंडी–ठंडी अमुआ की छांव चलागां।

पकी–पकी केरी ना को पियागां रस
एक दो तीन नी आखी दस की दस
हिली मिली के साथ पांव चलागां।
छुट्टिनां में मामा का गांव चलागां।

नानी बनावेगी हलवो'–पुरी–खीर
न्हाने के जावांगा नदिया का तीर
माता दरसन के बैठी के नांव चलागां।
छुट्टिनां में मामा का गांव चलागां।

रामू–श्यामू–गोलु–कालू मित्र मिलेंगा
नानापण की याद ना का चित्र मिलेगा
खेंड.ापति अखाड़ा में दाव चलागां।
छुट्टिनां में मामा का गांव चलागां।

■■

❑ दिगठान, धार, (म.प्र.)
मो.–8889718891

हमर बीया

मैथिली / कविता

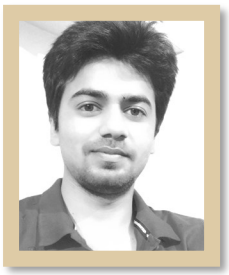

रवि झा

ओना तँ छी हम अकिंचन,
परंच अई हमरा थोड़े बीया,
हमर नितांत अप्पन बीया,
कल्पना रूपी सजीव बीया,
वेरि–कुवेरि,जखन–तखन,
दई छी ओकरा छींट,
जीवनक अनुभव सँ
दई छी पटाय,
जे बइन जाइछ गाछ,
विचार रूपी सजीव गाछ।

हमर बात में नहि भेटत
दर्शनिकक दर्शन,
महापुरुषक बात सन
कोनो प्रकारक आकर्षण,
वा भाषा वैज्ञानिक जकाँ
पूर्ण व्याकरणिक शुद्धता।

मुदा ई छी हमर अभिव्यक्ति,
एकटा आमक
साधारण अभिव्यक्ति,
जकरे फ'ल अछि दुनूं–
हमर विचार सँ
अहाँक सहमति आउर असहमति।

■■

❑ मधुबनी, बिहार

प्रीत की रीत पुरानी

कनौजी / कविता

डॉ. प्रखर दीक्षित

उलझी अलकों का अल्हडपन, गौरांग बदन द्युतिमानी है।
अनुहार शुभांगी रमणप्रिया रतनार दीठि संधानी है।
आरोह वयस अक्षत वृत्ती, सुकुमारि सुलज्ज सुपावनि तिय,
मृगनैनी मृदुबैनी अंगना सत प्रखर बुद्धि गुणखानी है।।

प्रणयन बिन प्रीत कहाँ संभव, बालात करै नादानी है।
होवै तो होय बिना समुझै, पथ प्रेम में प्रखर रवानी है।
संकट अतिशय पै लक्ष्य गहे, परवाह नहीं हिय प्रेम खरो,
हिय प्रेम बिना नर ठूँठ मना, यह प्रीत की रीत पुरानी है।।

नैना उरझत टूटें परिजन जुड जाए जा प्रीत अनूठी है।
असुरवृत्ति हिय गाँठ पड़े कहें प्रीत जवानी झूठी है।।
परिणति परतीत की श्रेष्ठ जहाँ, सर्वस्व समर्पण भाव रहे,
यदि सफल रहा तो ईश्वर वर, वर्ना किस्मत ही फूटी है।।

■■

❑ फर्रुखाबाद (उत्तर प्रदेश) / मो–9044393981

वृक्षारोपण अब शुरू करो

हरियाणवी / कविता

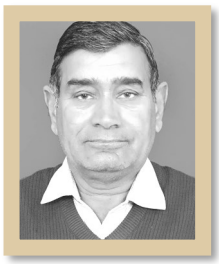

पृथ्वी सिंह बैनीवाल बिश्नोई

धरती रा रंग हरा हो ज्यासी,
थे वृक्षारोपण अब शुरू करो।
डांगर ढ़ौर निहाल हो ज्यासी,
थे वृक्ष लगाना सब शुरू करो।।

वृक्ष काटणिया थक ज्यासी,
थे वनस्पति बचाणी शुरू करो।
ए वन माफिया सुधर ज्यासी,
थे वन रा संरक्षण शुरू करो।।

खुद पेड़ काटणा बंद करो,
वृक्ष तो खुद पनप ज्यासी।
बेटी अर वृक्ष बचा पालोला,
तो कष्ट सृष्टि रा कट ज्यासी।।

वृक्षदेव रा महत्व समझ्यां ही,
रूंखा संरक्षक संवर ज्यासी।
पर्यावरण प्रेमी जाग ज्यासी,
भगदड़ दुष्टां में मच ज्यासी।।

रूंख राखणहार होय रेवोला,
आक्सीजन कमी हट ज्यासी।
जे मेहनत से वृक्ष लगाओ ला,
कष्ट प्रदूषण रो कट ज्यासी।।

हकीकत रूंख री समझ्यां ही,
शहीदां रा माण बण ज्यासी।।
मत वन्य सम्पदा बर्बाद करो,
देश नुकसांण सूं बच ज्यासी।।

जे थे नेम धरम पर चालोला,
धरा माँ रो रंग बदल ज्यासी।
'पृथ्वीसिंह' वीरगति बड़ो काम,
वन्य संपदा रक्षक आ ज्यासी।। ■■

❑ ॐ विष्णु निवास, 313, से.–14, हिसार (हरियाणा)

ସମୟ ବୁଝେନା

उड़िया / कविता

वैद्यनाथ पण्डा

ସମୟ ବୁଝେନା ଭଲ ଅବା ମନ୍ଦ
କର୍ମ ନେଇ ଫଳ ଦିଏ
ସେହି ଏକା ଧନ୍ୟ କର୍ମଫଳ ଭୁଲି
ନିଜ କର୍ମ କରିଥାଏ
ସମୟ ବୁଝେନା..... ॥

ହାଏରେ ମଣିଷ ନହୁଅ ତୁ ଦାସ
ନିଜ କର୍ମ ଚାଲି କରି
କିଏ ଜାଣେ କେବେ ଖୋଲିଯିବ କାହା
ବନ୍ଧା ଥିବା ଭାଗ୍ୟଡୋରି
ଭାଗ୍ୟ ସାଧେନାହିଁ ଦାଉ କାହାପରେ
ନିଜ କର୍ମ ସାଧୁଥାଏ
ସତ କୁହଥରେ ଚାଲି ନପାରିଲେ
ବାଟର କି ଦୋଷ ଥାଏ
ସମୟ ବୁଝେନା..... ॥

ନିୟତିର ଗତି ସମୟ ଅଟଇ
ଅତି ଯେ ନିଷ୍ଠୁର ସେଇ
ନଥାଏ ତାପାଖେ ପ୍ରିୟାପ୍ରିତୀ କିଛି
କେହି ନୁହେଁ ତାର ଭାଇ
ଧର୍ମ ନିକିତି ରେ ତଉଲେ ସେ ନିତି
କର୍ମ ନେଇ ଫଳ ଦିଏ
ସତ୍କର୍ମ କରିଲେ ଦିଏ ବିଭୁ ପାଦ
ଅସତକୁ ଶାସ୍ତି ଦିଏ
ସମୟ ବୁଝେନା.....॥

କିଏ ଜାଣେ ଏଠି କେତେବେଳେ କାର
ଜୀବନ ଦୀପ ଲିଭିବ
କିଏ କେମିତିକା ଗଢ଼ିଛି ଜୀବନ
ଗଲା ପରେ ଜଣାଯିବ
ଭଲମନ୍ଦ ବାଣୀ ଗଲାପରେ ଜାଣି
ଦୁନିଆଁ ଲୁହ ଝରାଏ
କରିଥାଏ ଯିଏ ଭଲ କର୍ମ କିଛି
ସମୟ ତାକୁ ବଞ୍ଚାଏ
ସମୟ ବୁଝେନା..... ॥ ■■

समय बुझेना

समय बुझेना भल अबा मंद
कर्म नेइ फल दिए
सेहि एका धन्य कर्मफल भुलि
निज कर्म करिथाए
समय बुझेना.....।।

हाएरे मणिष नहुअ तु दास
निज कर्म चाल करि
किए जाणे केबे खोलिजिब काहा
बंधा थिबा भाग्यडोरि
भाग्य साधेनाहिं दाऊ काहापरे
निज कर्म साधुथाए
सत कुहथरे चालि न पारिले
बाटर कि दोष थाए
समय बुझेना.....।।

नियतिर गति समय अटइ
अति जे निष्ठुर सेइ
नथाए तापाखे प्रियाप्रिती किछि
केहि नुहें तार भाइ

धर्म निकिति रे तउले से निति
कर्म नेइ फल दिए
सत्कर्म करिले दिए बिभु पाद
असतकु शास्ति दिए
समय बुझेना.....।।

किए जाणे एठि केतेबेले कार
जीबन दीप लिभिब
किए केमितिका गढ़िछि जीबन
गला परे जणाजिब
भलमंद बाणी गलापरे जाणि
दुनिआँ लुह झराए
करिथाए जिए भल कर्म किछि
समय ताकु बंचाए
समय बुझेना.....।।
■■

❑ अबदलपुर, जाजपुर (उड़िशा) / मो.– 9439854199

सिरमौरी / कविता

गीत

अनन्त आलोक

भोली पोड़ी नाथी एल केजी दी,
एबी सीडी लिखणी आओं।
बातो लाओं हामे अंगरेजी दी।।

कोबी होसो कोबी रुओं बिंदी दी,
नाश मारा भाषा रा नेटे।
तुमे अंगरेजी लिखो हिंदी दी।1

काज्जी भेज राखी एसमेस दी
ऑन कोरी नेट दाड़या।
मेरी ओट्की री जान तेस दी।

आंदे–जांदे री बे मितरी म्हारी,
जिओ पांदे लोइंदी नाथी।
नेटो पांदे री बे मितरी म्हारी।2

पात्ते पिपलो रे लाइ री भुम्बो,
पोण आई बिना पाणीये।
झाड़ी पाई मेरे आम्बो री टुम्बो।

चाली बागुरो बे बेगे डागुरी,
आम्बी छाड़ो आदमी झोड़े।
मोरे कोरोना ए ढेरो लागुरी।3

■■

❑ बायरी, सिरमौर
(हिमाचल–प्रदेश)

राजस्थानी / कविता

गजल

आशा पाण्डेय ओझा

नैणा रा ए घाट भँवर जी।
जोवै थांरी बाट भँवर जी।।

कूँ–कूँ केसर वाळी थाळी।
चंदन आळा पाट भँवर जी।।

कैरां पैरण कैरां ओढ़न।
थां बिन केड़ा ठाट भँवर जी।।

रेशम लागे लट्ठा जेड़ो।
मखमल लागे टाट भँवर जी ।।

कांकड़ जेड़ी सेजां लागे।
थोर सरीखी खाट भँवर जी।।

भूल्या बिसर्‌या किस बिध म्हाने।
बण ग्या कांई लाट भँवर जी।।

खूट रही रे साँस री सीसी ।
आओ अब भन्नाट भँवर जी ।।

■■

❑ उदयपुर, (राजस्थान)

डुंगरी / कविता

घणी याद आवे

संजय वर्मा 'दृष्टि'

बाबुल की
डेली उलांगते
ढोला की किनार पर
अटकी जावे आँसू
तुलसी क्यारी म से
झांकी के देखी री
आम इमली का झाड़ पर
बंधिया झूला
खुली जाता था
सावन म कदी
झूला होण ऐसो लगे
जैसे पूछी रिया हो
हमके छोड़ी के
का जइ री
बाबुल को अंगणों
बिलख रियो
बेटी की विदाई म

सहेली होण को मन
रोई री
इन सब से विदाई म
आखियाँ की कोर पर
थमिया आँसू
लुढ़की पड्या
साथ छुटियो
रिश्ता छुटिया
जो बंधिया था
आशा की डोर म
साथ छुटयों
जब सब की
याद आवेगा
झूला, संजा का गीत
फोटू देखी के
मन समझई लेवांगा
घणी ज याद आवेगा तो
मिलने जरूर जावांगा। ■■

❑ 125 शहीद भगत सिंह मार्ग, मनावर, धार (म.प्र.)

मेरा कवि मन कुछ और चाहता था

हिंदी / साक्षात्कार

डॉ. सुमन सिंह

नवाबों के शहर लखनऊ में जन्मी रचना श्रीवास्तव जी बहुआयामी व्यक्तित्व सम्पन्न हैं। विज्ञान विषय में स्नातक करने के बाद साहित्य में गहरी रुचि होने के कारण आपने कानपुर विश्वविद्यालय से हिंदी साहित्य में परास्नातक किया। परबाबा स्वतंत्रता सेनानी और अवधी साहित्य के ख्यात कवि थे। रचना श्रीवास्तव जी को अवधी भाषा के निकट परबाबा की विरासत ले आई थी तथा हिंदी साहित्य से अनुराग व समझ माँ से मिले संस्कारों का प्रतिफल है। रचना जी की पहली कविता बाल पत्रिका 'नन्दन' में प्रकाशित हुई थी तत्पश्चात् काव्य–लेखन में उनकी रुचि गहरी होती गई। अमेरिका जाने के बाद कविता का पहला मंच बना डैलस का रेडियो हम, तुम और श्रोता थे, समस्त डल्लास में बसने वाले भारतीय। इसके बाद वे रेडियो फन एशिया (डैलस), रेडियो सलाम नमस्ते (डैलस), रेडियो मनोरंजन (फ्लोरिडा) और रेडियो संगीत (हियूस्टन) में नियमित कविता पाठ कर चुकी हैं। अनुभूति, साहित्य कुंज, सृजन गाथा, लेखिनी, रचनाकर, हिंद–युग्म, हिन्दी नेस्ट, गवाक्ष, हिन्दी पुष्प, स्वर्ग विभा, हिन्दी मिडिया आदि कुछ प्रमुख पत्रिकाओं में रचना जी के लेख, कहानियाँ, कविताएँ संस्मरण और साक्षात्कार प्रकाशित हुए हैं। आप डैलस में रेडियो संचालक भी रह चुकी हैं और अभिनव वाद–विवाद प्रतियोगिता, लोक संगीत और नृत्य में भी अनेक पुरस्कार प्राप्त कर चुकी हैं। प्रवासी रचनाकारों में विशिष्ट स्थान कायम करने वाली रचना श्रीवास्तव जी के बहुआयामी व्यक्तित्व से अधिकाधिक परिचित कराने की कोशिश की है **डॉ. सुमन सिंह** ने इस बातचीत में।

रचना श्रीवास्तव
rach_anvi@yahoo.com

सुमन– सबसे पहले तो मैं यही जानना चाहूँगी कि अप. नी रचनात्मकता से आपकी पहली पहचान कब हुई, कब पता चला कि आप अपनी अभिव्यक्ति को शब्दबद्ध कर सकती हैं ?

रचना श्रीवास्तव– जब मैं छोटी सी थी तो कुछ भी अप. ने मन से बना कर गाती थी। मैं थोड़ी बड़ी हुई तो मेरी छोटी बहन दुनिया में आयी, उसकी उम्र और मेरी उम्र के बीच करीब बारह साल का अंदर है। मैं उसको सुलाती थी तो छोटी–छोटी कविताएँ लिखती और उसको गा कर सुनाती। मेरी बहन को बहुत अच्छा लगता। उस समय मेरी यह आदत बन गयी रोज उसके लिए कोई न कोई कविता लिखना और उसको सुनाना। माँ यह सब देखती–सुनती रही, उन्होंने ही जाना कि मेरे छोटे से मन में एक कवयित्री छुपी हुई है। उन्होंने मुझे बढ़ावा दिया मेरा उत्साह बढ़ाया और लिखने को प्रेरित किया मेरी एक बाल कविता नंदन में छपी तब मुझे लगा कि शायद मैं कुछ ठीक लि ख लेती हूँ। बस वहीं से लिखने का यह क्रम प्रारम्भ हो गया। मैं बड़ी होती गई और साथ ही कविता भी बड़ी होती गयी।यह आज तक नहीं जान पायी की मै कविता के साथ बड़ी हुई या कविता मेरे साथ।

सुमन– क्या प्रारम्भिक परिवेश लेखन कर्म में सहायक था ?

रचना श्रीवास्तव– मेरे घर में साहित्य पढ़ने का माहौल था। मेरी माँ जो स्वयं हिंदी की थी उन्होंने मुझे हिंदी साहित्य की बारीकियों को समझाया। हिंदी में बच्चों की जितनी किताबें थी सब घर पर आती थी। हम सभी भाई बहन को पढ़ने का बहुत शौक था। हम गर्मी की छुट्टियों में गांव जाते थे वहाँ मेरे परबाबा जी का एक बहुत बड़ा पुस्तकालय था। जब हम छोटे थे तो हमको वहां जाने की मनाही थी। मेरे परबाबा जी के स्वर्गवास के बाद मेरे बाबा जी की निगरानी में रहता था। जब मै बड़ी हुई कक्षा 6 या 7 में रही होंगी। तो बाबा जी ने स्वयं मुझे बुला कर वो पुस्तकालय दिखाया। वो दृश्य आज भी मेरी आँखों में बसा हुआ है इतनी किताबें थी कि क्या बताऊँ।

न जाने कितने अखबार थे। उस दिन मैं घंटों बैठ कर पढ़ती रही। श्री जवाहरलाल नेहरू जी और लाल बहादुर शास्त्री जी की चिठियाँ थीं जो उन्होंने मेरे परबाबा श्री रामचरित्र पांडेय जी को लिखीं थी। मेरे बाबा जी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे। वह जवाहरलाल जी और शास्त्री जी के साथ जेल भी गए थे। परबाबा जी बहुत बड़े कवि भी थे। उनकी S डायरियाँ अवधी कविताओं से भरी हुयी थी। वो सब देख कर मन बहुत प्रसन्न हुआ था। इसके बाद हर साल गर्मी की छुट्टियों में गाँव जाने की प्रतीक्षा रहती थी। जानती हैं आज मेरे खानदान में सभी कहते हैं कि मुझको कविता लिखने की प्रेरणा उनकी कविताओं को पढ़ कर ही मिली है।

विज्ञान पढ़ना मुझे बहुत अच्छा लगता था। मैंने पढ़ा और बहुत अच्छे तरीके से पढ़ा। पर मेरा कवि मन कुछ और चाहता था। मैं हिन्दी को बहुत गहराई से जानना चाहती थी, उसकी थाह पाना चाहती थी, इसलिए मैंने हिंदी विषय चुना। पर जितना पढ़ती गयी गहराई और भी बढ़ती गयी। आज भी मैं सीख ही रही हूँ। समाजशास्त्र एक ऐसा विषय है जिसको पढ़ने के बाद उसकी गहराई का पता चलता है। मुझे इस विषय में बहुत ही रूचि थी। इसलिए यह विषय चुना।

सुमन– लेखन के साथ–साथ आप मंच संचालन, संपादन और अध्यापन से भी जुड़ी हैं, इतने सारे जुड़ाव कभी एक–दूसरे से टकराते नहीं? आप इन सारे दायित्वों का समर्पित भाव से निर्वाह करने में खुद को कितना सफल पाती हैं?

रचना श्रीवास्तव– मैं एक साथ कई कार्य कर लेती हूँ, शायद इसीलिए मैं इन सभी कार्यों को अच्छी तरह कर पाती हूँ और यदि आपको काम करने में आनंद आता हो तो कार्य आसानी से हो जाता है। हाँ! थोड़ी मेहनत करती पड़ती हैं। कभी–कभी थोड़ा अधिक जागना पड़ता है। पर सब हो ही जाता है और फिर जब आपका परिवार आपके साथ हो तो कुछ भी हो सकता है। मंच संचालन, सम्पादन, अध्यापन ये सब एकदम अलग–अलग हैं। बस थोड़ा सा समय का ठीक बँटवारा करना पड़ता है। घर और काम के बीच सामंजस्य रख कर आगे बढ़ना होता है। मैं एक समय में कई कार्य कर सकती हूँ अतः काम हो ही जाता है। फिर मेरे पति और बच्चों का बहुत सहयोग रहा है वर्ना शायद मैं इतना सब कुछ न कर पाती। बचपन से मंच पर जाना, काम करना, अच्छा लगता था। बस वही शौक अभी तक चला आ रहा है। मंच पर जाते ही एकदम बदल जाती हूँ। सारी दुनिया अपनी–अपनी–सी लगती है। संपादन कार्य एक विशेष खुशी देता है और अध्यापन तो मेरे खून में है। जानती हैं क्यों ?

सुमन– जी जरूर जानना चाहूँगी। बताएँ प्लीज।

रचना श्रीवास्तव– क्योंकि सुमन ! माँ अध्यापिका थीं, मेरा जन्म भी शिक्षक दिवस पर हुआ था और मैंने अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद अध्यापन कार्य ही किया। अभी अमेरिका में भी वही कर रही हूँ।

सुमन– प्रवासवास का संयोग कैसे घटित हुआ ?

रचना श्रीवास्तव– मेरे पति अविनाश एक वैज्ञानिक है। अनुसन्धान करना उनको बहुत संतोष देता है। बस अपनी खोज को आगे बढ़ने के लिए वह यहाँ आ गये और मैं उनके साथ अमेरिका आ गयी।

सुमन– प्रवासवास ने आपकी रचनात्मक गतिविधियों को बाधित किया या कि नए आयाम दिए ?

रचना श्रीवास्तव– जब यहाँ आयी तो बहुत खाली–खाली लगता था। शांति भी कमाल की थी यहाँ। बेटी के स्कूल और इनके काम पर जाने के बाद मैं अकेली हो जाती थी। कविताएँ तो मैं बचपन से ही लिखती थी। अब समय था उनको परवान चढाने का। अविनाश ने कंप्यूटर पर हिन्दी लिखना बताया और मुझे अपने खाली समय का उपयोग करने का रास्ता मिल गया। मैं कविताएँ लिखती और अंतर्जाल पर उपस्थित सभी पत्रिकाओं में भेजती। मैं तो कहूँगी अमेरिका ने मेरी रचनात्मकता को नए आयाम दिए हैं।

सुमन– प्रेरक–शक्ति के रूप में किसे स्मरण करना चाहेंगी ?

रचना श्रीवास्तव– अपनी माँ को, जिसने मेरे हर कार्य में मेरा सहयोग दिया और सदा मुझे प्रोत्साहित किया। मेरे पिता जिन्होंने मेरी हर अभिलाषा को पूर्ण किया। या यूँ कह लीजिये कि मुझको बिगाड़ा। मेरा बहुत लाड किया। यह मैं इस लिए कह रही हूँ कि बचपन में जिस तरह आप को पाला जाता है, वही संस्कार, वही आत्मविश्वास पूरे जीवन भर आपके साथ रहता है। शादी के बाद पूरी दुनिया ही बदल जाती है। तो इस बदली दुनिया में मेरा सहारा बने मेरे पति अविनाश। उन्होंने सदा मुझे कुछ नया करने की प्रेरणा दी। और हर परिस्थिति में मेरे साथ खड़े रहे।

सुमन– आपके प्रिय साहित्यकार कौन हैं ?

रचना श्रीवास्तव– मुझे सभी को पढ़ना–सुनना अच्छा लगता है। जो कोई भी जो नया और अच्छा लिखता है मेरा प्रिय बन जाता है।

सुमन– आपका रचना–संसार विविधता से भरा है, कविता, कहानी, हाइकु, ताँका, संस्मरण, साक्षात्कार, बाल–कथा सभी विधाओं से आपकी लेखनी समृद्ध है, जानना चाहती हूँ कि इनमें से आपकी प्रिय विधा कौन सी है ?

रचना श्रीवास्तव– सभी विधाओं में लिखना मुझको बहुत अच्छा लगता है। भाव बतातें है उनको किस विधा में ढालना है। बस उसी विधा में लिख देती हूँ। बच्चों का साहित्य बहुत ही इंद्रधनुषी होता है। मैंने अपने बच्चों के लिए कहानियाँ लिखनी शुरू की थी क्योंकि हर रात उनका अनुरोध होता था, माँ कहानी सुनाओ। अब इतनी कहानियाँ कहाँ आतीं थी तो अपने मन से कहानी बनाती और उनको सुनाती। इस तरह से बच्चों की कहानियाँ लिखी गयीं। अमेरिका आकर अंग्रेजी की गुलाम–सी बन गयी थी। अब करती भी क्या, सभी अंग्रेजी जो बोलते थे। तो मुझे लगा साक्षात्कार अंग्रेजी में तो सभी लेते हैं क्यों न मैं हिंदी में साक्षात्कार लूँ। बस इस सोच के साथ साक्षात्कार लेने का सिलसिला निकल पड़ा।

सुमन– आपने हाइकु का अवधी में अनुवाद किया है जो काफी चर्चित है। इस अनुवाद का विचार कैसे आया ?

रचना श्रीवास्तव– हाइकु के बारे में कोई मुझसे कुछ भी पूछता है तो मैं बस एक ही नाम लेती हूँ रामेश्वर कम्बोज हिमांशु। इनके कारण ही मैंने हाइकु लिखना शुरू किया था। इन्होंने ही मुझको इस विधा से परिचित कराया और इसकी बारीकियाँ भी सिखायीं।

मैं बस्ती जिले से ताल्लुक रखती हूँ। मेरे घर में मेरी दादी, माँ, पापा सभी आपस में अवधी में ही बात करते थे। इस कारण से मुझको अवधी बहुत अच्छी तरह से आती है। हाइकु लिखना तो जारी था ही, बस एक दिन मन में विचार आया की क्यों न इनका अनुवाद अवधी में किया जाय। जब अपना यह विचार आदरणीय भाई हिमांशु जी को बताया तो उनको बहुत अच्छा लगा। उनकी सहमति मिल गयी, बस अनुवाद अपने आप होते गए। जब मैं यह अनुवाद कर रही थी तो मुझको नहीं पता था कि यह कोई इतनी बड़ी बात है। पर बाद में सभी के स्नेह से लगा हाँ, कुछ अच्छा काम हुआ है शायद।

सुमन– आपने अपने–अपने क्षेत्र में प्रख्यात कलाकारों–रचनाकारों का साक्षात्कार लिया है, कैसा अनुभव रहा? कुछ विशेष अनुभव साझा करना चाहेंगी ? क्या इन साक्षात्कारों की कोई पुस्तक भी प्रकाशित हुई है ?

रचना श्रीवास्तव– जब आप किसी का साक्षात्कार लेते हैं तो आप उसके साथ उसके जीवन की यात्रा करते हैं। उसके अनुभवों से बहुत कुछ सीखते हैं। बस मैंने भी इस गंगा में डुबकी लगा दी। बहुत सीखा, फिर चाहे वह फिल्मी कलाकार हो, गायक हो या साहित्यकार हो। मैंने जिन लोगों के साक्षात्कार लिए हैं उनमे से जगजीत सिंह जी और आदेश श्रीवास्तव जी अब इस

दुनिया में नहीं हैं। पर उनकी आवाज़ आज भी मेरे पास है। इन सभी साक्षात्कारों की पुस्तक तो प्रकशित करनी है पर कब होगी पता नहीं।

सुमन– अपने अध्यापन कार्य से जुड़े कुछ विशेष अनुभव साझा करना चाहेंगी ?

रचना श्रीवास्तव– मैंने भारत में बहुत सालों तक शिक्षिका के रूप में कार्य किया है। बच्चों के साथ बिताये पल अनमोल हैं आज भी जब बच्चे मिलते हैं मन असीम आनन्द से भर जाता है। जब मेरे छात्र और छात्राएँ कभी फेसबुक पर मुझ को ढूँढ़ कर संपर्क करते हैं और कहते हैं कि आप हमारी सबसे अच्छी टीचर में से एक हो। अभी हाल ही में भारत के अखबार अमर उजाला में मेरे बारे में छपा था। तो मेरी एक छात्रा ने अपने बच्चे को दिखा कर कहा, देखो यह मेरी कंप्यूटर टीचर थीं। इतने सालों बाद भी यदि बच्चे आपको याद रखते हैं तो मुझे लगता है कि शायद मैंने अपना काम ठीक से किया होगा।

सुमन– कई समाचार पत्रों के लिए बतौर स्वतंत्र पत्रकार पत्रकारिता करती आयी हैं, वर्तमान पत्रकारिता की दशा–दिशा पर कोई टिप्पणी करना चाहेंगी ?

रचना श्रीवास्तव– कुछ ज्यादा तो नहीं कहना है, बस इतना कि जो भी दिखाएँ या लिखें, सच लिखें। समाचार को कहानी न बनाये, उसके तथ्य को न छेड़ें। वैसे हमारे बहुत से पत्रकार बहुत ही अच्छा कार्य कर रहे हैं। सभी को बधाई।

सुमन– लोकसंगीत और नृत्य में भी विशेष रुचि रखती हैं। कोई पसंदीदा लोकगीत जो आपकी स्मृतियों से कभी ओझल नहीं होता ?

रचना श्रीवास्तव– मेरी माँ अवधी के बहुत से गीत गाती हैं। उनका ही एक गीत है जिसमें लड़की अपने पिता से कहती है इतनी दूर मेरा विवाह कर के भूल गए। लोक नृत्य में पंजाबी और बंगाली, राजस्थानी लोक नृत्य बहुत पसंद है।

सुमन– नृत्य आपके लिए क्या है ?

रचना श्रीवास्तव– नृत्य मेरे लिए एक अभिव्यक्ति है। स्वयं को संतुष्ट करने का एक माध्यम है। लोक नृत्यों में एक इतिहास छुपा होता है अतः लोक नृत्य न कभी बासी होते हैं और न कभी मरते हैं।

सुमन– अब तक की सृजनात्मक–यात्रा से संतुष्ट हैं ?

रचना श्रीवास्तव– नहीं, बिलकुल भी संतुष्ट नहीं हूँ। जितना लिखना चाहिए, लिख नहीं पाती हूँ। भाव मन में आते हैं पर कागज पर उतर नहीं पाते। ऐसा नहीं है एकदम नहीं लिखती हूँ पर कम लिख पाती हूँ।

सुमन– स्वदेश अब कितना और क्यों आकर्षित करता है?

रचना श्रीवास्तव– देश अपना है और जो अपना है उसको कैसे भूला जा सकता है। आज भी, इतने सालों बाद भी, जब भी कोई त्योहार आता है तो सोचती हूँ देश में तो ऐसे होता था, ये करते थे। कहने का मतलब यादें जो मन की गहराइयों में बसी हैं, उन पर समय की गर्द नहीं पड़ी है। आज भी बरसातों में ठेले पर भुट्टे खाना, माँ के साथ दिवाली में दिए लगाना, सहेलियों के साथ रंग खेलना सब कुछ बहुत याद आता है।

सुमन– आजकल क्या लिख–पढ़ रही हैं ?

रचना श्रीवास्तव– कभी–कभी कोई कविता और हाइकु लिख लेती हूँ। एक कहानी बहुत दिनों से अटकी पड़ी है उसको पूरा करना है। बस और कुछ खास तो नहीं हो पा रहा है।

सुमन– भविष्य की क्या योजनाएँ हैं ?

रचना श्रीवास्तव– मैं बहुत दूर तक का सोचती नहीं हूँ। क्योंकि अपना सोचा होता कहाँ है तो काम आता जाता है उसको करती जाती हूँ।

सुमन– आपका बहुत–बहुत आभार इस आत्मीय बातचीत के लिए रचना 'दी'। मंगलकामना है कि आपकी रचनाधर्मिता उत्तरोत्तर उन्नत हो।

रचना श्रीवास्तव– आपका भी बहुत धन्यवाद सुमन। आपके सानिध्य में अतीत के कुछ जर्द पृष्ठ खुले, कुछ भूली–बिसरी मधुर स्मृतियाँ साझी हुईं। ■■

❑ एस–8/108, आर–1, डी.आई.जी. कॉलोनी, खजुरी, वाराणसी (उ.प्र.)

सर्जिकल स्ट्राइक

हिंदी/कविता

उत्पल डेका

सरहदें नहीं थीं
जैसी अब हैं
नदी रही थी उसकी
सीमा–परिसीमा।
सरहद के उस पार
लंबे इंतजार में बैठा फ्लामिंगो
इधर शपथ लिया हुआ वृक्ष।
एक खबर आती है
राजदूतावास से, और
कश्मीरा सिंह गिरफ्तार हो जाती है।

देश का विभाजन
साम्प्रदायिकता
फिर भी प्रवाहमान नदी की
खोज है जारी।

सरहद तोड़ उस अतीत के लिए
जहाँ सरहदें नहीं थी।

क्या सरहदें मिटा सकेंगी
दोनों पार के पदचिह्न

जिदंगी तो बस एक आर्ट गैलरी है
एक जंग है
आग की लपटों में राख हुए मकान
याद दिला देते हैं
बचपन के बंधन की।

शहादत की खबरें जब आती हैं
सिंदूरी माँग उजड़ जाती है।

'खोखरापारा'★ के हृदय में
कच्चे घावों का होता है चीत्कार
यह शत्रुवध का नया तरीका है
जहाँ सजता है जीवन
पर–मृत्यु तो अजेय है। ■■

★पाकिस्तान का एक गाँव

❑ हिंदी विभाग, राजीव गाँधी विश्वविद्यालय, रोनो हिल्स दोईमुख (अरुणाचल प्रदेश)

बाल पणै ब्याह

ढूँढाड़ी / कविता

बाबू लाल शर्मा 'बौहरा'

बाल पणै शादी करी, भटक गया मन मीत।
पढ़बो लिखबो छूटगो, आय लपेटै रीत।।

बेगा होगा टाबराँ, सेहत गई पताल।
आय जवानी पैल हीं, हुयो जीव जंजाल।।
मात पिता न्यारा करै, खाओ कव्है कमाय।
भूत भविश की सोचताँ, बर्तमान भी जाय।।
दौरो होगो जीवणो, भूल गया सब गीत।
बाल पणै शादी करी, भटक गया मन मीत।।

भैण भुवा का लाड़ सब, गयै कुआ कै पींद।
चार दिनाँ को चानणों, बणै जिंदाड़ै बींद।।
म्हे डूब्या सो भौत छै, मान मँजूरी खाय।
अब सरकारी रोक वै, रोक समाज लगाय।।
रीत रीत मैं लुट गई, होती जे मन प्रीत।
बाल पणै शादी हुई, भटक गया मन मीत।।

बाल ब्याह अभिशाप छै, करो समाजी गाड़।
समय पाय शादी करो, बाल पणै नहिं लाड़।।
सत फेरा,सातूँ वचन, कर ल्यो सत संकल्प।
बाल ब्याह नै टालणो,कर ल्यो काया कल्प।।
रीत पुराणी भूलियो, देख जमाना गीत।
बाल पणै शादी हुई, भटक गया मन मीत।।

■■

❑ सिकंदरा, दौसा (राजस्थान)

गुर त्रावुन

कश्मीरी / कविता

बिंदिया रैना तिक्कू

कोताह मुशकिल धु गुर त्रावुन
गासु तुल्यन ओल बनावुन
सामानस सुत्य लोल मशरावुन
रीज़ गंड़न शीन सौंबरावुन

वीत प्यठ शुर श्वन्गुनावुन
लूकु गरन पान पुशुरावुन
ताखचॅन प्यठ मंदर सजावुन
ऑश गालुन पोयन बावुन

वतु प्रज़नावीन कथ अज़मावुन्य
गॉटन औथ शेछुय वातनावुन्य
सबुर करुन कदम ठॅहरावुन
मॅच सारुन नोत गर करुन

वुम्बीर फेरुन वतन मॅशरावुन
दूरॅर चलुन सॅकि पान छ्रावुन
बॅयि वथुन बांन्धव छान्डुन्य
शीनु' तयान्गलन नाट करुन

स्यठाह मुशकिल धु गरु त्रावुन
स्यठाह मुशकिल धु नॉव गरु करुन

■■

❑ जम्मू (जम्मू–कश्मीर)

نظم

उर्दू / कविता

बुशरा खातून

ہمارے اور تمہارے درمیان
اک نظم ہے
تم تک پہنچنے کی مسافت میں
جب پیر شل ہو جاتے ہیں
نظم آہستہ سے سہلاتی ہے

ہمارے اور تمہارے درمیان
مصرعوں کا طلسم ہے
جہاں پہنچ کر ہم بھول جاتے ہیں
گزشتہ سفر کی اذیتیں
اداس لمحوں کا سکوت
خوف ناک خوابوں کے سائے

کیوں کہ ہمارے اور تمہارے درمیان
نیند ہے
اک خواب ہے
اک نظم ہے---

■■

नज़्म

हमारे और तुम्हारे दरम्यान
इक नज़्म है
तुम तक पहुँचने की मसाफ़त में
जब पैर शल हो जाते हैं
नज़्म आहिस्तः से सहलाती है

हमारे और तुम्हारे दरम्यान
मिसरों का तिलिस्म है
जहाँ पहुँच कर हम भूल जाते हैं
गुज़िश्तह सफर की अजीय्यते
उदास लम्हों का सुकूत
खौफनाक ख़्वाबों के साये

क्योंकि हमारे और तुम्हारे दरम्यान
नींद है
इक ख़्वाब है
इक नज़्म है... ■■

❑ फैज़ाबाद (उ.प्र.)

स्यावक ब्या

कुमाउँनी / कविता

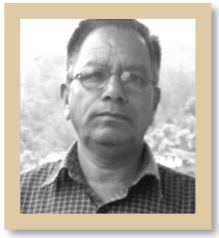

खुशाल सिंह खनी

घाम द्यो घाम द्यो स्यावक ब्या,
कुकुर बीराव बरेती ग्या।
उधली घाम उधली द्यो,
स्यावक ब्या यसै भ्यो।

बादव भीना उथकै जा,
घामुली दीदी यथकै आ।
भाल दा भाल दा जल्दी आ,
बरेती आ गई तूरी बजा।

हाथिक पूठि में बर ज्यू सवार
बाघ देखिबेर पड़ि गो टूटाट।
गुणील थमै राखौ लम्बै निशाण,
नस्सै में बानर बाट में गीनाण।

घाम द्यो घाम द्यो स्यावक ब्या,
कुकुर बीराव बरेती ग्या।।

गधा बजूण फैगो मशकबीन,
जैकैं सुणिबेर आगै नीन।
गधा गधा त्यर कै न बाजन,
त्यर पूठि में बोजै छाजन।

मूषक पूठि में ब्योलि पीटार,
गीत गैण फै गयी चाड़ गीदार।
चीं चीं चूं चूं चीं चीं चूं चूं,
भाल दा कि तूरी बाजि धूरी तू।
भीकानक ढोल ढम ढम ढम,
बानरक नाच छम छम छम।

घाम द्यो घाम द्यो स्यावक ब्या,
कुकुर बीराव बरेती ग्या।। ■■

❑ ग्राम+पोस्ट– नैनी, अल्मोड़ा (उत्तराखंड) 263623

संदेश

कुमाउँनी / कविता

राजू पाण्डेय

अरे अगासि बादलो सुन
दूर उडी बॉर्डर तकै जा आओ
मैरो आँखा का आँसू लिजै
मेरा स्वामी का खुटा ध्वै आओ।

वौं जा बैर चुपचाप बरष्या
घड़घड़्यात अति जिन करिया
अगर उन सिया होला त
विनती भै, इंतजार तुम करिया।

जा बादलो संग, गौं की हवा
तू आपनो वीर चेलो देखि आये
वापसी में संग आपना सुन
स्वामी खुटा माटो लि आये।

एसिकै बगे मयाली हवा तू वां
उनुकै ठंडो लै जिन लागौ
जब ड्यूटी में तैनात हौला
आँखा उनुका जिन लागौ।

लिजा यौंकि खुशबु, मया लिजा
ल्म्बी उमरो आशीर्वाद दी आया
तुमु पर नाज छ हाम सबौकै
मेरौ यो संदेश तुम दी आया।
■■

❑ बगोटी, चम्पावत (उत्तराखंड)
वर्तमान में– यमुना विहार (दिल्ली)

मानवता दैण हैंजे

कुमाउँनी / कविता

भुवन बिष्ट

सबूंक आब बिगड़ी काम हैजो,
भारतक सारे दुणीं में नाम हैजो।

कथैं निं हो आब अत्याचार,
खुशहाली सबूंक ऐजो घर द्वार।
मानवता खूब तू दैण हैजे,
सबूंक मन में पैलिं ऐजे।

गौं–घर, शहर, देश–विदेश,
मिटजो सब जाग बै राग द्वेष।
नयी सोच नयी उमंग ऐजो,
प्रेम भाव सबूंक संग हैजो।

खुशियोंक भरिं जो भकार,
स्वैणा सबूंक हैंजो साकार।
सब जाग बै मिट जो अन्यार,
हैजो मानवताकिं जै जयकार ।
मनूं में पसिं दौकारा दूर न्हैंजे,
भौल बाट हिटणौक साहस दिजे।

मानवता खूब तू दैण हैजे,
सबूंक मन में पैलिं ऐजे।।
■■

❑ मौना (रानीखेत), चौकुनी, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)

गज़ल

देवघरिया / कविता

डॉ. कौशिक मिश्र

जनता रैत–दिन फाटे छै
सरकारैं कफन बाँटे छै।

मचलौ घौर दौड़ा–दौड़ी
नेताँ घौंघरौ काटे छै।

हॉस्पीटल तै भटिहरखाना
सब जौंकैं लहू चाटे छै।

चाहे तोर हड्डी टुटलौ
कोरोना बतै घाँटे छै।

डाक्टर–अफसरैं गलती पर
चिप्पन रंगलौ साँटे छै।

हिनकर–हुनकरौ ढेंसा–ढेंसी
काहूँ लाश नै आँटे छै।

मुखियाँ चढ़ै ताड़ी रोजे
भाषण छुछ्छै छाँटे छै। ■■

❑ 21/604–606, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मदनगीर, नई दिल्ली

बिडंबना

गढ़वाली / कविता

डॉ. राकेश मोहन नौटियाल
'कटकाणी'

यूं संसार भी बड़ू अजीब छनं
नौना और नौनी म भेद कर दू
जबकि सचि बात य छन कि
दूयू का बिना
ई संसार नि चली सकदू
यीं संसार म नौना त सारू
जगा घेरी लेन्दू
तखि नौनी
एक क्वणा मंग
सिमटी रन्दी
कबी भाण्डा मन्जोदी
त कबी कपडा
ध्वन्दी दिख्यान्दी
जै घौर का भैर
तिन्कु नौ भी नी हव्वान्दु
यना घरा का सपणा
सजोन्दी रन्दी। ■■

❑ 63/2 मीठिभेरी, प्रेमनगर, देहरादून, (उत्तराखण्ड)

मुस्कुरा के चलिए...

हिंदी / कविता

डॉ. गिरिजा किशोर पाठक

मायूसी भी हो सफ़र में
तो मुस्कुरा के चलिए।
कोहरे से भला कौन जीता है
तलवार से...
बस इंतजार कीजिए
हौसला बना के रखिए।

माना कि अंधेरा बहुत घना है
पर दिये जलाना कहाँ मना है।

धूप–छाँव के खेल तो
हर रोज खेलती है ज़िन्दगी
आपके धीरज को हर रोज
परखती है ज़िन्दगी।

चलते रहिए...
राम और बुद्ध की तरह
फूल और काँटे तो
हर पथिक के पाँवों को मिलते हैं।
इसी पदकथा से कपोलों से
स्वर निकलते हैं।

लड़ते रहिए, चलते रहिए
और एक दिन...
धूप आपके कदमों में होगी
और किरणें आपकी आगोश में।
■■

❑ भोपाल (मध्य–प्रदेश)

হকের সঙ্গে

बांग्ला / कविता

मंजू भट्टाचार्य

সোনার ফসল ফলায় যে তার,
দুইবেলা জোটে না আহার।

রোদে জলে ঝড়ে মাঠে
কেটে যায় তার বছরের পর বছর।

ধার দেনা কর্জ করে কেনে বীজ ও সার
নর নারায়ণের মুখে তুলতে অন্ন জীবন জেরবার।

ফসল যা কিছু ওঠে , কোথায় বা হয় রোজগার
নিয়ে যায় সস্তায় ঠকিয়ে সব আড়তদার।

ভোটের আগে কর্জ মাফের কথা বলে বড় বড় নেতা
ভোটের শেষে সবই অসার, মেলে নাকো সঠিক ক্রেতা।

ঘরেতে কেঁদে চলে অভুক্ত সন্তান তার
করুণ চাহনি জোটে বৃদ্ধ পিতা-মাতার।

ঘরণী না জানি কোথা থেকে কী করে উপাচার
কেমন করে ভরায় পেট ,চালায় সংসার।

হাজার ছয়েক ভাতা চালু করেছে ভারত সরকার
আরো ভালো হতো যদি দিত ফসলের ঠিকঠাক দর।

দুইবেলা দুমুঠো অন্ন খেত নিজ নিজ হকের
দিতে হতো না গলায় দড়ি সঙ্গে নিয়ে স্ত্রী পুত্র পরিবার।

■■

हकेर संगे

सोनार फसल फलाए जे तार
दुई बेला जोटे ना आहार।

रोदे जले झड़े माठे
केटे जाए तार बोछोरेर पर बोछोर।

धार देना कर्ज कोरे केने बीज ओ सार
नर नारायणेर मुखे अन्न तुलते जीवन जेरवार।

फसल जा किछू ओठे, कोथाए बा होए रोजगार
निए जाए ठोकिए सस्ताए आड़तदार।

भोटेर आगे कर्ज माफेर कथा बोलें बड़ो बड़ो नेता
भोटेर शेषे सबई असार, मेले ना को सठीक क्रेता।

घरेते केंदे चले अभूक्त संतान तार
करूण चाहनी जोटे वृद्ध पिता मातार।

घरणी ना जानी कोथा थेके की करे उपाचार
केमोन कोरे भराए पेट, चालाए संसार।

हजार छ–एक भाता चालु कोरेछे भारत सरकार
आरो भालो होतो यदि दितो फसलेर ठिकठाक दर।

दुई बेला दु मूठो अन्न खेतो निज निज हकेर
दिते होतो ना गलाए दड़ि संगे निए स्त्री पुत्र परिवार।

■■

❑ चेम्बूर, मुंबई (महाराष्ट्र)

आच्छा हामारा रिती रिवाजों

जौनसारी / कविता

सीमा शर्मा

आच्छा हामारा रिती रिवाजों।
आच्छा आपणा गांव समाजो।

सीधे सादे ओ लोगों भागों।
डोकरी री सांठो धाणो।
गोरू,बाकेरू,मवेशी री ज्वाडी।
बांकी आपणी वेशभूषा।
जग्गापाजामा, घाघरो, डांठू, कुर्ती।
मिठी आपणी बोली भाषा।
कोठा कुडम्बा भाई रा प्यारो।
बांको आपणो घरो बारो।
सादा आपणा खाणा–पिणा।
सातु,छासी, गागुई रा।
आच्छा हामारा रिती रिवाजों।
आच्छा आपणा गांव समाजो।

बारह माह दै त्यौहारो बारो।
माघो की जिम्मो पांवडाई।
ध्याणठुणियो री जुणो सुणियाता।
आच्छै जुणो बिस्सू, गनियाता।
भाधो के जागड़े महासू के।
श्रावणो की जुणो नुणाई।
आच्छा हामारा रिती रिवाजों।
आच्छा आपणा गांव समाजो।

आच्छै लागों तांदी रै गीतों।
ढोल,दमऊ, रणसिंघो रै बाजदै बाजे।
आच्छै लागदै हारुल,जैंता, रासो।
आच्छे हामारे रिती रिवाज।
आच्छै आपणो गांव समाजो।
बांकी हामारी गांव री छानी।
ठण्डी लागों बागुरियां डाण्डी री।
श्रावणो री उमडो कुरेडो।
स्युन्दो की लागो दीनारों।
आच्छा हामारा रिती रिवाजों।
आच्छा आपणा गावों समाजो।

■■

❑ देसऊ विशायल कालसी, देहरादून (उत्तराखण्ड)

नशामुक्ति

जौनसारी / कविता

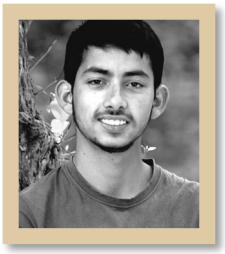

आदित्य नौटियाल

रोकनी पड़दी ऐजी
बर्बादी बदलनी पड़दी
ऐजी सोंच
आओ सभीये मिली
करी कदम बढ़ाओ
आपड़े जौनसार नशामुक्ति बंणाओं
खुद भी जागो
दूजे क भी जगाओ
नशा को मुक्ति पूरे
जौनसार–बावर से दिलाओ
बहुते उजिड़ी ग्वै
घर परिवार नशेच
कंरू में मन से वार
नशा छोड़ी करी जों
देखदी आपड़ी जिन्दगी
बदल कर जो देखदी
ऐजी जिन्दगी ना मिलदी दुबारे
यां जिन्दगी दे आच्छे आच्छे
काम कर दी ओखे बहुत सारे।

■■

❑ हाजा, पशगांव, चकराता, जौनसार, देहरादून (उत्तराखण्ड)

कहूँ कोरोना

अवधी / कविता

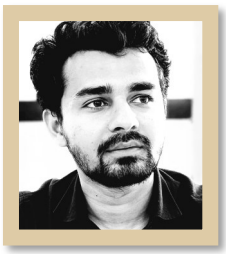

प्रतीक त्रिपाठी

कहूँ कोरोना नाई अहै
डकटर साहेब येही दुनियां माँ
अब कहूँ करोना नाई अहै,
हमरे खाली जोखाम बोखार अहै
हमै करोना नाई अहै।
पित्तरदीन कै लड़िका मरिगा
ज्यादा डराय के कारण से
सिकरेट पीबो साँस न फूले?
दिनभर सुट्टा मारे से,
हमरे सरीर मा जवन दरद अहै
खाली तेज बोखारे से,
डकटर साहेब एकरे अलावाँ,
कौनो दिक्क्त नाई अहै
बंगाल मा देखव बिना मास्क कै
कइसे सेर दहाड़त अहै
गोड तुराये ममता दीदी
तिनपहिया पै टहरति अहैं
बीच मंच पै कोबरा दादा
कइसे फन्न फुलावत अहैं
जेतना बड़का नेता ददई
ओतनै भीड़ जुटाए अहैं
हमहुँ टीबी देखित अहै साहेब
कहूँ करोना नाई अहै। ■■

❑ गेड्सर, गोण्डा (उत्तरप्रदेश) 271309

माघो की मिने की रुकुन

जौनसारी / कविता

दीक्षा तोमर

माघो के मीने की आपणी अलग रुणुक पचाण
तयार के दूस जीशा, बाणों सभिये खेण्डा खिचड़ी
लागे जांव गाँव दा हेला,
आँव सबीके दारके दारके दाई भाई
माघो के मीने की लागी जांव रुणुक
दुसा मनाव सारों जौनसार बावर
आपणो पुराणों पुश्तेनी तेयार
महासू देव के चार वीरो के नाव
को मनाव एओ तेयार
धन धन हमारे महासू देवा, धन तेरे चोवीर
जिनवे करा किरमिया राकस का संघार
धन धन हमारे महासू देवा, धन तेरे चोवीर
माघ के मीने आँव पहुँणा पोए
नियं धयाणी भानजे क बांटा बिला
तबे आँव धयाणी माइते, भानजे आँव मोंके
एजा हमारे जौनसार बावर का
पुराणा रीति रिवाज
माघो के मीने हमारे अलग अलग खान पान
माघो के मीने खाँव मनसो माछी
लांव कडाया, बाणों भंगजीरे, गुडों,
मुफडी की मिषारी मीठी रोटी
बूढ़े बूढ़े शौटो तमाकु, लांव ठाठे मजाक
लाई करो चौड़े, भारत पणाव राग
लांव गीतों बातो पणो लो राग
एजी हमारे माघ के मीने की आपणी पचाण
ऐसी मीने आंव जांव पाहुणे महेमान
लागे रन्ह सारे मीने गीतों बातो, पड़े जांव राग
पुश माघो के मीने पणो हियूं
,भिणो उनो के चौड़े, कोटो, झँघेल
एजी मेरे माघो के मीने की पचाण। ■■

❑ क्वानु मेलोथ पोस्ट ऑफिस मझगांव क्वानु (उत्तराखण्ड)

लिहीं खुरचन

भोजपुरी / कविता

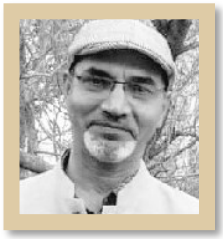

जयशंकर प्रसाद द्विवेदी

गुड़ के बाति करीं जनि बबुआ
मति दीं हमरा ओरहन
आईं, बइठीं, लिहीं खुरचन।

कुछो मिली भाग जोग से
मुकति देही कई रोग से
बड़ बडुवन के हवे दवाई
सूनब, गूनब तबे बुझाई
बाति मानिके डेग बढ़ाई
छोड़ीं सगरी ठनगन।
आईं, बइठीं, लिहीं खुरचन।

हेहर, थेंथर सभही जूटल
रउरे छाती सिल्ली कूटल
रूठी–मनाई खूब गरिआई
जुटी–जुटाई लवटि समुझाई
भरल सभा में कहत देखाई
आपन झूठिया गुनगन।
आईं, बइठीं, लिहीं खुरचन।

बिन सोचले करै मनमनता
भाड़ में जाये सगरी जनता
नटई फार–फार चिचियाई
बेगर बाति के का उमगाई
जब चुनाव के दिन नियराई
मन परी तबे जनमन।
आईं, बइठीं, लिहीं खुरचन।

अब देखै परल बा फेफरी
लगल मचावे अफरा–तफरी
हाथ जोरि बा करत निहोरा
अबरी खातिर भरि ल कोरा
राज–पाठ खातिर गोहराई
देखत देखत कनमन।
आईं, बइठीं, लिहीं खुरचन।
■■

❑ अवंतिका, फेस–2
गाज़ियाबाद (उ.प्र.)

गीत

भोजपुरी / कविता

बिम्मी कुँवर सिंह

चलेला बसंती बयरिया,
उड़े फर फर लहरिया।

पूस के महीनवा में देह हम जरवनी,
उनकरे इयाद में आठों पहर बीतवनी,
पिया जी से मिले के असरिया,
उड़े फर फर लहरिया।

जेठ के महीना जइसे दवकेला जवानी,
करइत के कटला प मागें ना पानी,
हमरो कटि दुख के अन्हरिया
उड़े फर फर लहरिया।

बिन उनके देखले हमके आवे ना चैना,
खोतवा में कुहूके जइसे मैनी बिना मैना,
होखी जिनगी में हमरो अजोरिया
उड़े फर फर लहरिया।

अइहे पियाजी! पेन्हम सिलिक साड़ी,
देखी–देखी जरी जायी महला–अटारी,
कबहूँ त सुनिहे अरजिया,
उड़े फर फर लहरिया।
■■

❑ क्वानु मेलोथ पोस्ट ऑफिस मझगांव
क्वानु (उत्तराखण्ड)

चुनाव नियराइल

भोजपुरी / कविता

आकाश महेशपुरी

चारू ओर लागे कि जहर बोआइल
कि देखअ ना भाई चुनाव नियराइल

साड़ी बाटात कहीं मुर्गा काटाला
दारू के बोतल प दुनिया के हाला
बूझे ना लोग बाटे पासा फेकाइल
कि देखअ ना भाई चुनाव नियराइल

भाई पियक्कड़ के चम बाटे गोटी
आइल चुनाव खाई बकरा के बोटी
होई बेमारी त छूटी धाधाइल–
कि देखअ ना भाई चुनाव नियराइल

गँउवा–नगर में जे लेडा लगावे
सबसे अधिक धन भाई उ पावे
मार–फउदारी से सभे डेराइल–
कि देखअ ना भाई चुनाव नियराइल

कुर्सी जे मिली त रही ना नाता
आइल चुनाव खूब ऑफर दीआता
गोड़वा प माथे के पगरी धराइल–
कि देखअ ना भाई चुनाव नियराइल

मिलेला ऑफर कि बोलअ का चाहीं
केने से बोलल जा केने से नाहीं
बाटे शरीफन के बुद्धि हेराइल–
कि देखअ ना भाई चुनाव नियराइल

नेतन के भरेला सोना के थाली
जनता त खाली बजावेला ताली
जनता के देश ह जनते पेराइल–
कि देखअ ना भाई चुनाव नियराइल। ■■

❑ महेशपुर, कुबेरस्थान, कुशीनगर (उ.प्र.)

गीत

भोजपुरी/कविता

गुरुविंदर सिंह 'गुरु'

हमनी के कहाँ होई
शहर में गुजारा
सुनेनी कि उहवाँ के
पनियो हऽ खारा।

हमनी के गाँव के
गँवई हई बाबू
पढ़ल–लिखल लोगन पर
कहाँ रही काबू
तनिकी सा बतियो पर
चढ़े लगी पारा।

फैसन उहवाँ के
कहलो न जाला
लड़िका–लड़िकी में कुछ
फरक ना बुझाला
बिखरल लंगटपन के
अलग बा नजारा।

पँखुरिन के जाल फँसे
जइसे भँवरवा
चउक–चौराहा प'
लोफर–अवरवा
बेपरदा होखे सब
सड़क के किनारा।

हमनी के कहाँ होई
शहर में गुजारा।। ■■

❑ 654, सै–8, आर. के. पुरम्, नई दिल्ली

मोर गँउवा

भोजपुरी/कविता

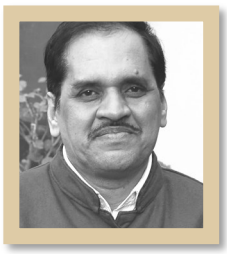

तारकेश्वर राय 'तारक'

गते–गते जाता बिलात मोर गँउवा।
देखीं बिलाताटे फेड़न के छँउवा।

भइल मोरा गाँव में कइसन बवाल
धरे वाला हँसुवा धइले बा नाल
बात तनिको अब सहात नइखे
जाता कचहरी छोट बात धइके
माटी जाता मिलल देखली नउवा
गते–गते जाता बिलात... ।1

रगड़ा आ झगड़ा के रोज चले आन्ही
टाँगल दूनाली बा देख लिहीं कान्ही
जलन आ डाह में अदमी भुजाता
पुरनियन क पेट अब आफत बुझाता
देख ककरहट के उखड़ता पँउवा।
गते–गते जाता बिलात... ।2

डाँड़ के झगरा में खेत छुटल परती
झरी–झरी लोरवा बहावतिया धरती
भाई सहोदर अब भइलें पराया
अँखिया से गायब भइल लाज–हाया
जाता ढिमलाइल पुरखन के ठँउवा।
गते–गते जाता बिलात... ।3
■■

❑ सोनहरियाँ, भुवालचक, गाजीपुर (उत्तरप्रदेश)

The Battle at Derababa Nanak

English/Story

Sonu Tanwar

In the memory of my late father, Colonel S.K. Sekhri, I have the privilege here to express a memoir of one of the most famous battle fought during the 1971 war – The Battle at Derababa Nanak, in the Amritsar sector by my father who was then a Brigade Major of one of the Artillery regiment, which was moved for active operations to this sector. He was subsequently awarded the Sena Medal for his valor and courage.

September 1971, the Indian army was mobilized to be deployed in the Amritsar, Fazilka and Firozpur sector. India was expecting a major offensive in this sector because of a strategic bridge on River Ravi. It would have enabled the enemy to negotiate the river to launch their offensive, a launching pad in the form of an enclave on the Indian side of the river. The Corps headquarter was given the responsibility to capture this enclave on the Indian side to deny the enemy the bridge head and access to our country.The Infantry brigade units comprised of the Gorkhas and Dogras, along with Armoured brigade units and the Artillery regiment units with their field guns had their respective roles chalked out for the DerababaNanak operations.

The war started on 3rd December 1971. Since the Pakistani position on the Indian side was heavily fortified, it would have been suicidal to attack from the front so it was decided to move about six kms north of the river and cross over undetected from inside the enemy territory. Further the Gorkhas and the Armoured battalion also moved stealthily between the enemy prepared defences, along the bund line. The Infantry battle was a massive success with many awards and medals bestowed on the commanders of the units. The Artillery units provided heavy fire of guns, mortar on the enemy lines in counter attack on the enemy. In this operation it provided heavy counter bombing by thirty six, 130 mm medium field guns, firing almost 2000 rounds of gunfire. The fire plan for the field guns was coordinated by my father along with the commanding officers of the other Arty units in consultation with the Brigade Commander.

It needs to be noted that the success of this battle had a considerable effect on the course of the war and denied the enemy an avenue for mounting a major attack across Ravi. It was one of the most successful and highly decorated battle on the western front leading the Indian flag to be hoisted after successfully capturing Derababa Nanak by the close of 1971.

It is rightly said that heroes are not born, they come into being with their forethought, courage, aptitude, action and daring. My salutations to all our gallant officers, soldiers and jawans who have selflessly laid down their lives in the true spirit of love, regard and nationalist fervour towards their motherland. We bow down our heads in solemn respect and gratitude for their undying service to not only towards the country but their fellow countrymen and brethren. JAIHIND!!!! ■■

❑Ramada Plaza, Juhu Beach, Mumbai (Maharashtra)

शशिरंजन मिश्र

खरहा के करेजा

कोरियाई जातक कथा के भोजपुरी अनुवाद

दक्खिन के समुंदर के राजा एगो ड्रेगन रहले। एकबेर ऊ बीमार हो गइले। उनका के डॉक्टर देखले त कहले कि महाराज राउर बेमारी ओइसे त लाइलाज बा बाकि एगो उपाय से राउर जान बाँच जाई। राजा पुछले कि उपाय का ह बताईं। डॉक्टर कहले कि राउर बेमारी खरहा के कलेजा खाये से ठीक हो जाई। ड्रैगन राजा आपन सब सलाहकार लोग के बोलइले कि खरहा के कलेजा जोहे कवन देश–दुनिया में जाई। व्हेल, शार्क, झींगा, दरियाई घोड़ा, सभे मुकर गइल। काहे से कि ऊ लोग पानी से बहरी जाये में डेरात रहे। राजा परेशान रहन त अंत में उनकर मंत्री कछुआ आगे आइल आ कहलस कि हम जाइब खरहा के कलेजा जोहे।

कछुआ पँवड़त–पँवड़त समुंदर के किनारे जमीन पर पहुँचल त देखलस कि उज्जर–उज्जर रोआँ वाला एगो जानवर पिछला गोड़ के सहारे फुदकत बा।

'भाई जी परनाम', कछुआ कहलस–'का रवे खरहा हईं?'

'जी, बाकि काहे पुछ्त बानी?'– खरहवा पुछलस।

'हमरा के समुंदर के राजा ड्रेगन भेजले बाड़ें। ऊ राउरे रूप–रंग के बखान कइले आ कहले हँ कि ओह प्राणी के हम समुंदर के नीचे आपन महल में अतिथि बनावल चाहत बानी।' 'ई त निमन बात बा। हमहूँ जतरा कइल चाहत बानी। बाकि हमरा पानी में पँवड़े ना आवे। का तहरा आँख–मुँह में पानी ना घुसे?' –खरहा कहलस।

'अरे भाई, चिंता मत करऽ।'– कछुआ कहलस। 'हम तहरा के पीठ पर बइठा के ले चलब। कुछ देर में तहरा पानी के आदत हो जाई आ तूहूँ ओहिजा हवा के साँस लेवे लगब।'

खरहा ओह निमंत्रण के स्वीकार कर लेले आ कछुआ के पीठ पर बइठ गइले। खरहा के नया–नया संसार देखे के मिले लागल। पानी के भीतर पहाड़, जंगल, चमचमात मछरी के झुंड आ ओकनी के स्कूल जे इंद्रधनुष लेखा सुंदर रहे। खरहा के अचरज भइल कि ऊ पानी में साँस ले सकत रहे।

जब ऊ लोग ड्रेगन के महल में पहुँचल आ राजा के सोझा गइल त खरहवा बुझ गइल कि ई धोखा भइल बा।

ड्रेगन राजा कहले– 'हम माफी चाहब कि आपन तंदुरुस्ती पावे खातिर तहार कलेजा हमरा खाये पड़ी। हमार डॉक्टर तहरा के ले जास ओह से पहिले हम तहरा के धन्यवाद देत बानी।'

पहिले त खरहा डेराइल बाकि ऊ चतुर सेयान रहे त कहलस– 'महाराज, राउर परान बचावे में हम खतम हो जाईं, एह से बढ़ के का होई। बाकी कुछ समस्या बा। हमार कलेजा बहुत मूल्यवान अंग हऽ। एही से हम हमेशा ओकरा के साथे ना राखीं। हमरा पहिले से पता रहित कि राउर ओकर जरूरत बा त हम जवरे ले अइतीं। फिलहाल त ओकरा के जंगल में एगो खोह में लुकवा के रखले बानी। महाराज! अगर कछुआ जी हमरा के फेर से ओहिजे ले चलस, जहाँ से ले आइल रहले, त हम आपन कलेजा के साथे ले के आइब। रवा जइसन परतापी पर त कई गो कलेजा बलिदान कर सकेनी।'

ड्रेगन राजा खरहा के भक्ति से खूब खुश भइले आ आपन दुनिया से कलेजा लावे के कह देले। खरहा फेर से कछुआ के पीठ पर बइठ के जमीन पर चल आइल।

'सवारी खातिर धन्यवाद कछुआ भाई।'– खरहा कहलस। 'का तहरो इहे विश्वास बा कि हम आपन कलेजा जंगल में रखले बानी ?'

कछुआ के अब बुझाइल– 'एकर माने तू तबसे झूठ बोलत रह। महाराज के मालूम पड़ी त तहार खैर ना होई।'

'जा, जा... तहरा का लागत रहे कि तहार बेवकूफ ड्रेगन राजा हमरा के काट के हमार कलेजा खा लिहित?' एतना कह के खरजा जंगल में फुदक गइल। ■■

❑ उत्तम नगर, नई दिल्ली / shashi.shak@gmail.com

Beautiful Nature

English/Poem

Gaurishanker
Vaish Vinamra

Some are weatherwise.
Some are otherwise.

Some happy in night,
Dislike sunrise.

The birds same colouring,
Fly featherwise.

With own wings of art,
One may get skies.

Highest goal devotee,
Don't wish prize.

Flowers live with thorns,
Without surprise.

Nature is beautiful
Whatever its size. ■■

❑ 117, Adilnagar, Vikasnagar, Lucknow (U.P.)

LIFE : A BARREN FIELD

English/Poem

Avani Jain

Life is like a barren field
We must gather what will grow
There are weeds
As well as good seeds
It's up to you what you grow
Just keep in mind that
the same will come out and show

The Weeds will come even
when good seeds are sown perhaps
Make sure to remove them every while
Or else they will make
everything to collapse

Take care of the crops till the best
Because that's what's going to forest
It said by the law;
We reap what we sow. ■■

❑ Sector-30, Gurugram (Haryana)

Shonar Bangla

English/Story

Dr. Sudeepta Ghosh

"*Maa*, I wanted to tell you something today. I want you to meet Sonal. We have been dating each other since long and want to settle down now," Joidev managed to utter the words after a full night's rehearsal.

Joidev's mother, Mrs. Dey was highly *bong* in nature. She took pride in *Robindro Songeet*, *Durga Pujo, Jamai Shosti, Maacher Jhol, Rosogolla* and above all in not knowing (to speak)the national language of the country-Hindi.

"Is she a Bengali?" she enquired most casually.

"No *Maa*. She is from Bihar, but has done her graduation from BHU", Joidev spoke in a low pitch knowing completely what storm the line would bring next.

"B-e-e-h-a-a-r-i!!!!" she screamed

"Oh!!! So you are so grown up now. You want to marry and that too a *bihari* girl. Did you at all think twice before saying these to me," Mrs. Dey said in a pitch louder than normal.

Mrs. Dey was a widow aged around 50 and the mother of her only child, whom she called Babai (typical nicknames which only a Bengali will keep). Babai or Joidev was in his mid-twenties, very eligible bachelor, as per the job-salary criteria. As for the physical appearances, he was good-looking except for the flabby body which was the characteristics feature of any Bengali boy, and it was considered to be an asset to be showcased before friends and family. None could dare speak to Mrs. Dey about his son's increasing weight at an alarming rate. She would shun them all saying with pride, "Bengali and food go hand in hand. We, Bengalis are fond of eating and that reflects in our looks as well."

The feeling of pride is good as long as its domain is restricted to self. When pride causes one to look down upon others, pride gets converted to arrogance and several problems crops up. The same happened with the Dey family as well.

"How can you think of doing this Babai? We are Bengalis and have different *kaalture* and heritage. Our lifestyle is completely different from theirs. All of us, including her, will have a problem adjusting to each other. Had your father been alive, this would never have happened. Why did you think your mother to be incapable of choosing a good bride for you?" Mrs. Dey tried her convincing tone in the beginning, which later on was activated to the emotionally blackmailing tone.

"*Maa*, she has been staying in the hostel and is very adjusting. She works in the same company as mine. I know her very well. Also, she is very mature and above all, I love her *Maa*," Joidev spoke with the target fixed in his mind.

Having failed in her first attempt to convince her son, Mrs. Dey took the second step, "Didn't you find someone from Bengali community? Caste was never a bar for me. I know all the tricks of these non-Bengali girls'. They want to save the crores of money, which otherwise would have gone for their dowry. They deliberately set up traps to catch hold of Bengali boys."

"You are being mean *Maa*. I love her", Joidev said in an attempt not to lose his temper as that would spoil everything and Mrs. Dey would start with the most effective weapon of hers-her 'tears'.

"I know, I know… these *prem* and all. Don't teach me", she said sarcastically.

Joidev now felt a bit restless and seemed to be losing the game of debate that day, which was the question of his entire life. He used the opponent's own weapon to attack the opponent.

"*Maa*! How can you be so narrow-minded and rigid? We, Bengalis are known for our openness and broad-mindedness. The concept of love-marriage and inter-caste marriage has been most prevalent in the Bengali community for ages. What Bengal thinks today, India thinks tomorrow. People in our community are going for inter-country marriages and you are unable to accept a girl from the same country?" Joidev paused for a while and looked at his mother just to know the impact of the words spoken by him. He was otherwise ready for a larger speech quoting culture, heritage, and famous Bengali personalities.

Mrs. Dey seemed to be almost convinced. Only her ego had to be satisfied and the mission was accomplished.

"Acha, do whatever you wish but remember, *Bihari* eats only *litti* and *chokha*, then don't come to me with complaints," she said almost accepting her defeat.

Almost immediately, just like a small kid, she came up with another long list of agreements and contracts, which Babai had to sign even without reading, "*Aami kintu Hindi bolte parbo na*! (Don't expect me to speak in Hindi). I will not change my food habits. I will not eat *chhatur shorbot* (a drink made of powdered baked grams) (Bengalis don't drink anything, they eat!). I will eat *mishit-doi* and not *khhatta-doi*. She has to adjust to our way of living etc. etc."

Adding to these, she also said, "Why are you in such a hurry for marriage? You are at a tender age now. You have lots of time for this marriage and all. I can get better girls for you." This was supposedly her last attempt to convince him.

Babai okayed everything except for the last part; and smiled and hugged his *Maa*. He didn't have any other verbal answer in the given situation.

The marriage was a peaceful one and post-marriage days were passing rather fast. Joidev and Sonal had their majority of the day spent in the office and the small amount of time they had after coming from the office, was spent very judiciously by the daughter-in-law, to avoid any confrontations. After about 2 years of their marriage, the couple was blessed with a cute little boy. They named them Sonjoy. All attention of Mrs. Dey was now focussed on the upbringing of Sonjoy, who reminded her of Joidev's childhood days. Days passed and Sonjoy started going to school. Mrs. Dey had taken the full responsibility of feeding him, playing with him, fulfilling all his tantrums and also teaching him to read and write.

The child was also too fond of his grandma and could not tolerate a single word against her. One day Sonjoy rushed to her grandma and opened his Hindi book and said, "*Thakuma (*Bengali word for grandma*)*, I will teach you Hindi. It is very easy." The little boy had overheard from somewhere that her grandma couldn't speak Hindi and did not feel good about it. He felt, his grandma was not inferior to anyone in any respect and took the initiative to undertake the task of teaching Mrs. Dey the official language of the nation-'Hindi'.

All her pride of not learning the language vanished somewhere and she said, "Whatever you say, my *babu*."

Another day, Joidev was coming from the office when a high speeding Tata Sumo, hit his car. Sonal was a little injured, but Joidev had to be hospitalized immediately. He had been unconscious since the incident occurred because of a deep cut on his forehead. Mrs. Dey was informed and she rushed to the hospital instantly along with Sonjoy. The doctors asked her to wait as they were proceeding urgently towards the operation theatre with Joidev lying

still on the stretcher. Only after the operation, the doctors could let her know about her son's situation.

"*Kintu*...", she shouted, not knowing what to say next. Her voice was choking but was loud enough to be audible. One of the doctors turned back. Mrs. Dey immediately read the name written on the doctor's i-card- 'Dr. Aniruddh Agarwal'. She then ran to him and with folded hands asked "*Dr. babu! mera ladka thik ho jayega to? Kichu chinta ka baat to nahi hai na*?" (Mr. Dr. Hope my son will be well sson. Hope there is nothing to worry about.) She then started weeping covering her face with the corners of her cotton saari. Dr. Agarwal just patted her and went back to the operation theatre.

Sonjoy, who peeped from one of the pillars in the corridor of the hospital, was too innocent to understand what was happening. All he knew was that his *baba* had got hurt and would be well very soon. What gave him self-admiration was his grandma's successful Hindi conversation with the doctor. He smiled taking all the credit for his teachings, just like a dedicated teacher who is filled with pride at his students' success.

At another corner, in front of the statue of Lord Ganesha, Sonal was sitting motionless, with folded hands and eyes closed, blood oozing from her fresh wound, in her arms. Mrs. Dey joined her in the same pose. Both of them prayed in their respective language to the same God, with moist eyes, begging for the same thing.

Hope God has no prejudice in the language chosen to accept the respective sets of prayers! ■■

❑ Kidvai Nagar, INA, New Delhi
drsudeepta.blogspot.com

The Shattered can be Loved

English/Story

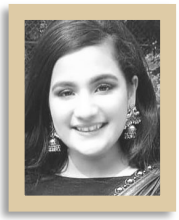

Surbhi Mendiratta

We often weep over the 'broken' believing that it's shape has now been destroyed and it's perfection has now vanished. Engrossed in this pain we tend to forget that the imperfect shapeless whole has left behind so many perfectly shaped pieces. We produce an unpleasant sound towards those bits and we hear the echo as bleeding hands from those sharp edges. The fragrance of love is not bound to the complete because love prefers to stay at places where something is incomplete. Hatred will always incomplete the incomplete. Make a wise choice. ■■

❑ 2/5 MCD Flats, South extension, New Delhi-110049

ओठांचे मनोगत

मराठी / कविता

सुवर्णा जाधव

थोडे अघटित घडले ओठांचे दिवसच फिरले
कोरोना चे संकट पाहून सरकारने फर्मान काढले,
आणि ओठाला 'पर्दा करण्याचे' आदेश दिले.

ओठांचे हसवून सान्यांना
मोहविण्याचे स्वप्न हवेतच विरले

आज पर्यंत कानात कर्णफुले
हातात बांगड्या असा सारे करत होते साजशृंगार
ओठांनी ही ठरवले आपणही करावा साजशृंगार...

ओठ ही आता सजू लागले
पैठणीचे आणि चांदीचे मास्क वापरू लागले...

ओठांचे काम आता डोळे करू लागलेत
डोळेच आता हसू आणि बोलू लागलेत

आणि ओठ अजूनच
गप्प गप्प राहू लागलेत। ■■

❑504अ, सिद्धिविनायक द. अपा., आदर्श नगर, महालक्ष्मी(पूर्व) मुंबई

मौनातील शब्दांना

मराठी / कविता

संतोष बोंगाळे

हरवून गेले नाविन्य माझे
संकेतशरणता ना झुगारली
संवेदनांच्या अस्तराने आता
विचारशक्ती का थंडावली
काय वास्तवाचा अन्वयार्थ
लावू मी तने फार पुढारली
सोहळ्यांच्या झगमगाटात
लेखणीने फक्त शाई पसरली
हालचाल ही स्वांत सुखाय
उरली मूल्यभान संपलेली
प्रतिभा ही वेडाचीच बहिण
सांग मना सत्य का विसरली
पिकते उदंड शेतावर आज
परी जीवनसत्व ना सापडते
नको लावुनी घेऊ मनास तू
जग नफाशास्त्रावर चालते
परी वाटते मौनातील शब्दांना
पालवी फुटावी मानवतेची
बहरून जावी साहित्यवेलही
फुले फुलावी एकात्मतेची। ■■

❑ पिंपळखुंटे, सोलापुर (महाराष्ट्र)

रामकहानी : एक पुनर्लेखन

हिंदी / पुस्तक समीक्षा

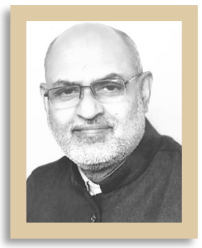

अनिरुद्ध त्रिपाठी 'अशेष'

राम अनन्त हैं, उनकी कथाएँ अनन्त हैं। संस्कृत–साहित्य से लेकर हिन्दी एवम् लोकभाषा–साहित्य की विविध विधाओं तथा विभिन्न लोकगाथाओं, लोककथाओं, लोकगीतों, सांस्कृतिक और धार्मिक पर्व–त्योहारों आदि में आज भी रामकथा अनेक रूप–रंगों से अलंकृत सम्पूर्ण रस–माधुर्य एवं वैभव–सौन्दर्य के साथ सतत् प्रवाहमान है। श्रोताओं की अपार भीड़ को सहज ही अपनी ओर आकृष्ट हो जाने को विवश कर देनेवाली रामकथा के पाठकों की संख्या भी अपार है। फलतरू इसका पुनर्लेखन आज भी थमा नहीं है। रामकथा–लेखन की इस विशाल और सुसमृद्ध परम्परा–श्रृंखला में संस्कृत और संस्कृतिनिष्ठ रचनाकार मार्कण्डेय शारदेय की मंगल लेखनी से सहज उद्भूत लोकहितकारिणी 'रामकहानी' भी अपनी नवीन उद्भावनाओं की दिव्य आभा के साथ सम्मिलित हो गयी है। शारदेय जी विश्व के लिए कल्याणकारी भारतीय ऋषि–परम्परा–संस्कृति, आप्त–चिंतन और मूल्यादर्शों के सम्पोषक, संवर्द्धक, संवाहक तथा प्रतिष्ठापक कलमकार हैं। उन्हें ज्ञात है कि मनुष्य की 'मैं' नामक अनियंत्रित विभेदकारी चित्तवृत्ति और उससे उत्पन्न विकृतियां मनुष्यता के लिए कितनी विध्वंसकारिणी हैं। अतः इस पतनकारी चित्तवृत्ति की प्रकृति, प्रवृत्ति और उसके कूट रचना–संसार से विश्वमानव को परिचित कराना तथा उन्हें उन पर अंकुश लगाने की वैज्ञानिक प्रविधियों का ज्ञान देना सदा से ही भारतीय साहित्य–चिन्तन का प्रधान लक्ष्य रहा है। शारदेय जी भली–भांति जानते हैं कि इस महत् उद्देश्य की सिद्धि के लिए राम के दिव्य चरित्र का श्रवण और अनुकरण ही एक मात्र विकल्प है। अतः रामकथा का पुनर्लेखन कभी ठहरना नहीं चाहिए, सदैव चलते रहना चाहिए।

आज का सबसे बड़ा संकट है मनुष्य का अपने भीतर के मनुष्य से निरंतर दूर होते जाना। आज के मनुष्य के पास सब कुछ है, लेकिन उसका मनुष्य उससे कोसों दूर चला गया है। आज विकास और निर्माण के समस्त कार्य उस मनुष्य के हाथ में हैं जो मनुष्य नहीं है। फलतः मनुष्य का विकास और निर्माण ही उसके पतन और विनाश का कारण बनते जा रहे हैं। अतः मनुष्य को मनुष्य बनाना आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है और सबसे बड़ी चुनौती भी। इसके लिए राम के अतिरिक्त दूसरा कोई उपयुक्त चरित्र नहीं है, जिसके द्वारा मनुष्य को मनुष्यता का पाठ पढ़ाया जा सके, उसे मनुष्यता का संस्कार दिया जा सके। इसीलिए महर्षि वाल्मीकि ने भी काव्य–सृजन और काव्य–प्रयोजन की सिद्धि के लिए राम को ही अपने काव्य का महानायक बनाया था। उनके और देवर्षि नारद के मध्य घटित सम्वाद से इस सत्यता को सहज ही समझा जा सकता है। वाल्मीकि पूछते हैं– ''हे मुने! इस समय इस संसार में गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ, उपकार माननेवाला, सत्यवक्ता और दृढ़प्रतिज्ञ कौन है? सदाचार से युक्त, समस्त प्राणियों का हितसाधक, विद्वान, सामर्थ्यवान और एकमात्र प्रियदर्शन पुरुष कौन है? मन पर अधिकार रखने वाला, क्रोध को जीतनेवाला, कांतिमान और किसी की निंदा नहीं करनेवाला कौन है? तथा संग्राम में कुपित होने पर किससे देवता भी डरते हैं?''

(श्रीमद्वाल्मीकीयरामायणम्– 1/2,3,4)

नारद कहते हैं– ''मुने! इक्ष्वाकु–वंश में उत्पन्न हुए एक ऐसे पुरुष हैं जो लोगों में राम के नाम से विख्यात हैं, वे ही मन को वश में रखनेवाले, महाबलवान, कांतिमान, धैर्यवान और जितेंद्रिय हैं। वे बुद्धिमान, नीतिज्ञ, वक्ता, शोभायमान तथा शत्रुसंहारक हैं...। वे धर्म के ज्ञाता, सत्यप्रतिज्ञ तथा प्रजा के हित–साधन में लगे रहनेवाले हैं। वे यशस्वी, ज्ञानी, पवित्र... हैं। प्रजापति के समान पालक, श्रीसंपन्न, वैरिविध्वंसक और जीवों तथा धर्म के रक्षक हैं। स्वधर्म और स्वजनों के पालक, वेद–वेदांगों के तत्त्ववेत्ता तथा धनुर्वेद में प्रवीण हैं। वे अखिल शास्त्रों के तत्त्वज्ञ, स्मरणशक्ति से युक्त और प्रतिभासम्पन्न हैं। सद्विचार और उदार हृदयवाले वे श्रीराम बातचीत करने में निपुण तथा समस्त लोकों के प्रिय हैं...। वे सम्पूर्ण गुणों के धाम, ...विष्णु के समान शक्तिशाली तथा चन्द्रमा के समान मनोहर हैं। वे क्रोध में कालाग्नि के समान, क्षमा में पृथ्वी के समान, त्याग में कुबेर और सत्य में द्वितीय धर्मराज के समान हैं...।''

(श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण–1/8,9,12,13,14,15,17,18)

स्पष्ट है कि मनुष्यताशून्य हो रहे मनुष्य में मनुष्यता की पुनर्प्रतिष्ठा के लिए रामकथा का पुनर्लेखन आज आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य–सा हो गया है। शारदेय जी की 'रामकहानी' का सृजन भी इसी उद्देश्य–सिद्धि से अनुप्रेरित है। मनुष्य को मनुष्य बनाना ही उनका भी संकल्प है। यद्यपि उन्होंने महर्षि वाल्मीकि प्रणीत रामकथा को ही अपनी 'रामकहानी' का मुख्य आधार बनाया है, तदापि दोनों कथाओं की अभिव्यक्ति में कुछ अंतर भी है जो स्वाभाविक और उद्देश्यपूर्ण है। सर्वविदित और निर्विवाद रूप से सर्वस्वीकृत है कि महर्षि वाल्मीकि द्वारा विरचित रामायण आदि काव्य है, एक विशालकाय महाकाव्य है। इसकी भाषा संस्कृत है। काव्यग्रंथ होने के कारण इसकी व्यंजना बिंबात्मक और प्रतीकात्मक है। फलतरू इसके छंदों में अपरिमित अर्थ–विस्तार तथा अध्यात्म और दर्शन का श्रमसाध्य तत्त्व–चिंतन है। संस्कृत भाषा की क्लिष्टता, अपनी कायिक विशालता और काव्यात्मक प्रतिकात्मकता के कारण वाल्मीकि की रामकथा सामान्य जन के लिए सुबोध नहीं है। शारदेय जी ने 'रामकहानी' लिखकर वाल्मीकि की विशालकाय और क्लिष्ट रामकथा को संक्षिप्त, सरल, सुबोध और सर्वग्राह्य बना दिया है। उनकी 'रामकहानी' अध्यात्म और दर्शन की अनसुलझी गुत्थियों को सुलझाने की सिद्ध कुंजिका जैसी है।

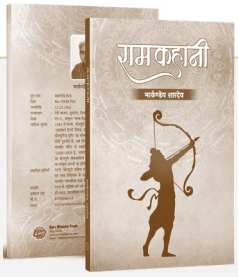

उपन्यास : रामकहानी
लेखक : मार्कण्डेय शारदेय
मूल्य : 450 रुपए
प्रकाशन वर्ष : 2020
प्रकाशक : सर्वभाषा ट्रस्ट, नई दिल्ली

माला के दानों की तरह एक सौ आठ कथा–सूत्रों में अखण्ड रूप से गुंथित–निरूपित शारदेय जी की 'रामकहानी' वाल्मीकि की रामकथा की मौलिकता और मर्यादा को सुरक्षित रखते हुए अपनी पृथक पहचान बनाने में सफल सिद्ध हुई है। 'राम–जन्म' से लेकर श्राम–राज्यश तक की राम से जुड़ी कोई भी महत्वपूर्ण घटना और उनके जीवन–चरित्र का कोई भी उल्लेखनीय प्रसंग शारदेय जी की सजग दृष्टि से ओझल नहीं है। उनकी 'रामकहानी' वाल्मीकि से लेकर अब तक लिखी गयी किसी भी रामकथा की कोरी छायाप्रति नहीं है। इसमें जगह–जगह युगानुकूल आवश्यक परिवर्तन और मौलिक उद्भावनाएँ देखने को मिलती हैं। अन्यान्य रामकथाग्रंथों में अनेक ऐसे

प्रसंग और घटनाएँ हैं जिनमें राम के चरित्र पर आक्षेप किया गया है। शारदेय जी ने अपने राम पर किसी भी प्रकार का कोई आक्षेप नहीं लगने दिया है। विवाद से मुक्त रहने के लिए सीता–निर्वासन की कथा सहित उत्तरकांड के कतिपय प्रसंगों को परवर्ती प्रक्षेप मानते हुए अपनी 'रामकहानी' में उनका उल्लेख ही नहीं किया है तथा आवश्यक समझते हुए कुछ घटना–प्रसंगों को बहुत ही समझदारीपूर्वक 'श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण' के आलोक में परिमार्जित और परिष्कृत करने का सफल प्रयास भी किया है।

सम्पूर्ण 'रामकहानी' बिल्कुल सरल–सहज कहानी की तरह ही लिखी गयी है। कहीं कोई शैलीगत अथवा भाषागत जटीलता अथवा क्लिष्टता देखने को नहीं मिलती है। स्वाभाविक सम्वाद–शैली की रोचकता पाठक को अंत तक बांधे रखती है। इस 'रामकहानी' की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि साधारणीकरण की दिव्य अवस्था में यह अपने पाठकों को कथा–पात्रों से अभिन्न कर देती है। सौन्दर्यबोध और रसानुभूति की दृष्टि से भी यह कृति संस्तुत्य है।

संक्षेप में, इतना ही कहना चाहूँगा कि तथाकथित आधुनिक–सभ्यता तथा अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा–व्यवस्था के व्यामोह और षड्यंत्र में फँसी वर्तमान युवा–बाल पीढ़ी अपने 'स्मृति–बोध' से कटती जा रही है। उन्हें वे मंगलकारी संस्कार नहीं मिल पा रहे हैं जिनसे मनुष्य में मनुष्यता का प्राण–प्रतिष्ठा होती है। भारत में रहते हुए भी उन्हें भारतीय होने का वास्तविक अर्थ तक पता नहीं है। अधिकांश को तो रामायण के प्रमुख पात्रों तक के बारे में कोई ज्ञान नहीं है। ऐसे में, शारदेय जी की सरल–सुबोध 'रामकहानी' उन्हें अपने खोए हुए 'स्मृति–बोध' को पुनः उपलब्ध होने तथा संस्कारवान होकर सच्चे अर्थों में मनुष्य बनने में निस्संदेह रूप से सहयोगी सिद्ध होगी। आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि शारदेय जी की 'रामकहानी' को साहित्य–जगत तथा पाठकवर्ग का समुचित सम्मान और प्रेम प्राप्त होगा। और अंत में, इस पावन और लोकहितकारी साहित्य–लेखन–प्रकाशन के लिए शारदेय जी को बहुत–बहुत बधाई और सर्जनात्मक भविष्य की ढ़ेर सारी शुभकामनाएँ। ■■

❑ के–33/5, टेल्को कॉलोनी, जमशेदपुर (झारखंड) 831004

ग़ज़ल

हिंदी/ग़ज़ल

राम कृष्ण धर

❑ उधमपुर, जम्मू–कश्मीर

बे–वजह फूल मेरे आस्ताँ पे क्यों रखना
जो नहीं दिल में अब उसको जबाँ पे क्यों रखना।।

रब के आगे बता जो कुछ भी दिल में है तेरे
हर कोई बात किसी राजदाँ पे क्यों रखना।।

अब खरीदार ही आता नहीं जिसका कोई
ऐसा सौदा बता अपनी दुकाँ पे क्यों रखना।।

क्या करें दोस्त ये कुल्फत हमारी किस्मत है
देख ये बोझ किसी मेहरबाँ पे क्यों रखना।।

चार लम्हें जमा तो लो जमीं पे पाँव अभी
ये गुरूर यार युहीं आसमाँ पे क्यों रखना।।

है अदू आज भी कच्चा उसे तो वक़्त मिले
लो, अभी तीर कोई भी कमाँ पे क्यों रखना।।

दिल हमारा तिरे अफ़्कार का गोदाम नहीं
छोड़ बेकार का कचरा यहाँ पे क्यों रखना।।

जब न सीने में ही ताकत, न पेरहन में जगह
बोझ यूहीं रफू का दिल–ओ–जाँ पे क्यों रखना।।

सुन भरोसा अगर उनको रहा ना उलफ़त में
हाथ भी अब यहाँ जलती शमाँ पे क्यों रखना।।■■

ग़ज़ल

हिंदी/ग़ज़ल

अमित कामरा 'अमूक'

अब मेहंदी लगती है रोजगारों के हाथ,
अब पीले नहीं होते बेरोजगारों के हाथ,

दीवाने हो, बाहर निकलो पैसे कमाओ
यूँ हीं नहीं मिलते जानाँ बहारों के हाथ.

जलो–गलो फिर निखरो यारा कनक सा,
अब चाँद नहीं सौंपे जाते सितारों के हाथ

हर राम को सिया मिले वह दौर अब नहीं
अब लोग नहीं चाहते धनुष कुँवारों के हाथ,

तो उठो, जगो फिर लड़ो सूर्य–सा दिन–रात,
फिर चाहें तुम माँग लो इक हजारों के हाथ।
■■

❑ सीर गोवर्धनपुर, लंका, वाराणसी

प्रेम के दरिया किनारे बैठकर प्रेम का महाउत्सव

हिंदी / पुस्तक समीक्षा

शहंशाह आलम

सच है, प्रेम कोई खिड़की न होकर एक पूरा दरिया होता है। दरिया भी कैसा– साफ, चमचम, मीठे पानी वाला। ऐसे दरिया किनारे बैठकर जब हम इसके पानी में देखते हैं, तो आकाश वहाँ पहले से अठखेलियाँ कर रहा होता है। आकाश और दरिया का प्रेम सबसे प्राचीन है, पुरातन है, पुराना है। दरिया के पास हमारा आना–जाना हो, न हो, आकाश का आना–जाना लगा रहता है। यानी आकाश दरिया को कभी अकेला नहीं छोड़ता। दरिया के शांत पानी में आप दिन में झाँककर देखते हैं, तब भी और चाँद की रोशनी में झाँककर देखते हैं, तब भी वहाँ आकाश हाजिर दिखाई देता है। ठीक उसी तरह आदमी का प्रेम भी आदमी के साथ हमेशा रहता आया है। प्रेम के इसी प्राचीनतम राग को एक जिल्द में समेटने का प्रयास है कवयित्री सुमन द्वारा संपादित प्रेम कविताओं का संचयन 'सदानीरा है प्यार'। इस पुस्तक में पचहत्तर कवियों की डेढ़ सौ से ज़्यादा कविताएँ संकलित की गई हैं। जो कवि–कवयित्री इस पुस्तक में शामिल हैं, वे हैं– राजेश जोशी, मंगलेश डबराल, विजय बहादुर सिंह, आलोक धन्वा, हरीश चंद्र पाण्डे, मदन कश्यप, स्वप्निल श्रीवास्तव, बलराज पाण्डेय, चंद्रकला त्रिपाठी, अष्टभुजा शुक्ल, कुमार अंबुज, सदानंद शाही, इला प्रसाद, श्रीप्रकाश शुक्ल, अनिल करमेले, जितेंद्र श्रीवास्तव, राकेश मिश्र, शहंशाह आलम, नीलेश रघुवंशी, मणिमोहन, भरत प्रसाद, पंकज चतुर्वेदी, संतोष कुमार चतुर्वेदी, अरुण शीतांश, वसंत सकरगाए, आशीष त्रिपाठी, मनीषा झा, सर्वेश सिंह, विनोद विट्ठल, अनिल पुष्कर, सुबोध श्रीवास्तव, कल्पना सिंह, अनुपमा तिवाड़ी, विवेक चतुर्वेदी, जीवन शैफाली, सोनी पाण्डेय, लोकमित्र गौतम, लिली मित्रा, वंदना गुप्ता, कुंदन सिद्धार्थ, विपिन चौधरी, ज्योति चावला, उमाशंकर चौधरी, मुन्नी गुप्ता, रीना सिंह, सत्या शर्मा 'कीर्ति', अभिनव निरंजन, उर्वशी गहलौत, लक्ष्मण प्रसाद गुप्ता, शिरोमणि आर. महतो, अनुपम निशांत, मनीषा श्री, शैलजा पाठक, श्वेता राय, विजया शर्मा, मिथिलेश कुमार राय, सपना भट्ट, सुशोभित, कविता कादम्बरी, सीमा सिंह, शालिनी सिंह, प्रदीप त्रिपाठी, अंचित, स्मिता सिन्हा, गार्गी मिश्र, सुमित चौधरी, कुमार मंगलम, गौरव पाण्डेय, गौरव भारती, संदीप तिवारी, आकांक्षा प्रिया, शाश्वत उपाध्याय, नीरव, स्वाति मिश्रा और आनन्द सिंह गौतम।

प्रेम की तालीम मनुष्य का पहला कर्तव्य है। आज हम सबकुछ की तालीम पाना चाहते हैं, लेकिन प्रेम की नहीं। ऐसा है, तभी हम किसी का बलात्कार कर लेते हैं, किसी की हत्या कर देते हैं, किसी को लूट लेते हैं, किसी की जमीन हड़प लेते हैं, किसी का पैसा मार लेते हैं, किसी को गालियाँ बक देते हैं। जो आदमी अपने भीतर अगाध प्रेम के होने का दावा करता है, वह सबसे पहला काम यही करता है कि वह या तो प्रेम में किसी से धोखा खाता है अथवा किसी को धोखा देता है। यानी अब हम प्रेम की शुद्धता के साथ किसी को प्रेम करना नहीं चाहते। इतने के बावजूद, एक घर ऐसा है, जहाँ प्रेम अब भी निर्मलता, स्वच्छता, निश्छलता से बचा दिखाई देता है। इस घर के आसपास दरख़्त हैं, चिड़ियाँ हैं, जलकुंड हैं, पहाड़ हैं, फूल हैं, आकाशगंगाएँ हैं और वह है कविता का घर। कविता के इसी पवित्र घर में रहते हुए कवयित्री सुमन ने प्रेम की इतनी सारी कविताएँ इकट्ठी की हैं और इन कविताओं को किताबी शक्ल देकर कविता की मुलायम दुनिया को सौंपा है। कहते हैं, प्रेम सदानीरा होता है, तभी प्रेम कविताओं के इस चयन का नाम 'सदानीरा है प्यार' रखा गया है। मेरे ख़्याल से, प्रेम का भविष्य यही है कि कोई आदमी जितनी दफा किसी की मुहब्बत को मारने की कोशिश करता है, उसकी मुहब्बत उतनी ही बार अद्वितीय होकर, क्लासिक होकर, विराट होकर प्रकट हो जाती है। पुनर्जीवित हो जाती है। अपने विरुद्ध बढ़ रही घेराबंदी को तोड़ डालती है। इस संकलन के लिए कवयित्री सुमन ने कविताओं का चयन और संपादन करते हुए इस बात का ख़ास ख़्याल रखा है कि राजेश जोशी की पीढ़ी के साथ–साथ उनके बाद की पीढ़ी की कविताएँ हों और नई पीढ़ी का भी प्रतिनिधित्व इस संचयन में रहे। कवयित्री सुमन इस कोशिश में कामयाब होती दिखाई देती हैं।

हमारे चलने के लिए प्रेम का रास्ता सबसे अच्छा रास्ता है। इस रास्ते पर चलने में ढेरों कठिनाइयाँ आती हैं, तब भी, यह यात्रा हमेशा से रोमांचक रही है। 'सदानीरा है प्यार' में संकलित राजेश जोशी की कविता 'तितलियाँ' में प्रेम की यात्रा के इस रोमांच को बखूबी महसूस किया जा सकता है, ''हरी घास पर ख़रगोश / ख़रगोश की आँखों में नींद / नींद में स्वप्न / चाँद का / चाँद में क्या? / चाँद में चरखा / चरखे में पोनी / पोनी में कतती / चाँदनी / चाँदनी में क्या? / चाँदनी में पेड़ / पेड़ पर चिड़िया / चिड़िया की चोंच में / संदेसा ऋतु का / ऋतु में क्या? / ऋतु में फूल / फूल पर तितलियाँ / हरी पीली लाल बैंजनी / रंग–बिरंगी तितलियाँ / तितलियाँ / जैसे स्वप्न पंखदार / जैसे बहुरंगी आग के टुकड़े / उड़ते हुए / तितलियाँ जाती हैं घरों में / बिना आवाज, बेखटके / जवान होती लड़की के बदन पर / बैठती हैं उड़ जाती हैं / कि 'छू लिया' / प्रेम होगा अब तुझे किसी से / तितलियाँ ही तितलियाँ / तितलियों पर आँखें / लड़की की / लड़की की आँखों में क्या? / तितलियाँ (पृष्ठ 14–15)।'' राजेश जोशी की यह कविता उन लड़कियों की कल्पना की कविता है, जो ख़रगोश के पीछे भागती हुई बड़ी होती हैं, चाँद के पीछे भागती हुई बड़ी होती हैं, चिड़ियों के पीछे भागती हुई बड़ी होती हैं, तितलियों के पीछे भागती हुई बड़ी होती हैं, लेकिन यह भागना उनको प्रेम नहीं दिला पाता, प्रेम के बदले अधूरे सपने दिलवाता है, और कुछ नहीं। यथार्थ यही है, आज लड़कियों को

जो जीवन दिया गया है, उस जीवन में प्रेम के लिए कोई जगह नहीं होती है बल्कि जीवन को किसी तरह जी लेने का दबाव भर होता है। मंगलेश डबराल इसी विचार को अपनी कविता 'उस स्त्री का प्रेम' में कुछ इस तरह से बयान करते हैं, ''वह स्त्री पता नहीं कहाँ होगी/जिसने मुझसे कहा था/वे तमाम स्त्रियाँ जो कभी तुम्हें प्यार करेंगी/मेरे भीतर से निकल कर आई होंगी / और तुम जो प्रेम मुझसे करोगे/उसे उन तमाम स्त्रियों से कर रहे होगे/और तुम उनसे जो प्रेम करोगे/उसे तुम मुझसे कर रहे होगे/यह जानना कठिन है कि वह स्त्री कहाँ होगी/जो अपना सारा प्रेम मेरे भीतर छोड़कर/अकेली चली गई (पृष्ठ 18)।'' प्रेम को लेकर मंगलेश डबराल की कविता में मिलावट का कोई मामला दिखाई नहीं देता। प्रेम करने का सच यही है न कि हम जिससे मुहब्बत करते हैं, उससे हम मिल तक नहीं सकते। ऐसा है, तभी विजय बहादुर सिंह लिखते हैं,''बरसों बाद हम/बैठे इतने करीब/बरसों बाद फूटी आत्मा से/वही जानी–पहचानी सुवास/बरसों बाद हुए हम/धरती हवा आग पानी आकाश ('बरसों बाद', पृष्ठ 21)।'' आलोकधन्वा के साथ भी यही होता है। तभी प्रेम की हरेक ख़बर के भीतर की कथा ही तो सुनाते हैं आलोकधन्वा, ''पुराने टूटे ट्रकों के पीछे मैंने किया प्यार/कई बार तो उनमें घुसकर/लतरों से भरे कबाड़ में जगह निकालते/शाम को अपना परदा बनाते हुए/अक्सर ही बिना झूठ/और बिना चाँद के ('प्यार', पृष्ठ 27)।''

हम जिससे प्रेम करते हैं, उसके ललाट को चूमते हुए जो सुख हमको मिलता है, वही सुख हमें 'सदानीरा है प्यार' में संकलित कविताओं को पढ़कर मिलता है। हमारे साथ ऐसा इसलिए होता है कि यह दुनिया जिस तरह रोज खुद को नई कर लेती है, उसी तरह इश्क भी कभी पुराना नहीं होता। इस रोज नई होती दुनिया का और इस रोज नए होते इश्क़ का मिजाज एक जैसा है। यानी दोनों खुद को कभी पुराना नहीं होने देते। हम जो इस दुनिया में जी रहे होते हैं या हम जो इश्क़ कर रहे होते हैं, हमारी देह, हमारी शक्ल, हमारी आवाज जरूर पुरानी पड़ जाती है। हरीश चंद्र पाण्डे की कविता 'वह मेरे बचपन की फोटो देख रही है' हमारे जीवन की इसी गाथा को विस्तारती है, ''वहाँ, मेरे बचपन में क्या हो सकता है तुम्हारे लिए/वो मकान वह बछिया जिनके आगे मैं खड़ा हूँ फोटो में/ बिना इन दोनों को समझे नहीं समझ सकतीं /लेकिन न वो मकान रह गया है अब और न बछिया (पृष्ठ 31)।'' जीवन के इसी नायाब रंग के बहाने मदन कश्यप अपनी कविता 'पनसोखा है इंद्रधनुष' में प्यार को संबोधित करते हुए कहते हैं, ''क्या तुम वही थीं/ जो कुछ देर पहले आई थी इस मिलेनियम पार्क में/सीने से आइपैड चिपकाए हुए/वैसे किस मिलेनियम से आई थीं तुम/प्यार के बाद कोई वही कहाँ रह जाता है जो वह होता है (पृष्ठ 35)।''

दरअसल प्रेम वह औषधि है, जो जीवन के बचाव में हमेशा काम आती है। अब इस औषधि की पहुँच को दूर तक फैलने से रोका जा रहा है। एक सवाल यह उठ सकता है कि जब सरकारें प्रेम पर पहरा खुद लगाने को तत्पर हुई जा रही हैं, तब मनुष्य अपने प्रेम को कैसे बचाए? चिंता वाजिब है। पहले घर वाले हमारे प्रेम पर अपनी निगाहें रखते थे, आस–पड़ोस के लोग हमारे प्रेम पर अपनी निगाहें रखते थे, अगल–बगल के छोकरे हमारे प्रेम पर अपनी निगाहें रखते थे। अब तो हमारे द्वारा चुनी हुई सरकारें हमारे प्रेम पर पहरा लगाने के लिए काला क़ानून बनाकर ताल ठोंक रही हैं। लेकिन प्रेम पर क्या कोई पहरा लगा पाया है, नहीं न, फिर सरकारें किसी के सच्चे प्रेम को कैसे क़ैद कर सकती हैं? सरकारें यह बात खूब अच्छी तरह से जानती हैं कि प्रेम क्रांति को जन्म देता है और क्रांतियों से सरकारें डरती रही हैं। यही वजह है, सरकारें प्रेम के विरुद्ध खड़ी दिखाई देती हैं। सच में, यह प्रेम को लेकर एक बेहद हिंसक समय है, तब भी प्रेम को तो हमेशा आजाद रहना है, कोई सैयाद किसी की मुहब्बत को क़ैद करने की ख़ातिर लाख अपने जाल बिछाता फिरे। फिर प्रेम के बचाव में जब कविता की सारी बिरादरी पूरी ताक़त लगाकर हमेशा से डटी चली आई है, प्रेम को तो हमेशा बचे ही रहना है। प्रेम के बचाव में हमारे कवि कहते हैं– ''अक्सर मैं तुम्हारे पास अपना रूमाल भूल जाता हूँ/कहीं गिर जाती है मेरी क़लम/मैं भी तुम्हारे पास थोड़ा छूट जाता हूँ/इस आवाजाही में मुझे कुछ अपनी भूली हुई चीजें/वापस मिल जाती हैं ('हिंसक समय में प्रेम', स्वप्निल श्रीवास्तव, पृष्ठ 41)।''

''तुमसे मिलकर लगता है /जैसे कई दिनों से झुराए पौधे को मिलता है/आषाढ़ की पहली बरसात का पानी/जैसे शहर के व्यस्ततम चौराहे पर खड़े किसी मजदूर को/दिन भर के लिए ही सही/मिल जाता है कोई छोटा–मोटा काम ('तुमसे मिलकर', बलराज पाण्डे, पृष्ठ 43)।''

''हाँ यह सच है कि/प्रेम ख़त्म नहीं हुआ है/बस उसकी जरूरत ख़त्म हुई है (चंद्रकला त्रिपाठी, 'प्रेम एक भूली हुई लहर', पृष्ठ 46)।''

''चार महीनों में/मैंने संध्या के साठ रूप देखे/और उषा के एक सौ बीस/चौमासे भर/बादल पानी भरते रहे होंगे तुम्हारे आगे ('चौगुनी नई', अष्टभुजा शुक्ल, पृष्ठ 49)।''

''यह दिन की चट्टान है जिस पर मैं बैठता हूँ/प्रतीक्षा और अँधकार उम्मीद और पश्चाताप/ वासना और दिसंबर वसंत और धुआँ/मैं हर एक के साथ कुछ देर रहता हूँ ('यहाँ पानी चाँदनी की तरह चमकता है', कुमार अंबुज, पृष्ठ 53)।''

''मैं जिससे सालों साल प्यार करता रहा हूँ/उसे कितना जानता हूँ/जितना उसे रोज–ब–रोज देखता हूँ/या देख पाता हूँ/रूप और रंग से/देह और धजा से/दफ़्तर से घर/घर से दफ़्तर/आते–जाते/बाजार से ख़रीदे हुए/सामानों से/उस घर से/जिसमें वह रहती है ('उसे कितना जानता हूँ', सदानंद शाही, पृष्ठ 59)।''

''अबकी बार जब आऊँगा/तो तुमसे नहीं मिलूँगा मैं /तुमसे मिलकर घर याद आता है/घर जो तुम्हारे साथ मिलकर/मैं बनाना चाहता था ('अबकी बार जब आऊँगा', इला प्रसाद, पृष्ठ 66)।''

''विचित्र है, जब तुम मेरे पास थी/मैं एकवचन में सोचा करता था/आज जब तुम दूर हो/मैं बहुवचन में सोचा करता हूँ ('एकवचन', श्रीप्रकाश शुक्ल, पृष्ठ 68)।''

यथार्थ यही है कि मनुष्य प्रेम में विचित्र हो जाता है। विचित्र इस तरह कि एक आदमी लुक–छिपकर जिससे प्यार करता है, उस आदमी को यही लगता है कि उसके प्यार के बारे में किसी को कुछ भी नहीं मालूम, जबकि सच्चाई यह होती है,

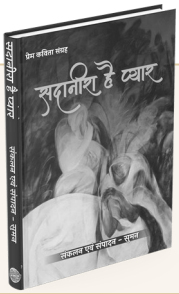

पुस्तक : सदानीरा है प्यार
संपादक : सुमन
प्रकाशक : सर्व भाषा ट्रस्ट, नई दिल्ली
मूल्य : ₹ 300

उसके प्यार के बारे में सारे जहान को मालूम रहता है। आप प्यार में पड़कर किसी को चिट्ठियाँ लिखते हैं, तो उन चिट्ठियों को पहले कोई और पढ़ चुका होता है। प्यार सचमुच सदानीरा जो होता है।

तभी यह किसी के छुपाए नहीं छुपता। प्यार दरिया में हिलती–डुलती उस नाव की तरह है, जो हमेशा अपनी सवारी के लिए उकसाती है। 'सदानीरा है प्यार' में संकलित कविताएँ भी उसी कश्ती की तरह हैं, जो कश्ती आपको सिर्फ़ मुहब्बत करना सिखाती है। तेज बारिश हो, तब भी। तेज धूप हो, तब भी। तेज हवा हो, तब भी। अनिल करमेले की कविता 'इसी भरोसे के लिए', जितेंद्र श्रीवास्तव की कविता 'आँखों में चिट्ठियाँ', राकेश मिश्र की कविता 'प्रेम करते हो', नीलेश रघुवंशी की कविता 'मुझे प्रेम चाहिए', मणिमोहन की कविता 'एक दिन', भरत प्रसाद की कविता 'तुम्हारे झर–झर मुस्कान की अदा', पंकज चतुर्वेदी की कविता 'अगर यही प्रेम है', सन्तोष कुमार चतुर्वेदी की कविता 'प्यार हो जाता हूँ', अरुण शीतांश की कविता 'पेड़ के गिर जाने पर', वसन्त सकरगाए की कविता 'जरूरत', आशीष त्रिपाठी की कविता 'समुद्र में आकाश', मनीषा झा की कविता 'प्रेम के पूरेपन में पेंच थे बहुत', सर्वेश सिंह की कविता 'डूबना सिर्फ मरना नहीं होता', विनोद विट्ठल की कविता 'बड़ी उम्र की प्रेमिकाएँ', अनिल पुष्कर की कविता 'वो ख़्वाबों के पर गिनती है', सुबोध श्रीवास्तव की कविता 'तटबंध', कल्पना सिंह की कविता 'थाती', अनुपमा तिवाड़ी की कविता 'छुअन तुम्हारी', विवेक चतुर्वेदी की कविता 'तुमने लगाया था', जीवन शैफाली की कविता 'तुमसे मिलने से पहले', सोनी पाण्डेय की कविता 'तुम्हारा आख़िरी प्रेमपत्र', लोकमित्र गौतम की कविता 'तुम्हारे जैसा कोई नहीं', लिली मित्रा की कविता 'बादल', वन्दना गुप्ता की कविता 'तुम्हारे क़रीब', कुंदन सिद्धार्थ की कविता 'कठिन दिनों में', विपिन चौधरी की कविता 'प्रेम के लिए माकूल तैयारी', ज्योति चावला की कविता 'प्यार में डूबी लड़की', उमा शंकर चौधरी की कविता 'जब तुम थीं', मुन्नी गुप्ता की कविता 'तुम्हारे और मेरे दरम्यान', रीना सिंह की कविता 'रंग', सत्या शर्मा 'कीर्ति' की कविता 'तुम पुकार लेना', अभिनव निरंजन की कविता 'प्रेम कथा', उर्वशी गहलौत की कविता 'चालीस पार उम्र की स्त्री का प्रेम', लक्ष्मण प्रसाद गुप्ता की कविता 'तुम्हारे चले जाने से', शिरोमणि आर. महतो की कविता 'छोटे शहर में प्यार', अनुपम निशान्त की कविता 'अपना शून्य गढ़ो', मनीषा श्री की कविता 'अब तेरी याद नहीं आती', शैलजा पाठक की कविता 'प्रेम हार नहीं मानता', श्वेता राय की कविता 'मेरे पुरुष', विजया शर्मा की कविता 'तुम्हारे लॉन का गुलमोहर', मिथिलेश कुमार राय की कविता 'लड़की हँसने के मामले में कंजूस थी', सपना भट्ट की कविता 'वाद्य यंत्रों से भरे कमरे में', सुशोभित की कविता 'फारूख़ शेख़ जैसा लड़का हो', कविता कादंबरी की कविता 'तुमसे प्रेम करते हुए', सीमा सिंह की कविता 'जहाँ तुम नहीं हो', शालिनी सिंह की कविता 'लौट आना', प्रदीप त्रिपाठी की कविता 'भीगे हुए प्रेम में शहर', अंचित की कविता 'अँधेरे छत पर तुम', स्मिता सिन्हा की कविता 'अनुराग', गार्गी मिश्र की कविता 'अंतिम', सुमित चौधरी की कविता 'स्मृतियाँ', कुमार मंगलम की कविता 'चाह', गौरव पाण्डेय की कविता 'गाँव की लड़कियों का प्रेम', गौरव भारती की कविता 'भाषा', संदीप तिवारी की कविता 'गुमशुदगी', आकांक्षा प्रिया की कविता 'जाने क्यूँ', शाश्वत उपाध्याय की कविता 'अब इजाजत दे दो मेहरम', नीरव की कविता 'मन की चूक', स्वाति मिश्रा की कविता 'तुम्हारे शहर की धूप', आनंद कुमार गौतम की कविता 'तुम जान कहाँ पाती हो' तेज बारिश, तेज धूप, तेज हवा में हमारे काम आने वाली कविता है। ये कविताएँ सचमुच में प्रेम का उत्सव मनाती हैं। ये कविताएँ इस उजाड़ समय को अपनी आवा. जाही से दुरुस्त करती हैं।

अंततः 'सदानीरा है प्यार' की कविताओं के चयन, संपादन, प्रकाशन को लेकर मेरी राय यही है कि ऐसे कार्य समकालीन हिंदी कविता को सार्थकता प्रदान करते रहे हैं। प्रेम की अनुभूति मात्र से जब मनुष्य के भीतर छुपा हुआ संगीतकार बाहर निकल आता है, तो तसव्वुर कीजिए कि प्रेम कविताओं के इस संचयन को पढ़कर हमारे अंदर का रागात्मक मनुष्य किस कदर खुश होगा। वैसे भी, आज जब प्रेम के शत्रु यहाँ–वहाँ घूमते, टहलते, खी–खी करते दिखाई दे रहे हैं, तो कविता की प्रेम को बचाने जिम्मेदारी बढ़ जाती है। इस जिम्मेदारी को इस पुस्तक की संपादिका और कवयित्री सुमन ने जिस खूबसूरती से अंजाम दिया है, 'सर्व भाषा ट्रस्ट' ने उतनी ही खूबसूरती से इस किताब को छापा है। यह किताब खुद को पढ़े और सराहे जाने की माँग करती है। ■■

❑ हुसैन कॉलोनी, नोहसा बगीचा, फुलवारीशरीफ, पटना (बिहार)

स्वास्तिक

मराठी / कविता

माधवी पाण्डेय

मैं स्वास्तिक हूँ दहलीज की
राहों में पलके बिछाती हूँ।
मैं स्वास्तिक हूँ मुडेर की
उत्सव में हर्ष मनाती हूँ।

चिन्हित होकर देवालय में
श्रद्धा और विश्वास जगाती हूँ।
बनकर आराधना का पर्याय
मन का क्लेष मिटाती हूँ।

सदा जूझती आडम्बर से–
श्रद्धा की साक्षी बनकर
मिट न सकी कभी मैं
सरल हृदय के विश्वासों में

कभी नही की ईष्या मैंने
चाहे कितनी रजरंजित हुई
सजती रही मानव हित में
स्थिर रही घर–देवालय में

कभी स्मृतियों में जिन्दा रहती
कभी प्रस्तर पर अंकित हो जाती हूँ।
शान्त नयनों से जब भी देखो
तो संस्कारों में बस जाती हूँ।

मैं मेंहदी बन रच जाती हूँ
नव–युगलों के हाँथों में
मैं सियाराम को अर्पित हूँ
सजकर आरती की थाली में। ■■

❑ वाराणसी (उ.प्र.)

डॉ. कल्याणी कबीर

स्त्री संघर्ष को बयां करती पुस्तक : बोलने दो

हिंदी/पुस्तक समीक्षा

पुस्तक : बोलने दो/ कवयित्री : डॉ. संध्या सिन्हा 'सूफ़ी'
प्रकाशक : सर्व भाषा ट्रस्ट, नई दिल्ली/मूल्य : ₹ 250

''लेखनी का सहम जाना/स्याही का जम जाना/खून का ठंडा हो जाना/व्यक्ति का तटस्थ हो लेना/विचारों का अचार डाल देना/इस भयानक भयभीत काल में/सबसे खतरनाक है/उससे भी ज्यादा खतरनाक है/चुप्पी का चीखना !''

ये पंक्तियाँ काव्य संग्रह 'बोलने दो' से ली गई हैं। 'चीखना जरूरी है' शीर्षक कविता की ये पंक्तियाँ ही काफी हैं इस काव्य संग्रह की रचयिता के मन की बौखलाहट को बयान करने के लिए।

एक सशक्त कवयित्री, समर्थ शिक्षिका और जिम्मेदार गृहिणी के तिहरे दायित्व को पूरी क्षमता और दक्षता से निभाती हुई कवयित्री डॉक्टर संध्या सिन्हा जमशेदपुर ही नहीं बल्कि पूरे झारखंड और देश में अपनी एक अलग पहचान रखती हैं।

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि उनकी पहचान को 'बोलने दो' काव्य संग्रह ने और भी पुख्ता जमीन प्रदान किया है। समाज में स्त्री जीवन के चतुर्दिक परिक्रमा करते हुए दुख, दर्द और संघर्ष को उन्होंने बड़े ही काव्यात्मक रूप में पाठकों से जोड़ने का एक रचनात्मक प्रयास किया है। इस काव्य संग्रह की पहली कविता 'मैं और मेरी जिंदगी' की यह पंक्तियाँ मन को छूकर गुजरती हैं– ''होता है ऐसा, निकलूँ यात्रा पर तेरे साथ बीच में ही छुड़ा लेती तू अपना हाथ/हर बार बदल जाते हैं वक्त के मायने/मंजिल पर पहुँच देती हूँ दस्तक.../ठीक होते हैं पते/पर बदल जाते हैं ठिकाने !''

इन पंक्तियों में स्त्री के जीवन–यात्रा के जद्दोजहद और उबड़–खाबड़ अनुभव को बड़े ही संवेदनशील शब्दों के द्वारा अभिव्यक्त किया गया है। स्त्री की आवाज और आत्मविश्वास को बुलंद करती है पंक्तियाँ– ''जानती हूँ बोलना/उनको अच्छा नहीं लगता/जरूरी तो नहीं/जो उन्हें अच्छा ना लगे/हम ना करें!''

गुजरते समय को नहीं पकड़ पाने की पीड़ा झलकती है कविता 'समय' में। इस कविता की इन पंक्तियों के साथ पाठक खुद को जोड़ना पसंद करेंगे– ''लोग कहते हैं/तुम खटखटाते हो दरवाजे/ मैंने तो कभी नहीं सुना सुनती हूँ तो बस/तुम्हारी सर्र से निकल जाने की आवाज/हाँ, तुम्हारे चले जाने पर /तुम्हारे दस्तखत मैंने देखे हैं, कई जगहों पर!''

कवयित्री बड़ी संजीदगी से मानवीय संबंधों का प्रकृतिकरण करती है, जब वह 'बादल बेटा' शीर्षक कविता के माध्यम से नौकरी शुदा बेटे को आसमान में घिर आया सावन का बादल कहती हैं। देखें–''साल में फिर भी आता तो है/ जी भर प्यार लुटाता तो है/बड़ी कमाई लाता तो है जाते–जाते घर अपना/भर जाता तो है,/लो आ गया सावन/फिर आया बादल अपने घर नौकरीशुदा बेटे की तरह !''

इस कविता में नौकरीशुदा बेटे की तुलना बादल से करना एक अद्भुत बिम्ब है, जो कवयित्री डॉ. संध्या सिन्हा के कल्पना की उड़ान के विस्तार को बताता है।

स्वतंत्र भारत की आत्मनिर्भर स्त्री की गरिमा युक्त पहचान होने पर भी परतंत्रता की पीड़ा महसूस करती कवयित्री अपनी बात बेबाक कहती हैं– ''आजादी तू किधर गई...?/इस बेटी को क्यों नहीं मिलती/क्या सच है .....!''

'नेट पैक' शीर्षक कविता तकनीकी दुनिया में दरकते, सिसकते और कसमसाते परिवारिक रिश्तों की संवेदनशील बानगी प्रस्तुत करती है। किस प्रकार मोबाइल पर चहलकदमी करती हमारी उंगलियों ने हमारे आसपास के रिश्तों का गला घोंट दिया है, इस कड़वे सच को बहुत ही नजदीक से इंगित करती है कविता 'नेट पैक'। इस कविता की पंक्तियों से मुलाकात कीजिए– ''याद आया/नेट पैक खत्म हो गया है हमारे मोबाइल का/बहुत दिनों बाद/ हम दोनों आज/बैठे साथ/बहुत दिनों बाद।''

स्त्री को सृष्टि के समकक्ष सक्षम और सहनशील बताती है पंक्तियाँ– ''मैं अपनी पूरी जीवनी शक्ति से/कभी बच्चों के कमरे में कभी पूजा घर में तो/कभी रसोई घर की देहरी पर/शील–सम्मत थिर लौ से जलती रहूँ/युग का भविष्य गढती रहूँ/आखिरकार औरत हूँ मैं.../सृष्टि मूल, जीवन–ज्योति।''

मन को समंदर बताते हुए कवयित्री अपने मन की बात कहती हैं कि–''मन... हाँ मन समंदर है! उफनता है रोज/ऊपर ऊपर पर गहरे शांत गंभीर शिवरूप होता है।/उर्जस्वित प्रकाश से दमकता/जीवन को रसधार पिलाता सचमुच मन समंदर होता है।'' –स्त्री मन की कथा व्यथा को पाठकों के समक्ष रखती है कविता 'मैं चाहती हूँ लिखना'। इस कविता की कुछ पंक्तियाँ देखिए– ''मैं चाहती हूँ लिखना/वह सब कुछ लिख देना/जो रोज खौलता है/पिघलता है/सजता और संवरता है मेरे भीतर।''

झारखंड की धरती से संबंध रखती कवयित्री डॉ संध्या सिन्हा ने अपनी आदिवासी सखी के नाम भी एक कविता अर्पित किया है– ''...अपनी खोंपे में खोंस कर टेसू,/लाल किनारी ऊंची साड़ी, पैरों रचे महावर/मांदर की थाप पर/प्रिय संग समवेत नाच सको निःशंक/ओ जामुनी गात मेरी प्यारी सखी/इतना तो हक है तुम्हें....!''

डॉ. संध्या सिन्हा स्त्री मन की संवेदनाओं को बहुत ही बारीकी से शब्दों का चोला पहनाती हैं। उनकी यह प्रतिभा और रचनात्मकता विलक्षण है। उम्मीद है कि आगे भी उनकी लेखनी अपने समय के करवटों को महसूसते हुए स्त्री जीवन के संघर्ष को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करती रहेंगी। उनकी ही लिखी कविता 'सँवर, अभी और सँवर' की पंक्तियों से उन्हे शुभकामनायें देती हूँ–''कई महफिल अब भी बाकी है,/तेरा शामिल अब भी बाकी है,/कुछ हासिल अब भी बाकी है,/एक साहिल अब भी बाकी है, मेरी जान तू सँवर,/सँवर अभी और सँवर...!''■■

❑ प्राचार्य, जे.के.एम. कॉलेज, घाटशिला, जमशेदपुर (झारखंड)

स्त्री-कांति का उद्घोष करती पुस्तक 'स्त्री का पुरुषार्थ'

लिली मित्रा

हिंदी / पुस्तक चर्चा

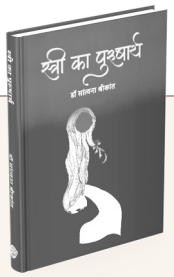

कविता-संग्रह : स्त्री का पुरुषार्थ
रचनाकार : डॉ. सांत्वना श्रीकान्त
प्रकाशक : सर्वभाषा ट्रस्ट, नई दिल्ली
मूल्य : ₹ 250

कविताओं पर अपनी प्रतिक्रिया रखने से पहले मैं 'पुरुषार्थ' शब्द के आशय पर कह लूँ। पुरुष + अर्थ जिसका अर्थ बनता है 'एक विवेकशील प्राणी का लक्ष्य'। एक विवेकशील प्राणी का लक्ष्य केवल जीवन ही नही होता है बल्कि जीवन मरण का लक्ष्य भी होता है। जीवन मरण के चक्र के बीच मानव जीवन का लक्ष्य आखिर है क्या? किस हेतु जन्म ? कारण क्या है उसके होने का? क्यों दिन-रात की जद्दोजहद?

ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जो हम सभी मनुज सोचते हैं, और यही सोच काव्य में पिरोकर कवयित्री भी प्रस्तुत कर रही हैं। आश्चर्य तो यह है कि पशु-पक्षी भी सोचते हैं, नदिया, पहाड़ भी सोचते हैं? यह प्रक्रिया जड़ और चेतन में निरंतर रहती है। वैदिक साहित्यशास्त्र, ग्रन्थ-पोथी-पुराण सभी यही कहते हैं कि मनुज जीवन का अंतिम लक्ष्य 'आत्म का परमात्मा' में लीन हो पूर्णत्व प्राप्त करना है। इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चार पुरुषार्थ के मध्य जीवन चक्र चलायमान रहता है।

'धर्म' का सही ज्ञान ही 'अर्थ' यानि कार्य में कुशलता लाता है जिससे अर्थोपार्जन कर जीवन की सभी मूलभूत आवश्यकताएँ, कामनाएँ, इच्छाएँ, 'काम' भोगते हुए 'मोक्ष' यानि जीव का परमतत्व में मिलन होता है।

मेरी समझ के अनुसार पुरुषार्थ के संक्षिप्त मायने यही है। अब मै सरकती हूँ कवियत्री डॉ. सांत्वना श्रीकांत के पहले काव्य संग्रह के शीषर्क की ओर 'स्त्री का पुरुषार्थ'। सोचने पर विवश हूँ और प्रश्नचिह्न लगता है सृष्टि रचयिता की इस विराट व्यवस्था पर जहाँ पुरुषार्थ केवल पुरुषों के लिए रखा गया। स्त्री को महज त्याग, वात्सल्य, कारणजन्मा, विरह-विलाप तक रखकर पुरुष अपने वर्चस्व का परचम फहरा देता है। क्या स्त्री प्राणी नहीं या उसमें विवेक नहीं है? परमतत्त्व में लीन हो मोक्ष प्राप्ति की अधिकारिणी स्त्री नहीं है?

सीता, राधा, यशोधरा, द्रौपदी, आहिल्या या निकाल लाइए कोई भी स्त्री-पात्र, उनके लिए कहीं भी मोक्ष प्राप्ति के लिए किसी तरह का कोई पुरुषार्थ नहीं कहा गया। सब अपने नायक के लिए पुरुषार्थ प्राप्ति का एक निमित्त बन, कभी धरती में समाई, कभी भरी सभा में अपमानित हुईं या महल के किसी कोने में सुबकती रहीं। ब्रह्मा जी ने भले ही एकतरफा काम किया हो लेकिन कवयित्री ने 'स्त्री का पुरुषार्थ' रचकर नारी जीवन को आधार प्रदान कर दिया है। बड़े ही सुनियोजित एवं सुगठित तरीके से, पूरा काव्यसंग्रह 'चार स्त्रीकालों' में विभक्तकर, अंतर से लेकर बाह्य जगत की तमाम उलझनों, परिस्थितियों, दायित्वों का निर्वाह करते हुए, मन की सुकोमल दुनिया को भी सजाए रखा जो उसके ऊर्जा का मूल स्रोत बना। हर तरह के सामाजिक, पारिवारिक दंश, विकृतियों, यातनाओं से लड़ते हुए तथा बार-बार अपने मै को खंडित देखते हुए अपने लिए बुद्धत्व का मार्ग बनाया एवं स्वजनित मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त किया।

काव्य संग्रह की पहली रचना 'मिलूँगीं मैं तुम्हे शिखर पर' में पूरी व्यवस्था का संरचना चार्ट देखा जा सकता है और इसप्रकार सभी मोह से विलग हो अपने लिए एक ऐसे 'मोक्ष शिखर' की रचना की गई है, जहाँ पुरुष अपने तीनों पुरुषार्थ जी कर अंतिम का आरम्भ करता है, जो कि एक ऐसे बिन्दु पर है जहाँ बुद्ध की मोक्ष प्राप्ति और यशोधरा की विरह वेदना अपने शीर्ष पर है। विगत की प्रतिध्वनियाँ जहाँ नही पहुँच पातीं 'मुक्त-बंधन' जैसे शब्दों से परे एक बुद्ध-धरातल है।

ममता, प्रेम, वात्सल्य, समर्पण के बाद भी जब वो इस पुरुष आधित्पत्य में अपने लिए स्थान नहीं बना पाती, तब उसकी वेदनाएँ एक बिन्दु पर प्रत्यंचा की तरह खींच जाती हैं। इस असह्य पीड़ा से कवयित्री का स्त्री मन रोता, पीटता, विलाप करता नहीं है। वह इतनी सामर्थ्यवान है कि सभी संकीर्णताओं को तोड़ स्वयंसिद्धा बनती दिखती है। जिसमे अपने अस्तित्व को सार्थकता प्रदान करने वाला असीम सम्भावनाओं का उन्मुक्त गगन है। शीर्षक 'संकीर्णता तोड़ती औरतें' एक ऐसी ही रचना है।

स्त्रियाँ प्रेम में पराधीन नहीं होतीं, दुर्गम पथ पर चलते हुए थकती नहीं हैं और ना ही भूलती हैं अपना लक्ष्य वह जागती हैं दुनिया में प्रेम बचाने के लिए। प्रेम का सच्चा पाठ यदि पढ़ना है तो स्त्री से बेहतर कोई नहीं। 'इंसानों की दुनिया के लिए' शीर्षक रचना में एक स्त्री कैसे प्रयासरत् रहती है इस संसार को मानवीयता से भरापूरा बनाए रखने के लिए देखा जा सकता है।

अपने धर्म, कर्म, लक्ष्य प्राप्ति में किस मामले में स्त्री सामर्थ्य कम दिखता है? वह यह स्वीकारती है कि इस लक्ष्य प्राप्ति की पूर्णता अपने पुरुष के सानिध्य से ही सम्भव है। माना के अपने नायक के आलिंगन में वह अपने जीवन का सबसे श्रेष्ठ बसंत जीती है, राधा की तरह कृष्ण प्रेम का दीप जलाती है, परन्तु वह कोमलांगी, गिलहरियों-सी मासूमियत रखने वाली, चहकना चाहती है लाल पंखों वाली चिड़िया की तरह। ओढ़ लेना चाहती है अमलतास का पीला रंग, दुनिया की उदासी लील जाने के लिए। वह अपने लिए बसंत रचना जानती है। खुद को खोजती देश देशान्तर की अनंत यात्रा पर निकल जाना भी जानती है।

जीवन में प्रेम का मर्म जानती है। सभ्यताओं के विकास में प्रेम का महत्त्व पहचानती है, इसलिए वह अनंत हो जाना चाहती है, क्योंकि प्रेम की पवित्रता को संजो लेना वो बखूबी जानती है। चारों स्त्रीकाल खंड में स्त्री जीवन लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सतत् संघर्षशील है। यहाँ तक कि अपने नायक के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने लिए भी उसे संघर्ष करना पड़ता है, परीक्षाएँ देनी पड़ती हैं, प्रतीक्षाएँ करनी पड़ती हैं, स्वयं को स्थापित करना पड़ता है हर मोड़ पर, हर पड़ाव पर। ऐसे में कविताएँ उसकी एकमात्र वातायन हैं, सच्ची संगिनी हैं। अंतिम रचना में अपनी सबसे संवेदनशील संगीनी के लिए कवयित्री के भाव देखें– ''कविता जब समाप्त हो जाएगी,/तब तुम्हे मेरी चीखें/सुनाई देंगीं/सन्नाटे में गूँजती हुईं।/दरअसल, कविता सोखती रहती है/मेरे दुख और आँसू।''

सम्पूर्ण संकलन 'स्त्री–क्रांति' का उद्घोष है। सदियों से दमित आत्म एवं विरह विलाप से ऊबती स्त्री अपने लिए बुद्धत्व का पथ खुद निर्माण करने का जीगरा रखती है। लौकिक जगत के सभी दायित्वों/कर्मों का निर्वाहन कर सकने का सामर्थ्य उसकी कोमल दिखने वाली काया में है! आध्यात्म जगत की गहराइयों को आत्मसात् कर खुद को ब्रह्मलीन होने का धैर्य, गाम्भीर्य उसमें मौजूद है। 'स्त्री–क्रांति' की ये कविताएँ यह कह रही हैं कड़क तेवर में स्त्रियाँ हर वो काम सुव्यवस्थित रूप से करने का जज्बा रखती है जिन पर अपने वर्चस्व का दम्भ पुरुष समाज आज तक करता आ रहा है। ये कविताएँ मात्र 'स्त्री–विमर्श' का विषय नही हैं, बल्कि स्वयं को पुरजोर ढंग से कर्मरूप में स्थापित कर चुकी हैं। 'विमर्श' की सहानुभूति दिखाना इनकी अस्मिता का अपमान है।

मै तो इतनी अधिक प्रभावित हो चुकी हूँ डॉ. सांत्वना जी की रचनाओं से कि मुझे लगता है इन्हें इस संकलन का नाम 'स्त्री का पुरुषार्थ' नहीं, 'स्त्री का स्त्रार्थ' रख देना चाहिए था। इतना सब रचने, गढ़ने, करने का जज़्बा जब है स्त्री में तो अपने लिए एक नया शब्द गढ़ लेना कौन सा कठिन काम?

अंत में डॉ. सांत्वना श्रीकांत जी को उनके इस सशक्त क्रांति गीतों के लिए हृदय से आभार जताती हूँ। उनकी लेखनी के उज्ज्वल भविष्य के लिए मंगलकामनाएँ करती हूँ। लिखिए खूब लिखिए आपकी हुँकारती चेतना विश्व की समस्त स्त्रियों को जागृत करे। वे सजग हों, वे बुद्ध बनें, वे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को जीते हुए परमात्मा संग अपने आत्म को विलीन करने का लक्ष्य प्राप्त सकें। ■■

❑ फरीदाबाद (हरियाणा)

गीत

डोगरी/गीत

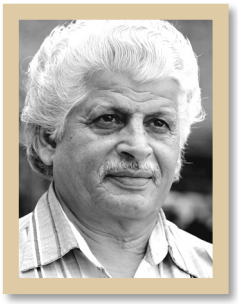

रतन भारद्वाज

तुंदा रुस्सना ते कदें हस्सना,
तुंदे चत्ते असें भुलाए नेईं।
किश गीत लिखे हे तुंद लेई,
ओह् कुसै गी असें सुनाए नेईं।।
किश गीत लिखे हे ...

कि'यां कड्डां मनै चा तुंदा मीं नींऽ
ओह् पींघें दे झूहटे ओह् पिपल दी छांऽ
झड़ी अक्खिएं इच छमा–छमा लग्गी,
मेरे अत्यरूं अक्सें गी भाए नेईं।
किश गीत लिखे हे ...

लेखा–जोखा असें हुन केह् करना
दरद दिलै दा बी हस्सियै जरना
जख्म असें गी जि'न्नै दित्ते हे,
ओह् अपने गै हे पराए नेईं।
किश गीत लिखे हे ...

बोल तुदे असें गी सतांदे रेह्
गीत गाई कंधें गी सनांदे रेह्
तुंदे औने दी हीक्खी च असें,
कोई साथी नमें बनाए नेईं।
किश गीत लिखे हे ... ■■

❑ 91/2, कश्मीरी मोहल्ला, अखनूर (जम्मू–कश्मीर) 181201

गज़ल

डोगरी/ग़ज़ल

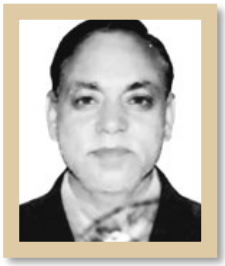

मनोज निश्चिंत

जीने लेई घड़ियां मी चार देई दे,
कंडे नेईं फुल्लें दे हार देई दे।

जलदे न जेह्ड़े उनें गी जलन दे हां,
हस्सी–हस्सी दोखियें गी मार देई दे।

जिंद देन, जान देन, हिरख सच्चा लान जो
मेरे खुदा बस, इ'यै नेह् यार देई दे।

गल्लां गै होन, तेरियां कन्नै मेरियां,
जीवनै दा गुज्झा तूं सार देई दे।

मुड़ी गेइयां न ब्हारां तेरे जाने नैं,
आइयै मेरे बागै गी ब्हार देई दे।

दैह्षतें घेरे दा माह्नूं दा जीवन,
कोई आइयै इत्थैं प्यार देई दे।

'निश्चिंत' मड़ा की रौह्नां ऐं दोआस तूं
तूं बी कुसे गी मनै च थाह्र देई दे। ■■

❑ 74/10, दूरभाष भवन अध्यापक नगर
रामनगर, जिला उधमपुर (जम्मू–कश्मीर)–182122

साहित्य वाटिका में बिखरी 'सेदोका की सुगंध'

डॉ सुरंगमा यादव

हिंदी/पुस्तक चर्चा

पुस्तक : सेदोका की सुगंध
संपादक : प्रदीप कुमार दाश 'दीपक'
प्रकाशक : उत्कर्ष प्रकाशन
मूल्य : ₹ 400

हाइकु, ताँका, चोका, सेदोका आदि जापानी काव्य विधाएँ हिन्दी काव्य साहित्य की लोकप्रिय विधाओं के रूप में प्रतिष्ठित हो रही हैं। हाइकु व ताँका के पश्चात अब धीरे–धीरे सेदोका संग्रह की संख्या भी बढ़ने लगी है। हिन्दी सेदोका संग्रह की श्रृंखला 'अलसाई चाँदनी' 2012,संपादक–रामेश्वर काम्बोज, भावना कुँअर एवं हरदीप कौर सन्धू से आरंभ हुई। इसके पश्चात उर्मिला अग्रवाल, देवेन्द्र नारायण दास, डॉ. रमाकांत श्रीवास्तव, डॉ. मिथिलेश दीक्षित, डॉ. सुधा गुप्ता, भावना कुँअर, मनोज सोनकर तथा प्रदीप कुमार दाश 'दीपक' तथा कृष्णा वर्मा के एकल सेदोका संग्रह प्रकाशित हुए हैं। जापानी काव्य विधाओं के प्रति पूर्ण समर्पण भाव से कार्य करने वालों में प्रदीप कुमार दाश का प्रमुख स्थान है। आप सृजन–संपादन दोनों प्रकार से जापानी काव्य विधाओं को हिन्दी काव्य साहित्य में लोकप्रिय बन. ाने तथा साहित्य की अभिवृद्धि में निरत हैं। आपके संपादन में सद्यः प्रकाशित 'सेदोका की सुगंध' एक महत्त्वपूर्ण कृति के रूप में प्रकाशित हुई है। यद्यपि सेदोका संग्रह की संख्या अभी उँगलियों पर ही है, परन्तु सुखद बात यह है कि धीरे–धीरे इनकी संख्या में वृद्धि हो रही है।

'सेदोका की सुगंध' साझा–संग्रह दो खण्डों में विभाजित है। प्रथम खण्ड में अकारादि क्रम से 55 रचनाकारों के सचित्र परिचय के साथ उनकी बीस–बीस सेदोका रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। द्वितीय खण्ड में अकारादि क्रम से 155 रचनाकारों की एक–एक सेदोका रचनाओं को प्रकाशित किया गया है। देशभर के नवोदित एवं प्रतिष्ठित 210 रचनाकारों की कुल 1255 सेदोका रचनाओं को संकलित करके प्रकाशित करने का श्रमसाध्य कार्य करने के लिए प्रदीप कुमार दाश 'दीपक' जी को बहुत–बहुत बधाई एवं साधुवाद!

इस संग्रह की सबसे बड़ी विशेषता विषय वैविध्य है। कवियों के संवेदन ने विभिन्न विषयों का स्पर्श किया है। संग्रह में प्रेम–भावुकता, प्रकृति–चित्रण, आस्था–विश्वास, आशावादिता तथा सामाजिक सरोकार इत्यादि हर विषय पर उत्कृष्ट रचनाएँ संकलित की गयी हैं। इन रचनाओं में काव्यतत्त्व सर्वत्र व्याप्त है।विषय की दृष्टि से देखें तो प्रेम विषयक अनेकानेक सेदोका रचनाएँ इस संग्रह की शोभा बढ़ा रही हैं। प्रेम सृष्टि का आदि तत्त्व है। प्रेम की अनुभूति मनुष्य के मन को सकारात्मक बनाती है तथा दूसरों के सुख–दुःख में सहभागी होने का भाव जाग्रत करती है। प्रेम विहीन जीवन शुष्क व नीरस होता है। अपनी उदासीनता के कारण व्यक्ति में दूसरों के प्रति संवेदन की कमी हो जाती है। प्रेम एक ऐसा भाव है जो उदारता, सहिष्णुता, संवेदनशीलता आदि भाव भी जाग्रत करता है। प्रेम का बंधन एक बार बँध जाये तो सहज तोड़ा नहीं जाता। डॉ. उर्मिला अग्रवाल लिखती है–''कैसे तोड़ोगे/वह माला जिसमें/बसी है गंध मेरी/फूलों की नहीं/यह माला है मेरे/मन के मनकों की।''

प्रेम के कई रूप होते हैं, पावन और सच्चा प्रेम अपने हर रूप में पूजनीय है। संतान के प्रति माता–पिता का प्रेम वात्सल्य कहलाता है। प्रेम का यह एक ऐसा रूप है, जो सदा निष्कलंक–निःस्वार्थ होता है। प्रदीप दाश ने माँ की महिमा पर सुन्दर सेदोका रचा है–''माँ केवल माँ/नहीं चाहिए उसे/व्यर्थ कोई उपमा/गुम जाती है/'उप' उपसर्ग से/सदा माँ की महिमा।'' (पृ0 82) ... जापानी काव्य विधाओं में प्रकृति का विशेष महत्त्व है। इस संग्रह में प्रकृति विषयक अनेकानेक सेदोका प्रकृ ति के सामीप्य का अहसास कराते हैं। डॉ. सुधा गुप्ता की सेदोका रचनाओं में प्रकृति के नाना रूप देखने को मिलते हैं। मानवीकरण की छटा दर्शनीय है–''मेघों ने मारी/हँस के पिचकारी/ भीगी धरती सारी/झूमे किसान/खेतों में उग आई/वर्षा की किलकारी।'' (पृ0 154)

रचनाकार अपने परिवेश के प्रति जागरूक होता है। वह सामाजिक सरोकारों से असंपृक्त नहीं रह सकता। वास्तव में सम–सामयिक स्थितियों पर लेखनी चलाना कवि–लेखक का उत्तरदायित्व भी है। साहित्य समाज का पथ आलोकित करने वाले ज्योतिपुंज के समान होता है। कन्या भ्रूण हत्या पर डॉ सतीश चंद्र शर्मा 'सुधांशु' का सेदोका दर्शनीय है– ''कन्या भ्रूण को/गर्भ में नष्ट करे/वह माता क्रूर है/सृष्टि का चक्र/अपना ही अंश है/यह भावी वंश है।'' (पृ0148) सत्साहित्य वही होता है, जो आशा, आस्था व विश्वास से परिपूर्ण हो। निराश जीवन में आशा का संचार करना साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ में से एक है। संग्रह के अनेकानेक सेदोका इस कसौटी पर खरे उतरते हैं। डॉ. मिथिलेश दीक्षित का सेदोका दृष्टव्य है–''बड़े जहाज/डूबते कई बार/बीच ही मझधार/छोटी–सी नाव/नहीं मानती हार/ किया करती पार।'' (पृ0111)

जिस प्रकार घने अंधेरे में दूर कहीं जलता एक छोटा–सा दीपक मन में आशा व साहस का संचार कर देता है, ठीक उसी प्रकार दुःख के समय छोटी–सी उम्मीद भी दुःख से उबरने में बड़ा सहारा बनती है। डॉ. सुरंगमा यादव की पंक्तियाँ है– ''घना अंधेरा/दूर कहीं जलता/छोटा–सा एक दीप/देता मन को/उजियारे से ज्यादा/आशा और सहारा।''(पृ0160)

'सेदोका की सुगंध' में रचनाओं का चयन बहुत ही सोच–समझकर किया गया है, उत्कृष्ट रचनाओं को स्थान देने के कारण यह संग्रह अपने–आप में विशेष है। सभी का उल्लेख संभव नहीं है। द्वितीय खण्ड में रचनाकारों का एक–एक सेदोका है, वहाँ भी चयन प्रशंसनीय है। ■■

❑ असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी
महामाया राजकीय महाविद्यालय, महोना, लखनऊ

ஞான சித்தர் பாட்டு

तमिल / कविता

डॉ. संजय रामन

தங்கத்தை பூட்டி வைத்தாய், வைரத்தை பூட்டி வைத்தாய்,
உயிரை பூட்ட ஏது பூட்டு?
குழந்தை ஞானி இந்த இருவர் தவிர இங்கே
சுகமாய் இருப்பவர் யார் காட்டு!
“ஜீவன் இருக்கும் மட்டும் வாழ்கை நமது மட்டும்”
இது தான் ஞான சித்தர் பாட்டு!
இந்த பூமி சமம் நமக்கு;
நம் தெருவுக்குள் மத சண்டை ஜாதி சண்டை வம்பெதுக்கு?

■■

ज्ञान सिद्धि का गीत

सोने और हीरे को ताला लगाकर
सुरक्षित बंद कर सकते हैं,
परंतु जीवन को इस शरीर में नहीं!
एक बच्चे और आत्मज्ञानी के अतिरिक्त
क्या कोई है जो आनंदित है?
जब तक शरीर में जीवन है
तब तक ही तुम
ऐसा कह सकते हो कि
ये जीवन सिर्फ मेरा है..।
यही है ज्ञान सिद्धि का गीत!
इस पृथ्वी पर सभी को
समान अधिकार प्राप्त है
एक परिवार की तरह
ऐसे में धार्मिक और जातिगत भेदभाव पर
हमारी गलियों में झगड़े क्यों? ■■

मूल : कविपेररसु पद्मभूषण वैरमुत्तु

❑ श्रीपति नगर, पक्कम्, थिरुनिंरवुर, तिरुवल्लुर, चेन्नै (तमिलनाडु)

కాలం మారుతూ మారుతూ ఉంది

तेलुगु / कविता

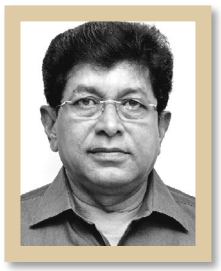

डॉ. टी महादेव राव

గడియారం ముళ్ళు అకస్మాత్తుగా ఆగిపోయాయి
ఆగిపోయాయి చక్రాలన్నీ
నగరం రద్దీ ఊరుకుంది
ఒకరినొకరు మనం
అపరిచితుల్లా అనిపిస్తున్నాం
దూరాలు తక్కువగా ఉండేవా
ఇప్పుడు ఇంకా పెరుగుతున్నాయి
దాని స్వంత గుల్లలో నక్కిన నత్తల్లా
భారీ ప్రపంచం సూక్ష్మ కుటుంబంగా మారిపోయింది
మన కుటుంబమే ప్రపంచం గా మారింది
మారింది ప్రతిదీ నిశ్చేష్టగా యాంత్రికంగా
కానీ మనమనుకునే గుండె చప్పుడు తిరిగొచ్చింది
శతాబ్దాలుగా గడిచాయి కలసి కూర్చుని
అన్ని విషయాలు మళ్ళీ జరుగుతుంటే
స్పందనలు తిరిగి జీవం పోసుకుంటున్నాయి
శుష్తమైన సంవేదనలు
క్రియాశీలత అనుభూతి ఇస్తున్నాయి
ప్రియమైనవారిని చూసి
దీర్ఘావధిని దాటిన భావన పుట్టింది
గత మధురమైన క్షణాల జ్ఞాపకాల్లో
జలధరింపు పుడుతుంది
అన్ని సన్నిహిత క్షణాలు ఎక్కడ పోయాయి
పరుగుల్లో అన్నీ క్షణాలు గడిచి పోయాయి
రండి సమయాన్ని ఆదా చేద్దాం మన పేరు మీద
మనతో సంబంధ బాంధవ్యాలున్న వారి
కోసం కూడా జీవిద్దాం
రండి, కాలం నుండి కొంత ఆనందాన్ని దొంగిలిద్దాం

■■

वक्त बदला-बदला-सा

अचानक ज्यों रुक गईं वक्त की सुइयां
थम गए पहिये सारे
ठहर गईं शहर की आपा धापी
आपस में एक दूसरे से हम
अजनबी से लगने लगे
फासले क्या कम थे
जो अब और भी बढने लगे
सिमट गए अपने ही खोल में सारे घोंघों की तरह
विशाल सा विश्व सूक्ष्म परिवार में हुआ तब्दील
अपना परिवार मात्र बन गया विश्व
निश्चेष्ट यांत्रिक बन चुका सर्वस्व
लेकिन धड़कनें अपनी लौट आयी हैं अपनेपन की
मिल बैठे लगा सदियों गुजर गये
साथ सारी बातें घटती तो लगता
रुके हुए स्पंदन फिर जीवित होने लगे
शुप्त सी संवेदनाएं सक्रियता का देने लगीं आभास
देख के अपनों को हुआ महसूस
समय के लंबे लांघने का सच
बीते मीठे लम्हों की स्मृति में
सिहर उठता है मन तन बदन
कहाँ खो गए थे सारे के सारे करीबी पल
दौड़ भाग में गुजर गए लम्हे सारे
आओ बचे वक्त को अपने नाम रखें बचाकर
उनके लिए भी जियें जिनसे है रिश्तों की डोरी
आओ कर लें वक्त से खुशियों की चोरी ■■

❑ विशाखापत्तनम् (आंध्र-प्रदेश)

गीत

डोगरी/कविता

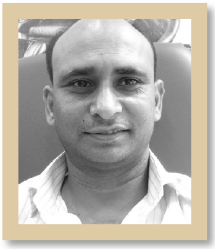

यशपाल निर्मल

रब्बा तेरियां बेपरबाहियां।
कुत्ते खान मलाइयां जी।।
माह्नू मरन ठंडू कन्नै।
बिल्लियैं लेई रजाईयां जी। ।
लुट्ट त्रूड़ पेई दी सारै।
नेईं कुतै सुनवाइयां जी।।
लुंड लीडर चोर चक्के।
बने दे बड्डे कांइयाँ जी।।
मां बचारी डुग डुग करै।
हेजें चाच्चियां ताइयां जी।।
जिंदे कोला निं पेट गुज्झे।
कुत्थै गेइयां दाइयां जी।।
यारी यार कमाल तेरी।
साइयां कुतै बधाइयां जी।।
रिश्ते नाते साक सरबंधी।
निरियां न गलफाइयां जी।।
पैह्ले अज्जकल ब्याह् होंदे।
फ्ही होन कुड़माइयां जी।।
मुड़ें गी सारे लाड लड़ांदे।
बेकदरियां अम्मा जाइयां जी।। ■■

❑ गढ़ी–बिशना, ज्यौड़ियां, अखनूर (जम्मू–कश्मीर)

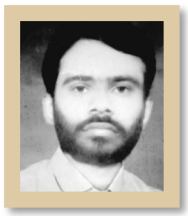

कुमार संभव

शरदें तोड़ै साग रे

अंगिका/कविता

चना खेत में चुकमुक बैठी
शरदें तोड़ै साग रे।

कन्नी परछी, टुसौ तोड़ै
कोबो में राखी के झाड़े,
खोछा गोछियाबै, केहुनी मोड़े
गुनगुन धूपो में बुली–बुली के,
मन भरलो अनुराग रे
चना खेत में चुकमुक बैठी
शरदें तोड़ै साग रे।

बीछी–बीछी सागो के काटै
रीची–रीची के ओकरा बांटे
चूल्हा पर राखी के घाटे
आगिन पर दै के रान्हे छै
रहि–रहि उचकाबै आग रे
चना खेत में चुकमुक बैठी
शरदें तोड़ै साग रे।

जाड़ा देखी ही ऐलो छै पिया
बरस बाद जुड़तै हमरो हिया,
रास आस में छटपट जिया
सोना चांदी के छै गहना,
गजरा पुष्प पराग रे
चना खेत में चुकमुक बैठी
शरदें तोड़ै साग रे।

स्वागत में छै हरिहर धरती
सीत बून्द में भरलो छै मोती
साँझ खड़ी लै हाथो में बाती
हर्षित धरा, सुहागिन लागै
भरि–भरि आँख विहाग रे
चना खेत में चुकमुक बैठी
शरदें तोड़ै साग रे। ■■

❑ मिर्जा चंगेरी, पुनसिया (बिहार)

आलप टिंगनिच

दोरली/कविता

दादा जोकाल

उरंगोर मारा एटक
मायोर निंदे पिटेन लेंग
मानासनाम आदनांक
नड़सोर लोकाम
वर्त्तुर माराता कुद्दी डामोर
एकाम नड़सो मंदान कालाम
डोकात मिंजी
मंदान माय
मेंगोर मिन्दोर बुद्ध मंदानोर
गम गब ईल्ली पुंगा
नानासनाम असोर अड़वक
मिसनी लेंग
पेरेंत (कस्सीमालात) गाल
तड़मी कक्कोर बूंक
इड़कोर एर कंड्क
माय बलाम टिंगनिच
अंदती मापोर
बूदेवील
कइंगोर गोड
कंड सूपता उड्डोर
बयाम वादां पोटोक
नर लोकाति गर्रमुणगोर
आलप पोइस मानि
अच्चाम काट तोपिसो मिंदा
गोदार, वांग, मारा, डोड
पुंगा, मावक, पिट्टे अंताट
पोटोक उड़िता वादान कालातोर ■■

❑ 4/4, कोटवा पारा–कारली, दक्षिण बस्तर, दंतेवाड़ा (छ.ग.)

पकी फसल को देखकर

हिंदी/कविता

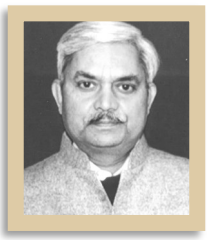

शिव कुमार पराग

पकी फसल को देखकर, सोचे बैठ किसान
कब तक साहूकार की मुट्ठी में खलिहान!

हरित क्रांति के बाद से, रुका हुआ अभियान
बस वोटों की फसल पर, उनका सारा ध्यान।

मँहगाई बढ़ती गयी, गिरे फसल के भाव
घाटे में खेती गयी, पड़ी भँवर में नाव।

खेत विदेशी हाथ में, जाने को मजबूर
अब अपने ही खेत पर, बनें किसान मजूर।

मेहनत, लागत, समय का, है नगण्य परिणाम
कब किसान तय करेगा, खुद अनाज के दाम!
■■

❑ वाराणसी (उत्तर–प्रदेश)

गीत

छत्तीसगढ़ी/कविता

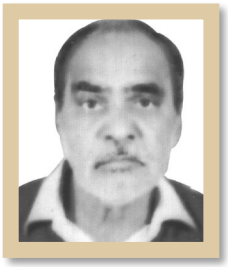

केदार दुबे

चल जोही जोरे जोरे बहियाँ हो
जाबो अमरइया रे।
रितुवा बसंत लागे
कोइली कुहुकि गावय
सरसों के फुलवा झूमै
हाँसै मन भावय हो
नाचौ पुरवहिया रे।
मिठ बोली मया मयारु
मन मंदुरस घोरय
जाने अजाने आँखी ले
आँखी मया जोरय हो
होगे सुरबइहा रे।
मन मतौना मांदर बाजै
करमा के ताल
मया पिरित रंग रंगाये
लाली गुलाली गाल हो
मोहे रँगरसिया रे।
बँसुरी के तान छेड़े ले
झूमर जाथे चँवरा
अलीन गलिन रस चुहके
रसिया मन भँवरा हो
सोहे फुलबगिया रे। ■■

❑ बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

गीत

छत्तीसगढ़ी/कविता

जगदीश कुलदीप

छत्तीसगढ़ के छकना छकाए भुंइया
नंदिया–नंरवा–परबत हे पबरित ठइंया
आमा–बर–पीपर लीम के जुड़ जुड़ छइंहा
सरग सही महतारी भुंइया परवं पइंया
जै हो, जै हो,जै हो छत्तीसगढ़ मोर मइंया

भगवान राम के ननिहाल कौसल
कौसिल्ला लवकुश ल परनाम हे
श्रंगीऋषि बहिन शान्ता के ससुरार
मतंगअउ शबरी दाई के पहिचान हे
प्रेम म नेम–धेम के नइये जंजाल ए गुइंया

छत्तीसगढ़ छत्तीस राजा रजवाड़ा के बाड़ा
मोरध्वज–ताम्रध्वज–रतन दधीचि के हाड़ा
वीरनारायन दानी खोलिस धान के ढाबा
आरंग सिरपुर रतनपुर मल्हार धरम–धामा
सीता–सावित्री–सति–अनुसंइया के
जुग–जुग छइंहा। ■■

❑ चकरभाटा कैंप, बिलासपुर (छत्तीसगढ़) 495220

हम तोहर नेह में

बज्जिका/कविता

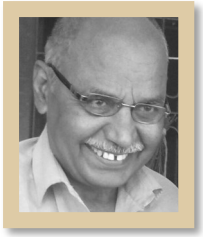

हरिनारायण सिंह 'हरि'

हम तोहर नेह में डूब गेली प्रिया!
मन नऽ लागे हमर खूब धड़के जिया।
तू नयन के कटारी चलयलऽ धनी!
हमरा–सन आदमी के पटयलऽ धनी!
हम तोहर रूप के कइसे वर्णन करूं,
आंख के रास्ते दिल में छयलऽ धनी!
तड़पे पानी बिना जइसे मछरी–हिया।
हम तोहर नेह में डूब गेली प्रिया!
रूप, मदिरा के हो जइसे प्याली भरल,
आ हमर कंठ कहिया से खाली पड़ल।
प्रीत के मीत आबऽ जुरालूं नयन,
रूप के की भरोसा ई चंचल–चपल।
जबले टिमटिम करइय ई बाती–दिया।
हम तोहर नेह में डूब गेली प्रिया!
प्रेम शाश्वत, हृदय के ई जोड़े सदा,
आ जे बहकल कदम ओकरा मोड़े सदा।
प्रेम है तऽ ई संसार आबाद है,
प्रेम हिरदा के बरबस झिंझोरे सदा।
प्रेम राधा है, रांझा है, है ई सिया।
हम तोहर नेह में डूब गेली प्रिया! ■■

❑ जौनापुर, मोहिउद्दीन नगर, समस्तीपुर (बिहार)

गीत

बज्जिका/कविता

मुकेश कुमार मृदुल

चलऽ सइयाँ फागुन आएल
चलऽ अप्पन गाँव में।
जहाँ बीतइअ अक्सरहें
देह के जाड़ अलाव में।।
मन अगुताइअ, निम्मन कहाँ
सबतर है धुआँ–धुक्कुर,
दिन भर तऽ सुनऽ हिंआ
मशीने के खुट्टुर–पुट्टुर
बहे बयार निहग्ग जहाँ
चलऽ ओहने ठाँव में।
चलऽ सइयाँ फागुन आएल
चलऽ अप्पन गाँव में।
वंशी के धुन साँझ कऽ बाजे
बिहने कऽ पराती,
गोहराबे मउगी सब्भे
घर में संझा–कराती
लुर–लच्छन ओहे त सीखे
चलऽ ओहे निराँव में।
चलऽ सइयाँ फागुन आएल
चलऽ अप्पन गाँव में।
आम में मोजर, जामुन पाकल
सबतर जहाँ मिलइअ
स्नेह से रंग, अबीर, गुलाल
सबके त सब लगबइअ
उहाँ पे फगुआ छहाछेट
खेले सब उमराँव में।
चलऽ सइयाँ फागुन आएल
चलऽ अप्पन गाँव में। ■■

❑ आनंदबाग मुहल्ला, महनार, वैशाली (बिहार) 844506

कथाकार रेणु और प्रेमचंद की दृष्टि में गाँवों के फूल, शूल और धूल

हिंदी / आलेख

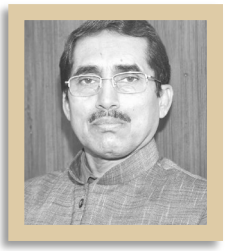

डॉ. सुनील कुमार पाठक

फणीश्वर नाथ रेणु हिन्दी के ऐसे अप्रतिम कथाकार हैं जिनके उपन्यासों और कहानियों में तत्कालीन ग्रामीण जीवन, नागरिक समाज और राजनीतिक संचेतना सबको एक साथ देखा-परखा जा सकता है। प्रेमचन्द के बाद हिन्दी कथा की दुनिया में अगर कोई कथाकार सबसे ज्यादा विश्वसनीय और पाठकीय आकर्षण का केन्द्र बना तो वे रेणु ही थे। आंचलिक उपन्यासों और नई कहानी के दौर का यह विशिष्ट कथाकार उत्तर भारत के गाँवों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक गतिविधियों एवं इनमें घटित परिवर्तनों का न केवल फोटोग्राफिक चित्र प्रस्तुत करता है बल्कि इन बदलावों के जरिये भविष्य की सुगबुगाहटों और संभावनाओं को भी रूपायित करता नजर आता है। रेणु के कथा-संसार में सामाजिक जड़ता, अज्ञानता और भिन्न-भिन्न स्तरों पर शोषण के तौर-तरीकों की पड़ताल तो हुई ही है, उसके साथ ग्रामीण-अंचलों में आ रहे आधुनिकता-बोध, वैज्ञानिक उपलब्धियों एवं आविष्कारों के फलस्वरूप नई तकनीक के प्रवेश को भी चित्रित करने में रेणु नहीं चूके हैं। रेणु अपने कथा-संसार में आधुनिक बोध, वैज्ञानिक विकास और तार्किक सामाजिक-राजनीतिक वैचारिक विमर्शों को ग्रामीण पिछड़ेपन से विमुक्ति का जरिया बनाते दिखते हैं। रेणु की रचनाओं में ग्रामीण पिछड़ेपन की तस्वीर पेश हुई है, साथ ही वहाँ विकसित हो रही सामाजिक-राजनीतिक चेतना और उसकी अँगड़ाइयों को भी भाँपने-परखने की कोशिश हुई है। यहाँ ग्रामीण जीवन के विभिन्न चरित्रा, उनकी भाषा, रश्मो-रिवाज, परम्पराएँ, पर्व-त्योहार, जीवनानुभव को पिरोते हुए न केवल संवेदना को व्यापकता प्रदान की गई है बल्कि एक नये रचनात्मक शिल्प का भी विकास किया गया है।

प्रेमचन्द और रेणु हिन्दी कथा-साहित्य में भारतीय जन-जीवन को रूपायित करनेवाले अद्वितीय रचनाकार हैं। दोनों के उपन्यासों और कहानियों पर विचार करने के क्रम में समालोचक कभी किसी में कुछ खास होने की बात करते हैं तो कभी दोनों को एक दूसरे का पूरक लेखक बताते हुए दोनों की पृथक-पृथक महत्ता भी स्थापित करते दिखते हैं। दोनों की तुलना का आधार इनके द्वारा किये गये ग्रामीण समाज के चित्राण ही बनते हैं, जो दोनों रचनाकारों में अपनी समस्त विशेषताओं और विच्छितियों के साथ मौजूद मिलते हैं। दोनों ने ग्रामीण समाज एवं नागरिक समाज के साथ-साथ भारत में विकसित हो रहे राजनीतिक समाज या तंत्रा के विभिन्न स्तरों, उसकी प्रकृति और प्रवृत्तियों को पूरी गहराई में उतरकर गंभीरतापूर्वक विश्लेषित करने का सार्थक प्रयास किया है। डॉ. भगवतशरण उपाध्याय ने रेणु को प्रेमचन्द की ही परम्परा में रखते हुए रेणु के 'मैला आँचल' को 'गोदान' के बाद हिन्दी का सर्वथा प्रगतिशील औपन्यासिक अवदान माना है। उनका कथन है-

"प्रेमचन्द की परम्परा में दशकों बाद यह पहला उपन्यास लिखा गया जो 'गोदान' के जोड़ का है, सर्वथा प्रगतिशील! x x x गाँवों के घिनौने वातावरण को मिथ्या कर उनके काल्पनिक चित्रा उपस्थित करनेवालों पर करारी चपत है यह कृति।" समीक्षक डॉ. नेमिचन्द जैन यद्यपि 'गोदान' और 'मैला आँचल' की तुलना को केवल ऊपरी स्तर का बताते हैं किन्तु उनकी भी स्पष्ट मान्यता है कि रेणु के 'मैला आँचल' में भी 'गोदान' की तरह ग्राम्य-जीवन की छवियाँ अपने वैशिष्ट्यों के साथ-साथ अपने तमाम अंतर्विरोधें और वैपरित्यों के साथ दर्ज हुई हैं। डॉ. नेमिचन्द अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हुए लिखते हैं कि-**"वास्तव में 'मैला आँचल' की विशिष्टता इसमें नहीं है कि उसमें देहाती जीवन का बहुत गहरा अध्ययन है, अथवा सामाजिक समस्याओं और उनके निदान के दार्शनिक आधर उसमें मौजूद हैं, अथवा युग-युग-व्यापी जीवन-सत्यों का उद्‌घाटन लेखक कर सका है। उसकी विशिष्टता है उस अपूर्व आत्मीयता में जिसके साथ लेखक ने गाँव के जीवन की समस्त कटुता और संगीत को, सरलता और विकृति को, स्वार्थपरता और सामाजिक एकसूत्रता को, अज्ञान और मौलिक नैतिक संस्कार को संजोया है। इतनी तरल भाव. ावेशपूर्ण उत्कटता से शायद ही किसी ने ग्रामीण जीवन को देखा हो-शरद और प्रेमचंद ने भी नहीं, ताराकांत बनर्जी ने भी नहीं। ... देहाती जीवन को लेकर लिखे जाने वाले साहित्य को इस उपन्यास की यह सबसे बड़ी देन है।"**

रेणु के दो उपन्यास जिनपर उनके कथाकार की पूरी प्रतिष्ठा और ख्याति निर्भर है, वे हैं- 'मैला आँचल'(1954) और परती-परिकथा(1957)। ये दोनों ऐसी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं जिनपर चर्चा किए बगैर हिन्दी उपन्यासों के सम्पूर्ण वैभव और प्रकृति का विश्लेषण संभव ही नहीं है। वस्तुतः 'मैला आँचल' में अगर धरती-पुत्रों की कथा का मार्मिक चित्रण है तो 'परती परिकथा' में ग्रामीण जन की आकांक्षाओं, आशाओं और सपनों के साथ-साथ उनके जीवन को निरंतर जटिलतर बनाती जा रही भूमि-समस्या और उसके दुर्निवार प्रभावों को भी पूरी मनोवैज्ञानिकता के साथ समीचीन ढंग से विवेचित किया गया है। रेणु-साहित्य के मर्मज्ञ कथा-समीक्षक डॉ. सुरेन्द्र चौधरी ने ठीक ही कहा है- "**'मैला आँचल' जहाँ ग्रामकथा है, वहाँ 'परती परिकथा' भूमि-संबंधें के अंतर्विरोधें से आगे बढ़ी भूमि-संघर्ष की कथा है। 'मैला आँचल में भूमि-संघर्ष की एक झलक मात्र मिलती है, पर 'परती परिकथा' सम्पूर्णतः संघर्ष की पृष्ठभूमि में लिखी गई एक महत्त्वपूर्ण रचना है।**" सच पूछा जाये तो 'परती परिकथा' तत्कालीन सामन्तवादी भूमि-व्यवस्था से किसान-वर्ग के संघर्ष का एक मुखरित अभिलेख है। मजदूरों से होकर किसानों तक पहुँची वर्ग-चेतना की अनुगूंज 'मैला आँचल' में भी सुनाई पड़ती है परन्तु 'परती-परिकथा' में यह चेतना अनुगूंज मात्रा नहीं है-

वरन इस कृति का मूल कथ्य ही भूमि–समस्या और किसानों की संघर्षशीलता है।

फणीश्वरनाथ रेणु हिन्दी कथा–साहित्य के एक ऐसे युगान्तकारी रचनाकार हैं, जिन्होंने न केवल प्रेमचंद की परम्परा को आगे बढ़ाया, बल्कि उसे और अधिक समृद्ध तथा सुदृढ़ करने के लिए उन्होंने तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संघर्षों और उद्वेलनों को पूरी व्यापकता और समग्रता में चित्रित करने का सार्थक प्रयास किया है। डॉ. नामवर सिंह की तो मान्यता है कि **''मैला आँचल का प्रकाशन हिन्दी उपन्यास के इतिहास में एक घटना है। इसकी भाषा और रूप–विधान में तो नयापन है ही, आजादी के बाद के भारत के मिजाज को व्यक्त करनेवाला यह पहला उपन्यास है–आजादी के बाद बदलते हुए गाँवों की तस्वीर और इसके बीच गाँधीवादी बावनदास की शहादत ध्यान देने योग्य है।''**

प्रेमचन्द और रेणु की कृतियों पर विचार करनेवाले कुछ ऐसे भी आलोचक हैं जो कतिपय समानताओं के बावजूद 'मैला आँचल' को 'गोदान' की भाँति एक 'क्लासिक रचना' मानने से इंकार करते हैं। वस्तुतः प्रेमचन्द ने गाँवों को समग्रता में प्रस्तुत करते हुए उसपर पड़ रहे नागरिक जीवन के दबावों और प्रभावों को भी नजरन्दाज नहीं किया है। प्रेमचन्द गाँव और नगर दोनों को अलग कर नहीं देखते थे, उनके उपन्यासों में दोनों के अन्तर्सम्बन्धों को बड़े विस्तार और बारीकी से विश्लेषित किया गया है। 'गोदान' में जिस समाज का चित्रण है उसके एक छोर पर जंगल है, जहाँ आदिवासी कन्याओं का स्वाभिमान वर्णित है दूसरे छोर पर खन्ना खड़े हैं जो शहरी जीवन की तड़क–भड़क और औद्योगिक–तकनीकी विस्तार को आत्मसात किए हुए हैं। किन्तु रेणु का वैशिष्ट्य यह है कि 'नयी कहानी' के दौर में भी शहरी बौद्धिकता और औद्योगिक विकास के दबावों के बीच गाँवों की अस्मिता को बचाये रखने का उन्होंने सफल प्रयास किया है। रेणु के सन्दर्भ में यह सवाल बराबर उठते रहे हैं कि उन्हें प्रेम. चन्द की परम्परा का विकास माना जाए या फिर उनसे किसी नयी परम्परा की शुरूआत को रेखांकित किया जाए। यह सवाल इसलिए भी उठना लाजिमी था चूँकि विशुद्ध आंचलिक और ग्रामकेन्द्रित उपन्यास प्रेमचन्द के समग्र समाज की अवधरणा को आत्मसात करने में बहुत हदतक सफल नहीं हो पाए थे। रेणु ने भी अपने 'मैला आँचल' की भूमिका में स्पष्ट कर दिया था कि–**''मैंने इसके एक हिस्से के एक ही गाँव को पिछड़े गाँवों का प्रतीक मानकर इस उपन्यास का कथाक्षेत्र बनाया है।''** यह सही है कि रेणु के उपन्यास में चित्रित गाँव मेरीगंज की कापफी छोटी–छोटी साधरण–सी दिखनेवाली चीजें और बातें 'मैला आँचल' में चित्रित हैं, वहाँ के 'शूल–धूल–पफूल', 'गुलाब–कीचड़–चन्दन', 'सुन्दरता–कुरूपता' सबको इस कृति में जगह मिल गई है, परन्तु क्या इतने से ही यह आंचलिक कृति प्रेमचन्द की परम्परा में शामिल हो जाती है? –यह सवाल आलोचकों ने बारम्बार उठाया है। उनका मंतव्य है कि प्रेमचन्द की परम्परा के विकास का मतलब उसका सीध–सादा एकरेखीय विकास नहीं है। वस्तुतः सामाजिक सन्दर्भों से जुड़े सतत परिवर्तनों पर आधरित नया उभर रहा सामाजिक–राजनीतिक प्रारूप भी प्रेमचन्द की परम्परा का ही विकास है। दरअसल प्रेमचन्द की परम्परा बहुरेखीय है। इसमें जयशंकर प्रसाद और निराला के उपन्यास, आचार्य शिवपूजन सहाय की 'देहाती दुनियाँ', भैरव प्रसाद गुप्त की 'गंगा मैया' एवं बाबा नागार्जुन का 'बलचनमा' भी मौजूद हैं। प्रेमचन्द की इस परम्परा में ही 'मैला आँचल' भी शामिल है, चूँकि यहाँ रेणु के ग्राम्य–वर्णन में भले ही अंचल–केन्द्रिकता है किन्तु उनकी अन्तर्दृष्टि में सार्वभौमिकता देखने को मिलती है। 'मैला आँचल' का सामाजिक यथार्थ स्थानीय रंगों में डूबे रहने के कारण 'गोदान' के मॉडल से भिन्न जरूर दिखाई पड़ता है किन्तु उसकी अन्तर्चेतना और दृष्टि में किसी तरह की स्थानीयता नहीं नजर आती। वस्तुतः आंचलिक उपन्यासों की उत्कृष्टता इस बात में अन्तर्भुक्त रहती है कि उसमें जातीय आत्मबोध का उद्वेलन है या नहीं और एक खास विन्दु पर वह 'सार्वभौमिकता' से जुड़ पाता है या नहीं, उसे आलोकित करने का सामर्थ्य वह अर्जित कर पाया है या नहीं? 'मैला आँचल' में पूर्णिया के एक गाँव के जरिये ग्रामीण जीवन की जो तस्वीर उकेरी गई है, वह सिर्फ उसी गाँव के यथार्थ से जुड़ी हुई हैं, ऐसी बात नहीं, सच तो यह है कि इस गाँव के जरिये उन तमाम तरह के बदलावों को रेखांकित किया गया है जो आजादी के बाद पूरे भारत के गाँवों में घटित हो रहे थे। मेरीगंज एक छोटा–सा गाँव है, जो प्राकृतिक सुषमा से परिपूर्ण है और आधुनिक विकास की प्रक्रिया से भी जुड़ चुका है। डॉ. प्रशान्त इस गाँव में आते हैं और यहाँ के सामाजिक–राजनीतिक जीवन में स्फुरण आ जाता है। यह गाँव जग जाता है, इसमें गति आ जाती है। गाँव की गतिशीलता के साथ–साथ प्रेम और विक्षोभ के विभिन्न स्तर और जीवन की कई–कई परतें खुलने लगती हैं। इस गाँव की सामाजिक–राजनीतिक स्थितियों में आ रहे बदलाव से नये मानवीय सम्बन्धों में एक खुलापन और सौन्दर्य–चेतना का विकास होता है। डॉ. प्रशांत अपने आत्मवलोकन, प्रेम और परिमार्जन के प्रयासों की बदौलत उस ग्रामीण अंचल में भी मानवीय संवेदनाओं के तंतुओं में नवजीवन संचारित कर देते हैं। फलतः उपन्यास में काव्यात्मकता का भी सन्निवेश संभव हो सका है। रेणु के इस उपन्यास में राजनीतिक जागरण और उसके सकारात्मक और निषेधात्मक–तमाम पहलुओं की भी भिन्न–भिन्न बातें घुली–मिली हैं परन्तु ये सबकुछ सहज स्वाभाविक रूप में है, यहाँ कुछ भी यांत्रिक या कृत्रिम रूप से घटित होता नहीं दिखता। यहाँ धर्म के भी दोनों तरह के प्रभाव दृष्टिगोचर हैं–एक जिसमें छल–छद्म, पाखंड और आडम्बरों का उभार दिखाया गया है और दूसरा जिसमें उसकी आध्यात्मिक परिणति को रूपांकित किया गया है। बालदेव, कालीचरण, बावनदास, तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद और महन्त सेवादास ऐसे ही चरित्रा हैं, जिनके माध्यम से ग्रामीण जीवन के आन्तरिक रेशे–रेशे को पढ़ने की कोशिश की गई है। भारत जैसे बहुलतावादी समाज में 'स्थानीयता' के प्रति 'नॉस्टैल्जिक' (Nostalgic) होने के स्वाभाविक खतरे थे किन्तु रेणु अपने उस आकर्षण को इस तरह स्वाभिमान और सार्वभौमिकता की ऊँचाई तक ले गए कि उनका यह व्यामोह सार्वजनीन संवेदनाओं से जाकर जुड़ गया। सबके सुख–दुःख इसमें समाहित हो गये। बावनदास के माध्यम से आदर्शवाद की व्यापक जातीय विसंगति को रेखांकित करना रेणु की इसी दृष्टि का परिचायक है। रेणु ने अपने अंचल के रूपवादी आलंकारिक वर्णन तक अपने

को सीमित नहीं रखा है बल्कि उस अंचल की विद्रुपताओं और विसंगतियों को भी उभारने का प्रयास किया है। रेणु का आंचलिकता-बोध अनगढ़ता में ही सौन्दर्य का अनुसंधन कर लेता है चूँकि वह ओढ़ हुआ या आयातित नहीं है, वह भोगे हुए यथार्थ के अनुभव से सम्बलित है। रेणु में किसानों या ग्रामीणों के जीवन का जो अनुभव है, वह उनके बीच रहकर पैदा हुआ तथा लेखकीय प्रतिभा के सतत विकास का परिणाम है। रेणु हिन्दी के संभवतः प्रथम ऐसे कथाकार थे जिनकी जीविका का आधार कृषि थी। वे खेती के दिनों में अपने गाँव में रहकर जोताई-बुआई और धनरोपनी का स्वयं भी पूरा आनंद लेते थे। इसीलिए उनकी ग्रामीण-जीवन की अभिव्यंजना में कोई अतिरंजना नहीं है, जो कुछ है अयत्नज है, सहज स्वाभाविक और मौलिक है। उनमें आम आदमी के पक्ष में खड़ी होनेवाली जो राजैनिक चेतना है, वह भी सिर्फ वैचारिक स्तर पर अर्जित नहीं है, यह किसान-मजदूर आन्दोलनों में लगातार उनकी सक्रियता और सहभागिता का परिणाम है। रेणु का लेखन में अगर क्रांतिकारी चेतना समाहित है तो उसके पीछे नेपाली राणाशाही दमन के विरूद्ध हुई सशस्त्र क्रांति एवं कतिपय किसान मजदूर आन्दोलनों से रेणु का सीध जुड़ाव रहा है। रेणु की जे.पी. की 'सम्पूर्ण क्रांति' के आन्दोलन में सहभागिता भी उनके लेखन की राजनीतिक चेतना को प्रबुद्ध बनाने में सहायक रही। अन्याय के विरूद्ध प्रतिवाद के लिए रेणु सदैव तत्पर रहते थे, उनकी सामाजिक-राजनीतिक प्रतिबद्धता किसी राजनीतिक व्यक्तित्व से ज्यादा आम जन की पीड़ा से ज्यादा जुड़ी रहती थी। इसी आम जन ने जिसे किसान या मजदूर, जो कह लिया जाए, रेणु के कथा-लोक का सृजन किया है। रेणु ने इसी आम जन पर अपना पूरा प्यार लुटाया है। वे लिखते हैं- **"मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ। आँसू से भींगी हुई धरती पर प्यार के पौधे लहलहायेंगे। मैं साधना करूँगा ग्रामवासिनी भारतमाता के मैला आँचल तले।"** वस्तुतः रेणु की यह संघर्षमय साधना ही कथा-संसार में उनकी चिरंजीविता और अमरता का मूलाधर है।

'मैला आँचल' का बावनदास भारतीय स्वतंत्रता संग्राम-कालीन आदर्शवादी चेतना का प्रतिनिधि चरित्र है। वह स्वातंत्र्योत्तर भारत में मूल्यों के क्षरण से अवसन्न है, व्यथित है। वह इस दौर में अकेलापन महसूस करता है किन्तु उसका यह एकाकीपन पश्चिमी देशों के आधुनिक अकेलेपन से सर्वथा पृथक है। वह अन्ततः सत्य पर टिका रहता है और स्मग. लिंग का सामान ले जा रहे वाहनों द्वारा कुचल दिया जाता है। जब उसका शव भारत-पाकिस्तान (मौजूदा बांग्लादेश) की सीमा पर बह रही नदी में फेंक दिया जाता है तो वह किसी एक अंचल का नहीं सम्पूर्ण देश-काल का यथार्थ बन जाता है, उसकी वास्तविकता सार्वभौमिक हो जाती है। इस स्थिति को व्यंजित करती रेणु की करूणामिश्रित व्यंग्योक्ति है- **"बावनदास ने दो आजाद देशों की, हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की ईमानदारी को, इन्सानियत को बस दो डग में माप लिया।"** बावनदास की काया मेरीगंज की मिट्टी से बनी थी किन्तु उसकी मृत्यु को सार्वजनिकता और सार्वभौमिकता प्राप्त हो जाती है। यह रेणु की कथा-दृष्टि का ही कमाल है।

नये औपनिवेशिक वातावरण के जरिये आधुनिक विकास ने सर्वप्रथम आदमी के भीतर की मनुष्यता और संवेदनशीलता को मार डाला। राजनीति में सेवा की जगह धूर्त्तता और चालाकियाँ घर कर गईं। राजनीति ने धर्म से किसी मायने में कम गड़बड़ियाँ पैदा नहीं की। दरअसल बालदेव इसी राजनीतिक अवमूल्यन को प्रतीकित करता है। देश जिन राजनीतिक प्रवंचनाओं और कुचक्रों की ओर आगे बढ़ रहा था, पतन के जो दुःस्वप्न दिखाई पड़ रहे थे, बालदेव के चरित्र से वही अनुगूंजित हो रहा था- **"वह अपने गाँव में रहेगा, अपने समाज में, अपनी जाति में रहेगा।** x x x **जाति बहुत बड़ी चीज है। जाति की बात ऐसी है कि सभी बड़े-बड़े लीडर अपनी अपनी जाति की पार्टी में हैं। यही तो राजनीति है।"** रेणु के उपन्यास में क्रांति चलित्तर कर्मकार के रूप में गाँव की सीमा के पार जंगल की किंवदन्ती बनी हुई है। ऐसे भी हिन्दी क्षेत्र में वामपंथी शक्तियाँ कभी बहुत ताकतवर नहीं रहीं। राजनीति में स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद किसी उच्चतर राष्ट्रीय लक्ष्य की अनुपस्थिति की ओर रेणु ने बड़ी बारीकी से अपनी औपन्यासिक कृतियों के जरिये इशारा किया है। प्रेमचन्द के जमाने का जातीय सौहार्द जिसकी छवि हम 'कर्मभूमि' जैसी उनकी कृतियों में पाते हैं, रेणु के 'मैला आँचल' तक पहुँचते 'जातिवाद' की विडम्बनाओं के रूप में उजागर हो चुका था। मेरीगंज की गरीबी और फटेहाली तथा धार्मिक अंधविश्वासों में उसकी जकड़ रेणु ने बगैर किसी लाग-लपेट के दिखलाया, जो अत्यन्त विश्वसनीय और यथार्थ पर आधरित था।

'मैला आँचल' में चित्रित गाँव का पिछड़ापन रेणु की कलम से ऐसा लग रहा था मानो वह सिर्फ मेरीगंज का ही यथार्थ न हो, हरेक भारतीय गाँव की वास्तविकता बन सामने उभर आया हो- **"कपड़े के बिना सारा गाँव अर्द्धनग्न है। मर्दों ने पैंट पहनना शुरू कर दिया है और औरतें आँगन में काम करते समय एक कपड़ा कमर में लपेट कर काम चला लेती हैं। बारह वर्ष के बच्चे तो नंगे ही रहते हैं।"** यह पहली पंचवर्षीय योजना के कार्यान्वयन के बावजूद की स्थिति थी। हर तरफ भूख, गरीबी, कलह, अंधविश्वास और भयंकर बीमारियों से लूटती जिन्दगियाँ सरेआम थी। तब भी ग्रामीणों में गजब की जिजीविषा -**"भींगी हुई धरती पर लेटा हुआ निमोनिया का रोगी मरता नहीं जी जाता है।"** जहालत की जिन्दगी के बीच ही हँसी-खुशी-प्रेम, पर्व-त्योहार सबकी उछल-कूद, धूम-धड़ाके, नाच-गान, सबकुछ-रेणु ने इसे ही शूल के साथ फूल का सौन्दर्य कह अभिहित किया।

रेणु का गाँव गरीबी, भूखमरी के साथ-साथ जीवन की लय ढूँढ़ पाने में भी कहीं-कहीं सफल दिख पड़ता है। सब कुछ ढ़हते के बीच कुछ नया यहाँ उठ भी रहा है। राजनीति में जातिवाद के बढ़ने के साथ ही जाति तोड़कर प्रेम-विवाह की जगती संभावनाएँ भी रेणु देख रहे हैं। जोतिखी अंधविश्वास को प्रश्रय दे रहा है तो प्रशांत बुद्धिवादी जागरण के प्रयास भी कर रहे हैं। अपनी मजबूरियों-मुश्किलों से पिसते-कराहते मेरीगंज की छटपटाहट के बीच वहाँ आधुनिकता-बोध कैसे आकार ग्रहण कर रहा है, संघर्षों के बीच नया सृजन कैसे जीवन्त हो रहा है, इसकी प्रबोधक कथात्मक अन्वीति है- 'मैला आँचल'। मेरीगंज के अभाव उसकी नियति नहीं हैं, ग्रामीण आम जन की निरीहता, निराशा और एकान्तिकता से उबरने की चाह और क्षमता इस गाँव की जिजीविषा को प्रकट करती है। 'मैला आँचल' आंच. लिकता के सौन्दर्यबोध का कलात्मक सम्प्रेषण तो है ही, वह उन

आसन्न संकटों का भी संकेतक है जो निरन्तर देश के क्षितिज पर गहराते जा रहे हैं। दरअसल, इन संकटों के विरूद्ध लड़ाई और इस लड़ाई को मजबूती प्रदान करनेवाली ताकतों के प्रति पूरी प्रतिबद्धता ही 'मैला आँचल' जैसी औपन्यासिक कृतियों का उद्देश्य रहा है। इस दृष्टि से विचार करने पर 'मैला आँचल' महज एक आंचलिक उपन्यास भर नहीं है, इसकी संकट-केन्द्रिकता इसे एक विलक्षण समस्यामूलक आंचलिक औपन्यासिक कृति सिद्ध करती है।

रेणु के कथा-साहित्य में साहित्यिकता और सामाजिकता का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है। 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन', 'नेपाल क्रांति', 'समाजवादी आन्दोलन' और जे.पी. के 'सम्पूर्ण क्रांति' के आन्दोलन-सबसे उनका गहरा जुड़ाव था किन्तु उनके साहित्य की यह खूबी है कि इसमें राजनीति जुमलेबाजी या नारेबाजी के स्तर पर कहीं नहीं आई है। वे 'पोलिटिकल एक्टिविस्ट' जरूर रहे किन्तु अपने साहित्यकार को उन्होंने अपने राजनीतिज्ञ के दुष्प्रभाव में कभी आने नहीं दिया। डॉ. गोपेश्वर सिंह ने ठीक ही लिखा है कि **''उनके साहित्य में राजनीतिक आशय और संकेतों की भरमार है। लेकिन उस पर व्यक्तिगत राजनीति का 'लाउड' प्रभाव नहीं है। यह उनके कथा-साहित्य की बड़ी उपलब्धि है जो उन्हें जन और जन-साहित्य का आठों-याम जाप करनेवाले कथाकारों से अलग करती है। वे साहित्य में राजनीतिज्ञों की तरह बोलनेवाले और राजनीति में साहित्यिक भंगिमा का भ्रम पैदा करनेवाले लेखक नहीं हैं। वे साहित्य के लिए राजनीति से और राजनीति के लिए साहित्य से ऊर्जा लेते हैं, लेकिन साहित्य की संवेदना पर राजनीति के शोर को हावी नहीं होने देते। समाज और राजनीति में जब निर्णायक क्षण आते हैं तो रेणु का 'सोशल एक्टीविस्ट' चुप नहीं रहता लेकिन रोज-रोज की राजनीतिक सक्रियताओं से उनका साहित्यकार मन दूरी बनाये रहता है।''**

रेणु के कथा-लेखन की विशिष्टताएँ उद्घाटित करते हुए 'परती परिकथा' पर टिप्पणी के क्रम में कहानीकार और समालोचक श्री निर्मल वर्मा का कहना है- **''किन्तु इस कलह-क्लेश के बावजूद परानपुर में पूर्णिमा का चाँद उगता है। लाजमयी और मलारी का गीत-स्वर परती की सफेद बालू पर पंख पफड़पफड़ाता हुआ उगता है। पाँचों कुंडों में पाँच चाँद रात भर झिलमिलाते हैं, शरद की चाँदनी में पहाड़ से उतरनेवाले पक्षियों की पहली पांत उतरती है।.... चाँदनी की यह स्वप्निल संगीतमयता 'परिकथा' में आद्योपांत छाई रहती है। तनाव और उल्लास रेणु के कथा साहित्य के ये दो किनारे हैं। इस तनाव और उल्लास के बीच परानपुर के निवासियों की जीवन-धरा अविरल रूप से प्रवहमान है।''** रेणु सामाजिकता और राजनीतिक चेतना के बीच साहित्यिकता की जो रक्षा करते हैं और तनाव के साथ-साथ उल्लास के जो क्षण हासिल कर लेते हैं, उस ओर इशारा करती निर्मल वर्मा की ये पंक्तियाँ अन्य कथाकारों की तुलना में रेणु के वैशिष्ट्य को निरूपित कर देती हैं।

रेणु को डॉ. गोपेश्वर सिंह ने यों ही नहीं 'ट्रेंड सेटर' कथाकार कहा है। उनकी मान्यता है कि प्रेमचन्द, जैनेन्द्र और अज्ञेय की तरह रेणु ने भी हिन्दी कथा-साहित्य में नये युग का सूत्रापात किया। उनके शब्द हैं-**''उनमें प्रेमचन्द की सच्चाई, अज्ञेय की काव्यात्मकता, गाँव की लोक-लय, और बांग्ला कथा साहित्य खासकर शरतचंद और सतीनाथ भादुड़ी की रागात्मक अनुगूंज तथा परम्परा से प्राप्त किस्सागोई की ताकत भी है जिसके कारण वे हिन्दी कथा साहित्य में अपार लोकप्रियता अर्जित करने और युगान्तर उपस्थित करने में सक्षम बन सके।''**

रेणु के साहित्य में सामाजिक वर्ग-भेद के साथ- साथ जाति-भेद की दीवारें भी ढ़हती नजर आती हैं। रेणु की वर्ग-भेद और जाति-भेद की पहचान अत्यन्त प्रखर है। रेणु अगड़ावाद-पिछड़ावाद की जो संकीर्ण रेखा है, उसका अतिक्रमण करते नजर आते हैं और व्यापक रूप से शोषित-पीड़ित जनता के पक्ष में खड़े दिखते हैं। उनका कथा-साहित्य अगर सबका भरोसा और विश्वास अर्जित करने में सफल रहा है तो इसका कारण यही है कि वे जातिभेद की सच्चाई से अपने पाठकों को अवगत कराते हुए भी उसकी संकीर्णताओं से उबरने और उसकी दीवारों को लाँघने के लिए उन्हें बराबर प्रेरित करते दिखते हैं।

रेणु के कथा-संसार में उतरा किसानी जीवन उनका अपना भोगा हुआ यथार्थ है। किसान परिवार से तो हिन्दी में अनेक कथाकार आए, किसानों पर खूब कलम भी चलायी ले. किन खुद किसानी करते हुए किसी ने साहित्य भी रचा, इसके एकमात्र उदाहरण हिन्दी में संभवतः अकेले रेणु ही हैं। रेणु के कथा-संसार में जो रस है, लोक की लय और जीवन की ध्वनि है, वह उनके किसानी जीवन की ही देन है। निश्चय ही किसानी, साहित्य-सर्जना और राजनीति की त्रिवेणी रेणु के व्यक्तित्व में संगमित है।

प्रेमचंद से रेणु का नैकट्य इस अर्थ में भी है कि वे प्रेमचंद की ही भाँति अपनी कथा-प्रक्रिया में ग्रामीण जीवन के अन्तर्विरोधों का सिर्फ विवेचनात्मक चित्रण मात्रा नहीं करते, बल्कि वे तत्कालीन समस्त जनजीवन के दृष्टिकोण से परिस्थितियों और सम्बन्धों के बदलाव को भी रेखांकित करते हैं। रेणु ने अपने 'मैला आँचल' में गाँवों के आर्थिक-सामाजिक विकास के अन्तर्सम्बंधों को नयी परिस्थितियों में पहचानने का गंभीर प्रयास किया है। 'मैला आँचल' के गाँव में भी किसान और मजदूरों का संघर्ष संगठित नहीं है, परन्तु इन्हें यह पता है कि मुक्ति के लिए संघर्ष की एकजुटता कितनी अपरिहार्य है। ग्रामीण जीवन में व्याप्त यह चेतना 'गोदान' में जन्म लेने की पीड़ा झेलती ही शहीद हो जाती है, परन्तु 'मैला आँचल' में यह चेतना जन्म लेकर आगे पलती-बढ़ती नजर आ रही है। वस्तुतः ''मैला आँचल'' की कथा, हिंदी कथा-साहित्य में भविष्य के गाँवों के प्रादुर्भाव की कथा है। डॉ. सुरेन्द्र चौधरी जैसे समालोचक इसे ही शहर और गाँवों के अंतर्लयन की एक नयी ऐतिहासिक संभावना के रूप में रेखांकित करते हैं।

रेणु के 'मैला आँचल' के जरिये जहाँ आजादी पूर्व के गाँव अपने तमाम संघर्षों और अन्तर्विरोधों के साथ जीवंत रूप में मिलेंगे, वहीं 'परती परिकथा' की पृष्ठभूमि आजादी के बाद का भारत है, जिसमें ग्रामांचल के परिवर्तनकारी दौर की कथा है। सामाजिक-आर्थिक परिर्वतनों के क्रम में गाँवों में भूमि-संघर्ष की जो समस्या ज्वलंत बनकर उभरी, उसके बहुकोणीय प्रभाव को 'परती परिकथा' में रेणु ने संपूर्णता में रखा ।

'मैला आँचल' का कथा-समय भारत के आजाद होने के

'मैला आँचल' का कथा–समय भारत के आजाद होने के पूर्व से लेकर आजादी मिल जाने के कुछ बाद तक का है। यह भारतीय राजनीति के संक्रमण का समय है। पर इस संक्रमण का प्रभाव गाँवों के सामाजिक जीवन पर बहुत अधिक नहीं पड़ा– यही दिखाना रेणु का मकसद है। 'मैला आँचल' में राजनीति के भी कई रूप प्रकट हुए हैं। पहले तो बालदेव, बावनदास आदि के द्वारा स्वाधीनता संग्राम की परम्परा संवहित होती है, परन्तु बाद में जब कालीचरन, वासुदेव आदि भी साथ हो जाते हैं और वे सभी 'सोसलिस्ट पार्टी' के संपर्क में आते हैं, गाँव में नया नारा लगता है– **"कमाने वाला खायेगा। जोतने वाला काटेगा। काटनेवाला बाँटेगा। किसान राज कायम होगा।"** स्वाधीनता संग्रामवाली राजनीति की समाप्ति के बाद सुराजी कार्यकर्त्ता बावनदास उदास रहा करता है। वह कहता है–**"भारथमाता और भी जार बेजार हो रही हैं।"** समय की करवट और अंगड़ाई को पहचानने की दूरदृष्टि रेणु में अत्यंत प्रबल है। वे खूब समझते हैं कि गाँवों की मूल समस्या है– जमीन की समस्या। और इस जमीन पर प्रभुताशाली लोगों की नजर है। इस क्रम में रेणु की दृष्टि संतालों पर जाती है, जिनकी जमीन हड़पी गयी है। 'मैला आँचल' में संतालों और गैर संतालों के संघर्ष का सजीव वर्णन है। संतालों का अगुआ चुनका मॉझी डॉक्टर से मशविरा करने गया है। डॉक्टर कहता है– **"तुम लोग जमीन के असल मालिक हो। कानून है, जिसने तीन साल तक जमीन जोता– बोया है, जमीन उसी की होगी।"** 'मैला आँचल' का मेरीगंज केवल पूर्णिया अंचल का ही प्रतिनिधित्व नहीं करता, बल्कि वह समकालीन ग्रामीण यथार्थ का केन्द्र बनकर उभरा है ।

डॉ. रामविलास शर्मा ने प्रेमचंद की परम्परा में रेणु का मूल्यांकन करते हुए लिखा है– **"मैला आँचल का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है, जो उसे प्रेमचंद की परम्परा में जोड़ता है। बहुत कम उपन्यासों में पिछड़े हुए गाँवों के वर्ग–संघर्ष, वर्ग–शोषण और वर्ग–अत्याचारों का ऐसा जीता–जागता चित्राण मिलेगा। यह उसका सबल पक्ष है।"** प्रेमचंद का 'गोदान' जिसे 'भारतीय कृषक जीवन का महाकाव्य' कहा गया है, में अगर ग्रामीण जीवन में व्याप्त शोषण के विभिन्न रूपों का व्यापक विश्लेषण हुआ है, तो रेणु के 'मैला आँचल' और 'परती परिकथा' में भी तत्कालीन गाँवों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक हलचलों और गतिविधियों की मार्मिक अभिव्यंजना हुई है। गाँवों में अर्थतंत्र का असंतुलन, भूमि–समस्या की जटिलता और उसके अंतर्विरोध, वर्ग–संरचना में आजादी के बाद घटित परिवर्त्तनों के फलस्वरूप ग्रामीण परिदृश्य में भी आये बदलाव, किसानों और भू–स्वामियों के संघर्ष का एक नये चरण में प्रवेश, बटाईदारी की लड़ाई, निरक्षरता के प्रति ग्ला. नि का भाव, अंधविश्वासों से धीरे–धीरे उबरने की छटपटाहट, मुक्तिकामी राजनीतिक चेतना का विस्तार– ये तमाम चिंतन–विन्दु, प्रेमचंद और रेणु के कथा–साहित्य में विन्यस्त हैं।

रेणु प्रेमचन्द की परम्परा में होते हुए भी जिस तरह कई अर्थों में उनसे भिन्न थे, उसी तरह आज रेणु की परम्परा में भी कई कथाकार शामिल होकर भी उनसे कतिपय सन्दर्भों में विलग हैं। राही मासूम रजा, नागार्जुन आदि रेणु से बहुत हदतक प्रभावित दिखते हैं, परन्तु आज के दौर में रामधारी सिंह दिवाकर, संजीव, मधुकर सिंह, राकेश कुमार सिंह, रणेन्द्र या महुआ माजी जैसे कथाकार स्थानीयता की सशक्त अभिव्यंजना के बावजूद बिल्कुल भिन्न सन्दर्भ और रचाव लेकर कथा–संसार में हाजिर हुए हैं। इनके कथानक यद्यपि 'भूमंडलीकरण' और 'नई आर्थिक नीति' की परेशानियों से त्रस्त गाँवों की पीड़ा, वहाँ के आर्थिक भ्रष्टाचार, वहाँ हावी माफिया तंत्र और मानवाधिकारों के हो रहे हनन आदि को लेकर सजग हैं और संघर्ष की जमीन भी तैयार करते नजर आ रहे हैं किन्तु वे कहन, शिल्प और स्वाद आदि दृष्टियों से रेणु की परम्परा में न होकर महाश्वेता आदि की परम्परा में झुकते नजर आ रहे हैं।

वस्तुतः आज रेणु का 'शताब्दी स्मरण' एक ऐसे मुक्तिक. ामी क्रांतिकारी योद्धा का पुण्य स्मरण एवं सादर नमन है जो भारत की आजादी की लड़ाई से लेकर कई किसान–मजदूर आन्दोलनों, नेपाली क्रांति, भारत के समाजवादी आंदोलन, सम्पूर्ण क्रांति आन्दोलन आदि में न केवल जेल–यातना की पीड़ा और पुलिस–प्रताड़ना की बर्बरता का शिकार होता है बल्कि वह अथकित संघर्ष की वजह अपनी छिली छातियों में अनेकशः तूफान छिपाये हुए भी अपने हृदय में प्रवाहमान मानवीय संवेदना, करूणा और राग की अंतःसलिला को कभी सूखने नहीं देता। कथाकार रेणु का मुक्तिकामी संघर्ष अपराजेय इसी अर्थ में है कि जीवन का स्रोत यहाँ कभी सूखा नहीं है, उसकी प्राणवत्ता आखिर तक कायम है। ■■

❑ जी–3, ऑफिसर्स फ्लैट, भारतीय स्टेट बैंक के समीप
न्यू पुनाईचक, पटना (बिहार) 800023

असमिया / कविता

डॉ. माखन लाल दास

বাণপ্রস্থ

মনত পৰেনে সেই আবেলি
আমিযে ৰুইছিলোঁ
কণমানি এটি গছপুলি;
আবেলিৰ বেলিটিয়ে মৰা
মিচিকিয়া হাঁহি,
বাঁহলৈ বুলি জাক পাতি উৰা
এজাক চৰাইৰ কলকলনি?

প্রতিদিনে পুৱাতে উঠি
পুলিটিক পানী দিছিলা
বেলিৰ প্রখৰ ৰ'দৰ পৰা
তাক সযতনে আৱৰি ৰাখিছিলা।

দিন বাগৰি গৈ মাহ পাৰ হ'ল,
বছৰ বাগৰি গৈ অতীত হ'ল,
পুলিটি এতিয়া বৰ গছ হ'ল।

সুদুৰৰ চৰাইবোৰ আহি
আজি তাৰেই কোলাত
দেখোন
বাঁহ সাজিছেহি;
প্রখৰ ৰ'দলৈ
তাৰ আৰু ভয় নাই
ৰ'দত ভাগৰি পৰা বাটৰুৱাই
তাৰেইচোন ছাঁত আজি জিৰায়।

আঁহা,
তাৰ ছাঁতে বহি আজি
আমিও ক্ষন্তেক জিৰাওঁ,
আকৌ এবাৰ কথা পাতোঁ
তাৰ স'তে
তাৰেই ভাষাৰে। ■■

❑ তেজপুর (असम)

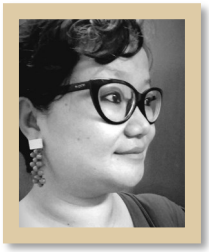

असमीया संस्कृति में शंकरदेव की देन

सुमि शर्मा

हिंदी / आलेख

शंकरदेव असमीया जन–जीवन की संस्कृति निर्माण के प्रबल पक्षधर थे। शंकरदेव एकसाथ असमीया भाषा के अत्यंत प्रसिद्ध कवि, नाटककार, सुगायक, नर्तक, समाज–संगठक तथा हिन्दू समाज सुधारक थे। उन्होंने नव वैष्णव अथवा एकशरण धर्म का प्रचार करके असमीया जातीय संस्कृति को एकत्रित करने में सक्षम हुआ। एकेश्वरवाद के संदर्भ में उनका मानना था कि 'एक देव, एक सेव, एक बिने नाइ केव'। इस धर्म में कोई जाति–भेद, ऊँच–नीच, अमीर–गरीब का भेद नहीं है। असम प्रदेश में सत्र एक विशेष संस्थागत केन्द्र है जो एक शरण धर्म के परंपरा को जिंदा रखते हैं तथा उसका विस्तार करते हैं। शंकरदेव ने सर्वप्रथम बरदोवा अथवा बतद्रवा नामक स्थान में सत्र की स्थापना की। इस सत्र में एक प्रार्थना घर अथवा नामघर बनाया गया जहाँ नाम–कीर्तन किया जाता था। साथ ही धार्मिक आलोचनायें भी होती थी। शंकरदेव द्वारा प्रतिष्ठित 'महापुरुषीया धर्म' के अनुयायी असम में निवास करते है। जिसमें श्रवण–कीर्तन का अधिक महत्व है। असमीया संस्कृति को अधिक प्रशस्त बनाने के लिए उच्च अध्यातमिक भाव सम्पन्न, निर्दिष्ट राग विशिष्ट, एक विशेष ढंग से गाए जानेवाले 'बरगीत' की रचना किया। असम में भक्ति आंदोलन को प्रचार–प्रसार करने का श्रेय शंकरदेव को है। सत्रीया नृत्य असम का शास्त्रीय नृत्य है। इस नृत्य के संस्थापक शंकरदेव हैं। जिन्होंने सत्रीया नृत्य को अंकिया नाट के लिए एक संगत के रूप में बनाया था। आज यही नृत्य भारत के आठ शास्त्रीय नृत्यों में सम्मिलित होने का गौरव प्राप्त हुआ है।

नव–वैष्णव धर्म के प्रवर्तक शंकरदेव के जीवन–वृत्त से समग्र असम प्रदेश का संस्कृति जुड़ा हुआ है। शंकरदेव की रचनाओं में वर्णित संस्कृति विधान भारतीय सांस्कृतिक जीवन मूल्यों की प्रति. निधि मात्र हैं। असम में विभिन्न समुदाय के लोग निवास करते हैं। विविध जातियों के बीच समन्वय तथा परिमार्जित–संस्कारित करने का कार्य शंकरदेव को हैं। शंकरदेव की अक्षय कीर्ति 'कीर्तन' असमीया संस्कृति की अमूल्य निधि है। सत्र, नामघर आदि का निर्माण करके धार्मिक कार्यों से असमीया समाज–जीवन को अंधकार की कालिमा से सर्वदा के लिए मुक्त कराया। उन्होंने अंकीया नाट, बरगीत, सत्रीया नृत्य, विविध वाद्ययंत्रों का प्रचलन कराके असमीया संस्कृति को अधिक प्रश्स्त किया।

भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में स्थित असम एक अन्यतम राज्य है। प्राचीन काल में इस राज्य को प्रागज्योतिषपुर और कामरूप दोनों नामों से अभिहित किया जाता था। असम प्रदेश असंख्य पेड़–पौधे एवं पहाड़ों से घिरा हुआ है। पर्वतों से घिरने के कारण यह भूमि असमान है, इसीलिए इस क्षेत्र का नाम 'असम' पड़ा। इसका अर्थ है समान न होना 'असमान'। संस्कृत में असम का अर्थ है जिसके समान कोई नहीं अर्थात अद्वितीय। असम नाम की उत्पत्ति के संदर्भ में डॉ. बाणीकान्त ककति ने आसाम् शब्द का संबंध आधुनिक असमीया शब्द आहोम से माना है। उनका कहना है कि– 'ताइ लोकसकलक बुजोवा आधुनिक असमीया आहोम् शब्द देख् देखकैये पुरणि असमीया आसाम् शब्दरकाषलैके जायय आसाम्>आसम्>आहम्>आहोम्' (काकति, बाणीकान्त, पृ–2)। यानि ताइ लोगों को बनाने वाला आधुनिक असमीया शब्द आहोम् स्पष्टतः पौराणिक असमीया शब्द आसाम् के पास ही ठहरता है। ताइ भाषा में 'छाम' का अर्थ है 'परास्त होना'। इसके साथ आर्य भाषा का निषेधवाचक 'आ' उपसर्ग लागने से 'आछाम' हुआ। इससे आछाम शब्द का अर्थ हुआ अपराजेय या विजय होना। ओर श्यान को ही 'आछाम्' कहा गया। आछाम् द्वाराजीतने वाले देश का नाम आछाम् या आचाम्, आसाम् हो गया। परिवर्तन के फलस्वरूप आसाम् नाम का संशोधित रुप 'असम' बन पड़ा।

संस्कृति एक समाज की जीवन प्रवाह है। संस्कृति समन्वय का वस्तु है। भाषा, साहित्य, जीवनदर्शन, सुकुमार कला आदि के बीच संस्कृति रहती है। डॉ. भूपेंद्र रायचौधरी के शब्दों में–'संस्कृति शब्द 'सम्' उपसर्गक 'कृ' धातु से निष्पन्न होता है। सम् उपसर्ग के आगे 'कृति' शब्द जोड़ने पर–सम्कृति=संस्कृति शब्द की निष्पत्ति होने का विधान है। शब्दकोश में इसके अर्थ हैं– शुद्धि, सफाई, सुधार, संस्कार, किसी व्यक्ति, जाति, राष्ट्र आदि की वे सब बातें जो उसके मन, रुचि, आचार–विचार, कला–कौशल और सभ्यता के क्षेत्र में बौद्धिक विकास की सूचक होती है।' (रायचौधरी, भूपेंद्र, पृ–120)।

असमीया जनजाति के भौगलिक परिवेश, खान–पान, रहन–सहन, उत्सव–पार्वण, पुजा–पाठ, भाषा आदि के समन्वय से असमीया संस्कृति बनी है। जिनमें संस्कृति के प्रतीक स्वरूप तामोलपाण (तंबाकु), शराइ, गमोछा आदि का व्यवहार किया जाता है। असमीया संस्कृति में जनजाति और अजनजाति दो हैं। लोकगीत, कविता, काव्य, कहानी, भाषा, भक्ति, लोकाचार, उत्सव, बाजार, धर्म, नृत्य–गीत, खेल आदि से तात्पर्य रखते है। जिस तरह 'बिहु' असम की जातीय उत्सव है। विविध संगीत जैसे वाद्ययंत्र ढोल, ताल, पेपा, गगना आदि का प्रचलन है। तरह–तरह के लोकगीत भी है, जैसे–कामरूपिया लोकगीत, गोवालपरीया लोकगीत, ओजापाली आदि। असमीया संस्कृति जीवन को अधिक समृद्धशाली बनाने का कार्य संत शंकरदेव को है। इस संदर्भ में डॉ० भूपेंद्र रायचौधरी के अनुसार, 'शंकरी–संस्कृति से इतना ही तात्पर्य है कि मध्यकालीन भक्ति–आंदोलन के उत्तर–पूर्व भारत के महान दिकपाल शंकरदेव द्वारा अपने एकशरण भागवती नाम–धर्म के प्रचार के समानान्तर समाज को प्रदान करनेवाली संस्कृति।' (रायचौधरी, भूपेंद्र, पृ–120)

शंकरदेव का जन्म असम के नगाँव जिले की बरदौवा के निकट अलिपुखुरी में हुआ था। जन्म के कुछ दिन पश्चात इनकी माता सत्यसंध्या का निधन हो गया। इसके बाद लालन–पालन का भार दादी खेरसुती ने संभाला। इनके पितृ कुसुमवर भुईयाँ शिरोमणि भुइयाँ थे। उन्होंने बारह वर्ष की अवस्था में महेंद्र कंद. ली की पाठशाला में अध्ययन शुरू किया और केवल आठ वर्षों में ही सब प्रकार के शास्त्रों का अध्ययन पूरा किया। 21 वर्ष की उम्र

में सूर्यवती के साथ इनका विवाह हुआ। मनु कन्या के जन्मोपरांत सूर्यवती परलोकगामिनी हुई। मनु के विवाहोपरांत वे संन्यासी बनकर निकल गये और बारह वर्षों तक सम्पूर्ण भारत में विभिन्न तीर्थों का भ्रमण करते रहे। असम में आकर 'एकशरणीया–भागवती नाम धर्म' का प्रचार किया। शंकरदेव के वैष्णव संप्रदाय का मत एक शरण है। इस धर्म में मूर्तिपूजा की प्रधानता नहीं है। ध ार्मिक उत्सवों के समय केवल एक पवित्र ग्रंथ चौकी पर रख दिया जाता है, इसे ही नैवेद्य तथा भक्ति निवेदित की जाती है। उन्होंने ज्ञान–मिश्रित भक्ति का जो प्रवाह किया उससे आज भी असम ही नहीं, बल्कि समग्र पूर्वांचल के लिए आदर्श–मार्ग का परिचायक है।

शंकरदेव ने अपनी रचनाओं के माध्यम से असम तथा उत्तर–पूर्वांचल की जनता को भारतीय दृष्टि प्रदान की थी। उनके रचनाएँ हैं– संस्कृतः i) भक्तिरत्नाकर, ii) तोटय

ब्रजावली : i)बरगीत, ii)पत्नी–प्रसाद नाट, iii)कालि–दमन नाट, iv) केलि–गोपाल नाट, v)रुक्मिणी–हरण नाट, vi) पारिजात –हरण नाट, vii)रामविजय नाट

असमीया : i) भक्ति–प्रदीप, ii) हरिश्चंद्र उपाख्यान, iii) रुक्मिणी हरण, iv) गुणमाला, v) उत्तराकाण्ड रामायण, vi) भटिमा, vii) कीर्तन–घोषा, viii) भागवत

शंकरी संस्कृति का मुख्य केंद्र हैं– नामघर, सत्र प्रतिष्ठान। सत्र के माध्यम से ही गीत (बरगीत), कीर्तन (संकीर्तन), नाट–भाउना (नाटक), नृत्य, वाद्य आदि सुकुमार कलाओं, स्थापत्य –भास्कर्य, चित्र–कला, लोकोत्सव के विविध रूपों का प्रचलन एवं विकास हुआ। इनमें ही शंकरी संस्कृति का समायोजन हुआ।

शंकरदेव के वैष्णव संप्रदाय का एक पंथ है। इसमें मूर्ति पूजा की प्रधानता नहीं है। धार्मिक उत्सवों के समय केवल एक पवित्र ग्रंथ चौकी पर रख दिया जाता है, इसे ही नैवेद्य तथा भक्ति निवेदित की जाती है। इस संप्रदाय में दीक्षा की व्यवस्था नहीं है। इस मत के अधिकांश अनुयायी असम में निवास करते हैं। इस धर्म में श्रवण–कीर्तन का अधिक महत्त्व है। इस धर्म को 'नववैष्णव धर्म' और 'महापुरुषीया धर्म' भी कहते हैं। इस धर्म का मूल मंत्र है–एक देव, एक सेव, एक बिने नाइ केव। इस धर्म में कोई जाति–भेद, ऊँच–नीच, धनी–दुखिया का भेद नहीं है।

शंकरदेव और माधवदेव ने जिन गीतों की रचनाएँ की थीं, वे 'बरगीत' के रुप में प्रचलित हैं। चरित पोथी में उल्लेख है कि शंकरदेव ने 240 बरगीतों की रचना की थी, परंतु इन्हें कंठस्थ करने के लिए ले जानेवाली एक भक्त के घर में आग लागने के कारण बरगीत को पोथी भी जल गयी। बरगीतों में कृष्ण वंदना, रुप–सौंदर्य, कवि का दैन्य, नाम–महिमा, भक्ति की महत्ता, संसार की भंगुरता, मनरू प्रबोध, गोपी विरह आदि को वर्ण्य–विषय बनाया गया है। शंकरदेव की अप्रतिम उपलब्धि बरगीत को मनोविजय की साधना का काव्य कहा जा सकता है। शंकरदेव रचित बरगीत 'रागबद्ध' हैं। बरगीतों में प्रयुक्त कुछ राग हैं–अहिर, आशोवारी, कल्याण, कानाड़ा, कामोद, केदार, कौ, गौरी, तुड़, तुड़–वसंत, धनश्री, नाट–मल्लार, वसंत, बेलोवार, भाटियाली, भूपाली, ललित, श्यार्म, श्री आदि।

'नामघर' सामूहिक उपासना–गृह है। भगवद् नाम–संकीर्तन करने के कारण इसे 'नामघर' कहा जाता है।नामघर एक ग्रामीण पंचायत है तथा ग्रामीण जीवन एवं समाज के लिए नीति–निर्धारन करता है। यही गीत–नाटक के पूर्वाभ्यास तथा लोकोत्सवों का केंद्र होता है। नामघर के भीतर चार अंग होते हैं–मणिकूट, मूल नामघर या कीर्तनघर, छोंघर एवं बाटचरा। मणिकूट अपेक्षया छोटा घर है जिसे नामघर के पूर्व उत्तर–दक्षिण –दिशा में बताया जाता है। मणिकूट के बीच में आसन (सिंहासन, वेदी) स्थापन कर शंकरदेव द्वारा रचित भागवत को रखा जाता है। आसन (गुरु आसन) के ऊपर चंद्रताप रहता है और सामने बंति (दीया) प्रज्वलित करने का नियम है। नाम– संकीर्तन करने के लिए नामघर का आकार बड़ा होता है। गाँव की या भक्तों की संख्या के अनुसार नामघर या कीर्तनघर का आकार छोटा–बड़ा होता है। नामघर के धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों को संपादित करने के लिए प्रत्येक गाँव में कुछ कार्यकर्ता रहते हैं– सातोला, देउरी, बिलनिया, नाम लगोवा, पाठक, पाचनि आदि। नामघर में होनेवाले नाट–भाओना के लिए प्रशिक्षण एवं संचालित करने के लिए गायन–बायन (गायक–वादक) व सूत्रधार की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। नामघर ललित–कलाओं का आकर्षक केंद्र है। शंकरदेव द्वारा अंकीया नाटों का प्रदर्शन हुआ था। अंकीया–भाओना के लिए विभिन्न प्रकार के मुखौटा, अस्त्र–शस्त्र –धनुष–वाण, गदा, तलवार, बाल, किरीटी, विभिन्न अलंकरण की सामग्रियाँ नामघरों में मिलते हैं। नामघर के माध्यम से जो स्थापत्य एवं भास्कर्य कला का विकास हुआ, इन सबके विकास का मूल स्रोत शंकरदेव का ही अमूल्य देन है।

सत्र विशेष संस्थागत केंद्र है जो एक शरण धर्म के परंपरा को जिंदा रखते है तथा उसका विस्तार करते हैं। उन्हें अनुयायियों के रूप में रहने के लिए और सत्र के उत्थान के लिए धार्मिक और आर्थिक मदद देने को कहा जाता है। सत्र के धार्मिक एवं सामाजिक काम तथा दायित्व के निर्वाह करने के लिए अधिकारी एवं कार्यकर्ता भक्तों से नियुक्त किये जाते हैं। जैसे– बारपूजारी, बरदेउरी, बरभांडारी, बरपाठक, बरनामल्गोवा, बरगायन, बरबायान, राजमेधि, ओजा आदि। सत्र के दैनन्दिन कार्य को सामान्यतः 'प्रसंग' या नाम–प्रसंग कहा जाता है। शंकरदेव ने नित्य–प्रसंग के लिए तीन समय निर्धारित किये थे– प्रातः, अपराह्न एवं रात्रि। शंकरदेव ने सर्वप्रथम बरदोवा अथवा बटद्रवा नामक स्थान में सत्र की स्थापना की।

संस्कृति से जीवन की आवश्यकता परिपूर्ण होती है। सामाजिक अभ्यास, व्यवहार को भी निर्णय करती है। शंकरदेव के व्यक्तित्व के प्रतिभा से समग्र असमवासी को नये मार्ग से आलोकित किया। शंकरदेव के सांस्कृतिक परम्पराओं ने जनता के बीच समन्वय भावना को उद्वेलित किया। शंकरदेव अनन्य व्यक्तित्व के अधिकारी थे। वे धर्म के साथ साहित्य एवं संस्कृति को जोड़कर इसका आयाम व्यापक बनाया था।

संदर्भ ग्रंथ–

1. रायचौधरी, भूपेंद्र, श्रीमंत शंकरदेव : व्यक्तित्व और कृतित्व, श्रीमंत शंकरदेव संघ, गुवाहाटी, 2002/2. रायचौधरी, भूपेंद्र, शंकरदेव और तुलसीदास की वैचारिक भावभूमि, भारतीय संस्कृति परिषद, गुवाहाटी, 1997 /3. शर्मा, शशी, असमत विष्णु, वैष्णव आरू श्रीमंत शंकरदेव, ज्योति प्रकाश, नलवारी, 2007/4. काकति, बाणीकान्त, असमीया भाषार गठन आरु विकाश, अनु. विशेश्वर हाजरिका, असम सरकार प्रकाशन, 1941 ■■

❑ शोधार्थी, हिन्दी विभाग, गोहाटी विश्वविद्यालय (असम)
sumisarmah1993@gmail.com

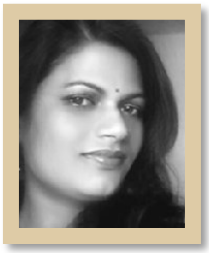

षोडशी

हिंदी / कहानी

डॉ. उषा किरण

कांता देवी मंदिर की सीढ़ियाँ चढ़ती थकी–थकी–सी नजर आ रही हैं। पति दुकान से फूल और प्रसाद लेने गए हैं, उनके आने पर साथ ही जाएंगे यही सोच वह वहीं छाया में सीढ़ियों पर बैठ गईं। बहुत दिनों के बाद घर से बाहर आने के कारण कांता देवी का मन बार–बार घर लौट जा रहा है। शौर्य का अचानक ''दादी...! दादी...!'' कहकर चौका देना और मिली का मुँह बनाते हुए कहना ''दादी माँ! मेरी गुड़िया के बाल बना दोगी आप?'' अपने पोते–पोतियो के संग अपूर्व सुखद अहसास से भरी रहने वाली कांता देवी जैसे उनके साथ अपना बचपन फिर से जीने लगी हैं। यही कारण है कि उनसे दूर होने पर उनकी ही याद बार–बार आ रही है जिससे वह थोड़ी उदास भी हो जा रही हैं। सहसा सामने से एक नन्ही सी बच्ची अपनी दादी की उंगली पकड़ जब पास से गुजरती है तो कांता देवी के सामने स्मृतियों के पन्ने फड़फड़ा उठते हैं और वे अपने बचपन की यादों में खो जाती हैं।

आठ बरस की नन्ही शरारती कांता अपनी दादी की लाडली थी, जो बचाव के लिए भागती–दौड़ती सीधे दादी की गोद में गिर जाती थी। तीन भाइयों के भरे–पूरे संयुक्त परिवार में कुल मिलाकर आठ–दस भाई बहनों में खूब मेल रहता था और खूब लड़ाइयाँ भी होती थी। तब उनकी वकील और जज दोनों दादी ही होती थीं। वह भी क्या दिन थे। खुशियाँ ही खुशियाँ थी गम का कहीं नामोनिशान नहीं था। तभी कांता देवी की तन्द्रा टूटती है। पति को अधपकी घनी मूछों के बीच शरारती मुस्कान लिए सामने देख झेंप सी जाती हैं।

''क्यों, थक गयीं...? षोडशी..!''

मुस्कुराते हुए पति को देख अचानक कांता चहक उठती है, ''थके वह जो बुड्ढा हो। मैं तो आपकी राह देख रही थी।'' खनकती सी आवाज में उठती हुई कहती है।

''ऐसे ही नहीं कहता मैं षोडशी। तो अब चलें षोडशी!''

दोनों खिलखिला पढ़ते हैं एक साथ तो कई नजरें सहज ही उठ जाती हैं उनकी ओर। यह देख दोनों अपनी–अपनी मुस्कुराहटें होठों के भीतर भींच लेते हैं।

उम्र का यह पड़ाव जो बड़ा डरावना सा लगता है। लोग इस दिन की कल्पना मात्र से ही सिहर उठते हैं। तरह–तरह की भ्रांतियाँ भी मन में बसी रहती हैं तो कुछ आसपास घटित होते यथार्थ भी प्रमाण रूप में प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं। पर संजी. दगी और जिंदादिली के आगे सब हारते हुए प्रतीत होते हैं। यूँ ही नहीं कहा जाता कि आदमी स्वयं कल्पवृक्ष होता है, वह जैसा सोंचता है, वैसी ही सोच का प्रभाव उसकी जिंदगी पर पड़ता है। सकारात्मकता और नकारात्मकता एक ही सिक्के के दो पहलू होते हैं। यह सिक्का सबके पास होता है, किंतु यह बहुत हद तक उस व्यक्ति पर निर्भर करता है कि वह अपनी सोच को किस दिशा में मोड़ता है जिससे बहुत हद तक उसका जीवन उससे प्रभावित होता है।

शरारती कांता तब सोलह साल की थी, जब विवाह हुआ था। साँवले, लंबे थोड़े गंभीर तो कुछ मजाकिया कृष्णकांत को कोहबर घर में गंभीर मुद्रा में बैठे देख घुंघट के भीतर वधु कांता की हँसी छूट गई थी। फिर अचानक उसे क्या था हुआ कि वह सामने रखी डालिया से पीले चावल को मुट्ठी में उठाकर मौका मिलते हैं ही उनकी ओर फेंक खिलखिला पड़ी थी। कांता को घूंघट के अंदर खिलखिलाता देख कृष्णकांत को लगा था जैसे असंख्य मृदंग के तार एक साथ झंकृत हो उठे हों। तब कांता के लिए विवाह के मायने उत्सव, गहने, कपड़े और भोज तक ही सीमित थे। तब उसे वैवाहिक जीवन के कठिन दांपत्य अनुष्ठान का भान नहीं था। अब तक जो अपनी गुड़ियों को सजाती आई थी, स्वयं को गुड़िया जैसी सजी–धजी देख फूली न समा रही थी। इसका कारण एक और था कि उसका गुड्डा जिसके साथ उसने फेरे लिए थे वह उसे बहुत पसंद आया था। उसकी जिन सहेलियों का पिछले साल विवाह हो गया था, वह कांता को पहेलियों में छेड़ती तो उसका अर्थ न समझ में आने पर वह उन पर दाँत पीसती गुस्सा होती थी।

बिहार प्रांत में आज बीते दिनों की बात हो गई है किंतु कुछ दिन पहले तक जब बारात आती थी तब वह वधु के घर दो रात रुकती थी, जिसे 'मरजाद' रखना कहा जाता था। एक रात रस्म अदायगी होती थी और दूसरे दिन सवाल–जवाब वर पक्ष और वधु पक्ष के लोगों के बीच होते थे। दोपहर के भोजन के समय महिलाएँ वर पक्ष के लोगों को खूब मधुर–मधुर गालियाँ गीतों के माध्यम से देती थीं। शाम को बारातियों के मनोरंजन के भी खूब इंतजाम किए जाते थे। नर्तकियाँ बुलाई जाती थी जिससे अंदाजा लगाया जाता था वर पक्ष के रईस होने का।

शाम के समय मंडप में दूल्हे के वेश में बैठे कृष्णकांत से उनकी साली सलहाज हँसी–ठिठोली कर रही थीं तब कांता सामने के कमरे में खिड़की के पास पर्दे के पीछे बैठी आँगन में होने वाली गतिविधियों को देखो मचल रही थी कि वह वहाँ क्यों नहीं है? माँ को शायद कांता पर भरोसा नहीं था इसलिए कमरे में उसके साथ उसकी बुआ को बिठा रखा था। कांता के अंदर जो शैतानी कीड़ा भरा पड़ा था वह कुलबुला रहा था। उसकी बुआ उसे ससुराल की नसीहतें पढ़ा रही थीं, पर कांता उंघने का बहाना बना थोड़ी देर में सोने का नाटक करने लगी।बुआ ने देखा कि कांता सो गयी तो वे भी लुढ़क कर सो गईं। कांता तो इसी फिराक में थी। कमरे में नजर दौड़ाई तो देखा कोने में एक डलिया में कच्ची अंबिया रखी मिली जिसे लेकर इत्मिनान से बैठ गई। हँसी–ठिठोली और दूल्हे से सवाल–जवाब का दौर चल रहा था तभी 'तड़ाक!' से एक अंबिया दूल्हे के गाल पर लगी। महिलाओं ने समझा उन्हीं में से किसी ने शरारत की है तो वे एक–दूसरे को डाँटने लगीं। 'तड़ाक!' फिर एक अंबिया दूल्हे

की बाँह पर लगी। अबकी बार दूल्हे कृष्णकांत की नजर सामने की खिड़की पर गई जहाँ पर्दे के पीछे हलचल-सी दिख रही थी पर अब वहाँ सन्नाटा था। अबकी अंबिया सीधे उनकी गोदी में गिरी थी। कांता अपनी सफलता पर मुँह पर हाथ रख मुश्किल से अपनी हँसी रोके थी। चोट खाए दूल्हे का चेहरा देखने के लिए उसने धीरे से पर्दे को सरकाया। यह क्या ? सरकार की नजरें भी पर्दे सरकने का ही इंतजार कर रही थी। जैसे ही कांता की नजरें दूल्हे से मिली तो वह अचानक सकपका गई। उसके सिर से पाँव तक एक अजीब सी झुरझुरी की लहर दौड़ गई। जोर-जोर से दिल धड़कने लगा। बेचैनी और डर में फिर पर्दे से झाँका तो अपनी ओर मुस्कुरा कर देखते अपने दूल्हे को देख उसकी जान में जान आई। उस वक्त उसे लगा था कि उसके अंदर एक दूसरी कांता ने प्रवेश कर लिया है। क्या था उन आँखों में? उन मुस्कुराहटों में और उसकी धड़कन में? जो एक नई अनुभूति से भर दिया था कांता को। अब तक तो वह अनजान थी ऐसी अनुभूतियों से।

अपने हमसफर के साथ ससुराल की देहरी लांघने वाली कांता, नई कांता थी। यह कांता कुछ भ्रमित थी तो कुछ आश्चर्यचकित! पाँव की पैंजनी की रूनझुन से घर में खुशियाँ बि खेरती वह अपनी गृहस्थी में अपनी जिम्मेदारियाँ निभाना सीखने लगी थी। दो सासु माँ में उसने अपनी माँ और दादी की छवि दे खती और उतना ही मान दुलार पाती। किसी को कभी शिकायत का मौका नहीं मिले इसके लिए जरूरी था कि कांता पहले वाली कांता को मायके ही छोड़ आती और ऐसा ही किया था उसने।

कृष्णकांत को उस रात अंबिया मारने वाली कांता ही भाती थी। वह चाहते थे कि वही कांता उनके साथ रहे हमेशा, हर उम्र में। तभी तो उन्होंने उसे नाम दिया था 'षोडशी'। वे चाहते थे कि कांता उन्हीं के आसपास रहे। किसी न किसी बहाने वह उसे आवाज देते और मौका मिलते ही अपनी बाँहों में जकड़ लेते। चूड़ियों की अचानक बढ़ गई खनखन की कहानियाँ खुशियों में चार चाँद लगाती। धीरे-धीरे कांता माँ की भूमिका में ढलने लगी। दो बच्चों की माँ बन गई थी। एक बेटा और एक बेटी। बच्चों की दादी उनकी देखभाल करती थी। एकदम कांता की कार्बन कॉपी थे दोनों शरारत में। नाक दम किए रहते। अपनी दादी के आस-पास रहते और वही उन दोनों को संभालतीं। कहानियाँ सुनाती, कभी लोरियाँ गातीं। उन दोनों में अच्छे संस्कार डालने में परदादी का हाथ था। कांता की गृहस्थी सरल और खुशियों भरी थी। आखिर होता क्यों नहीं? जहाँ बड़े बुजुर्गों का मान होता है, जिस घर में उनके होठों पर मुस्कान रहती है, वहीं उनकी दुआओं से घर स्वर्ग बन जाता है।

आज दोनों जिंदगी के उस पड़ाव पर पहुँच चुके हैं, जहाँ अक्सर जिंदगी बेरंग लगने लगती है। वहीं उन दोनों की जिंदगी में खुशियों के रंग दिन-ब-दिन गहरे होते जा रहे थे। जिंदगी की हर जिम्मेदारी निभाते-निभाते एक सिक्के के दो पहलू की तरह हो गए थे। एक के बिना दूजे का कोई अस्तित्व नहीं था।

वे आज अपनी सभी जिम्मेदारियों से मुक्त हो गए हैं। दोनों बच्चों का विवाह कर दिया है। कांता दादी और नानी बन गई है। उसे समझ में नहीं आता है कि अल्हड़ कांता से माँ तक का सफर और माँ से दादी तक का सफर कैसे इतनी जल्दी तय कर गई? उसे कुछ समझ ही ना आया।

आज हरिद्वार आए हुए उनका चौथा दिन है। खूब पूजा की है। खूब दर्शन किए हैं। होटल के एकान्त कमरे में ना जाने क्यों आज दोनों का मन जिंदगी के पन्ने पलटते हुए कुछ बचकना होने लगा है और लौटना चाहता है उन्हीं पलों में जिन पर उम्र और जिम्मेदारियों की धूल चढ़ गई है। आज दोनों अपनी एक-एक स्मृतियों को ताजी कर नई ऊर्जा से भर देना चाहते हैं। वे यह भूल जाना चाहते हैं कि वे तीर्थ यात्रा पर आए हैं और उनकी उम्र अब रंगहीन होने के पड़ाव पर पहुँच चुकी है। कृष्णकांत अचानक कांता को अपनी बाहों में ले लेते हैं।

''अरे.. रे.. रे..? यह क्या कर रहे हैं आप? कुछ ख्याल है कि तीर्थयात्रा पर हैं हम। सठिया तो नहीं गए...?''

''...और तुम तो वही हो षोडशी...! चंचल...! शरारती...!'' बात काटते हुए कहा कृष्णकांत ने।

''शर्म कीजिए, हम तीर्थयात्रा पर हैं...।''

''तीर्थयात्रा नहीं जानेमन! हनीमून... कहिए।'' अपनी बाँहों के कसाव को गहरा करते हुए कहा उन्होंने।

कांता उनकी पकड़ से दूर होती उनकी तरफ तकिये और कुशन फेंकती वही कांता लग रही थी जो मंडप में बैठे दूल्हे को अंबिया मार रही हो। अपनी स्मृतियाँ ताजी करते हुए दोनों अपने उन्हीं पलों में लौट गए जहाँ दोनों ने पाया कि उनके अंतर का संसार अब भी वही है। जैसा कि साठ साल पहले था। कहाँ कुछ बदला है? सामने है हल्के घूंघट निकाले पायल की मृदु झनकार से मन को मोहती कांता। जब हंसती थी तब असंख्य वीणा के तार तरंगित हो उठते थे।

आज साँझ धीरे-धीरे गंगा घाट पर उतरती आ रही है। चाँद भी अपनी चाँदनी के संग उतर आया है गंगा के निर्मल पानी। कांता चाहती है कि हाथ बढ़ाकर छू लेती चाँद को। वह एकदम से चंचल हो उठती है। दोनों सीढ़ियों पर बैठे हैं और उनके पैर पानी में है। अचानक से कांता एक अँजुरी पानी उठाकर कृष्णकांत के मुँह पर छींटे मार देती है और खिलखिला पड़ती है। उन खिलखिलाहटों में एक साथ कितनी मृदुल यादों की गठरी खुल कर बिखर जाती है।

आज दो तन एक प्राण साथ हैं और साथ है चाँदनी रात, नदी का किनारा और चाँद। चारों तरफ रजत ज्योत्सना फैली है। यह रोमांच पहले कभी नहीं था। नयी अनुभूति है जो पहले कभी नहीं थी। वक्त अतीत में आकर खड़ा हो गया है। आज वही कांता है सोलह साल की और वही नवयुवक कृष्णकांत जिनकी घनी मूछों के पीछे शरारती मुस्कान थिरकती रहती थी। कृष्णकांत कांता से कहते हैं, ''वक्त यूँ ही थमा रहे और हम दोनों यूँ ही बैठे रहें। आज की शाम कितनी सुहानी है। काश! यह पल ठहरा रहे सदा-सदा के लिए।''

दोनों एक दूसरे में खोए हुए किसी स्वप्निल लोक में विचरण करने लगे दिन दुनिया से बेखबर अपने उत्साह और ऊर्जा को नया रूप देते हुए। कृष्णकांत अपनी ही रौ में बोलते जा रहे हैं, ''सच में जिंदगी कभी नहीं थकती बल्कि मन थक जाता है तो जिंदगी भी ऊबाऊ हो जाती है। आवश्यकता है मन को सदैव जिवंत बनाये रखने की। बहाने तो सौ हैं मन को खिलाये रखने के लिए.....!'' ''ज्ञानी बाबा! अब चलें भी...।''

अचानक षोडशी खिलखिलाने लगती है जिसमें कृष्णकांत का अन्तर झंकृत हो उठता है। ■■

❑ केसरिया, पूर्वी चंपारण (बिहार)

शबरी का संयोग

हिंदी / कहानी

डॉ. आशारानी लाल

उसका नाम कीनू नहीं, किशुना था, पर उसे किसी ने उसके सही नाम से कभी नहीं पुकारा। वह संतुष्ट थी, अपनी इस पुकार से। अपने इस उल्टे–सीधे नाम में ही उसे सुख एवं आत्म संतोष मिल जाता था। लगता था उसका हृदय समुंद्र से भी गहरा एंव तरल था, जिस पर कभी किसी सोच की कोई भी टेढ़ी–मेंढ़ी या सीधी– चाहें जैसी भी लकीर हो वह खिचती ही नहीं थी। सादा जीवन उच्च विचार में ही उसका अटूट विश्वास था। उसने तो कभी सोचा ही नहीं कि कोई उसे पुचकारता या दुलारता क्यों नहीं। बात बस इतनी सी ही थी कि वह कुछ अलग–थलग दिखा करती थी। वह सही में काली थी। चेहरा भी कुछ कुछ चिन्हित विकृतियों से भरा था, तो हुआ क्या, इसके बावजूद भी तो सभी अपने अपने कामों के लिए उसे ही पुकारते थे। वह हर तरफ पुकारी जाती थी। यही उसका अपना संतोष था। लगता था उसमें गुण अनेक भरे थे। हल्के से हल्का एंव कठिन से कठिन काम वह पलक झपकते कर देने में माहिर थी। काम के लिए ही तो सही पूरा परिवार और पूरे घर–गाँव में हमेशा उसकी पूछ हुआ करती थी उसके सुखी जीवन का यही आधार था।

वह नाचती थी, गाती थी, मटकती थी तथा हँसती और रोती भी थी– सबकुछ तो वह कर ही लेती थी, देखते–देखते वह अब हर जगह विराजमान रहने लगी थी। हाँ सभी की मुखिया बनकर वह कहीं नहीं गई पर कार्यकारी सदस्य तो सदा बनती रही। उसके अन्दर गोरी, सुन्दर एवं खुबसुरत लड़कियों को उछलते–कूदते देखकर कभी इर्ष्या या द्वेष की भावना जगी ही नहीं, न तो वह किसी से अपनी तुलना ही करना कभी पसन्द करती। सभी उसके लिए एक समान थे। तभी तो वह न किसी से दूर रही न नजदीक। उसका न कोई दोस्त था न दुश्मन। वह घर के सेवक और मालिक दोनो को केवल मानव की संज्ञा ही देती रही सभी से हँस–हँसकर बातें करती– यही उसके जीवन का रहस्य था। ऐसा करते वह कभी थकती भी नहीं थी।

जब कीनू स्कूल और कॉलेज गयी तब भी उसने देखा कि लड़कों की वह क्या बात करे, जबकि लड़कियाँ भी इसे देखकर ही अपना मुँह फेर लेतीं चाहें घुमा लेतीं, फिर आपस में कुछ कानाफूसी भी करती रहतीं। कीनू तब भी खुश रहती। वह जानती थी कि कि लड़के उससे सटकर या धक्का मारकर, या उसे धकेलते हुए तो कभी नहीं चलेंगे। वे कभी उसके पीठ पर अपना हाथ नहीं फेरेगें या कभी कलम–किताबों के बंडल उसे नहीं पकड़ाएगें, और तो और गुलाब की पंखुड़ियाँ भी उसपर कभी नहीं लुटाएँगें– तब भी वह शान्त रहती और अपने–आप में मचलती ही दिखती। इसी समय उसे अपनी कुरूपता पर गर्व भी होता। उसे पता था कि सुन्दरता तो कितनों को इस जीवन के मजधार में ही डुबो देती है, फिर भी सब उसी की पूजा करते हैं। दुर्गा देवी तो घर घर में पूजी जाती हैं पर काली जी को कोई संत–महात्मा ही पूजता है।

उसे बस अपने कार्य से प्यार था। उसे पता था कि केवट केवल अपने कर्म के बल पर ही राम का प्यारा बना और उनके गले लग गया। यह सब संयोग है। उसके जीवन का संयोग भी कहीं उसके ताक में बैठा होगा। वह जरूर उसकी बाट जोहता होगा। वह भी उसकी प्रतिक्षा करेगी। अभी अपने बारे में इतना ही सोच पायी थी कि शर्मा गई– पर डीगी नहीं। वह अपने उसूलों की पक्की थी। संयोग की प्रतिक्षा करेगी चुकेगी नहीं।

आज कीनू अपनी माँ की सेवा में लगी थी। अभी–अभी वह माँ के बिखरे बालों को सँवार कर उनके पूरे शरीर के तेल मालिश में जुटी ही थी, और माँ थी कि लेटे ही लेटे अपने चेहरे पर अपना आँचल रख चुपके–चुपके बेटी के रंग–बिरंगे चेहरे को निरख रही थी। उन्होंने उस चेहरे पर काले और लाल रंग की अजीबोगरीब सुन्दरतम पेन्टिंग देखी। उन्हें लगा कि माँ काली ने अपना पूरा रंग–रूप उस कीनू को ही दे डाला था।

माँ के मन में अनेकों विचार उभरते रहे और आते–जाते रहे। उन्होंने सोचा कि एक पेन्टर कितना सोच–विचार के बाद ही कोई पेन्टिंग बनाता है। जब मेरे बच्चों को बनाने वाला पेन्टर बैठा होगा तो पहले तो वह मेरे बेटे को ही बनाया। बेटे को उसने पूरा मेरा रंग–रूप ही रच–रच कर पेन्ट कर दिया, फिर मेरी बेटी की बारी आयी क्योंकि आने में उसने बहुत देरी कर दी। पेन्टर भी उब चुका था। वही हुआ अब पेन्टर के पास जो भी बचा–खुचा रंग शेष बच पाया था उसी से उसने मेरे बेटी को पेन्ट कर दिया। तभी मेरी बेटी ने पूर्णा रूपेण अपने पिता का रंग पा लिया। पिता तो पुरुष थे– तब सभी ने कहा कि घी का लड्डू टेढ़ा ही भला, पर मैं कीनू के लिए क्या कहूँ। उसके पिता को तो प्यार देना या देवता मानना मेरी भी मजबूरी थी, पर अब कीनू का क्या होगा। इसे तो कोई पुरूष अपनी पत्नी तो क्या र खैल बनाना भी स्वीकार नहीं करेगा। इसी समय लगा कि उनके कान भनभना–भनभना कर उन्हें ही समझा रहे हैं कि– माँजी, चाम नहीं काम प्यारा होता है। आपकी कीनू काम में निपुण है। फिर भी माँ को संतोष कहाँ था।

उन्हें आज की दुनिया में सब कुछ–झूठ लग रहा था। कीनू उनकी सेवा में व्यस्त वहीं पर सो चुकी थी, पर माँ की आँखों से नींद अभी बहुत दूर बैठी उनके चेहरों की रेखाएँ ही गिन रही थी जो उभरती और मिटती थीं।

माँ की स्थिति गजब थी। वह बारम्बार कीनू के पिताजी को पंडित के पास भेजती। वे जाते और वहाँ से बार–बार अपना मुँह लटकाए ही लौटते। वे बस यही कहते कि घबड़ावो मत। समय, भाग्य और संयोग की प्रतिक्षा करो।

अरे ! कब तक करूँ, क्या करूँ, समय तो हवा जैसे भागता रहता है। कहीं वह रुकता है– क्या! कि उससे भी कुछ पूछ लूँ। रही भाग्य की बात–तो जब विद्वान पंडित इसे नहीं पढ़ पाते, तब मुझ सी मूर्खा इसे क्या जान पायेगी। कीनू के भाग्य को

जानना आसान भी तो नहीं है, कारण पूरा समाज उसे देखकर ही अपना मुँह बिजका लेता है, वैसे ही जैसे उकसे जन्म के समय पूरा परिवार ही उसे देखकर अपना मुँह मोड़ लिया था। वह और क्या कहें। उनकी समस्या दुरुह थी, गम्भीर थी, अतः वह चुप्प हो गईं।

–अभी इसी उहा पोह में वह पड़ी ही थी' कि पति देव ने पुकारा।

उन्होंने सुना, वे कह रहे थे कि जानती हो लगता है कि कीनू का भाग्य अब चरचरा रहा है। संयोग आने ही वाला है।

– अभी–अभी वह केशव आया था।

– कौन केशव ?

–यह तो मैं भी नहीं जानता, पर लगता है बेटी के भाग्य ने उसे बुलाया है।

–यह है कौन, किसने उसे यहाँ भेजा है। वह कहाँ से आया है, पहले इसका तो पता कर लो। पता तो बातचित से यही लगा है कि उसे अपनो गाँव वालों ने मेरे पास भेजा है।

गाँव के सभी लोग कीनू के कार्यों की खूब प्रशंसा उससे किए। उसने गाँव में ही तुम्हारी बेटी की बदसूरती और कुरुपता को भी ठीक से जान लिया है। सब कुछ जानकर भी वह आँख मूदकर और एक आत्मसंतोष का अनुभव कर मेरे पास आया है।

केशव ने कीनू के पिता को बताया कि खूबसूरती को तो वह बहुत निकट से देखा है। उसके माँ–बाप ने उसकी शादी एक सर्व–सुन्दरी नारी से किया था। जो केवन चार वर्षो तक ही उसके साथ रही। उसका नाम वर्षा था। वह वर्षों उसपर अपने उत्पातों के ओले बरसाती रही और वह बरर्दाश्त करता रहा।

उसने आगे बताया कि जब इन ओलों ने उसके शरीर को छलनी कर दिया, उसमें सर उठाने की भी शक्ति नहीं रह गयी, तब भी वह उसे बर्दाश्त करता रहा। वह जानता था कि जब सिर ओखले में पड़ी ही चुका है तब चोटों की गिनती करना तो व्यर्थ ही होगा। उसका जीवन ही ठीठक गया था।

–पर एक समय उसने देखा कि अब ओलों का खजाना समाप्त हो चला था, केवल पानी की कुछ बूंदे ही बची रह गई थी, जो अब रिमझिम–रिमझिम बरस रही थीं। अब वर्षा धीमी पड़ गई थी, तब उसने कुछ राहत की साँस लिया।

वर्षा अब विश्वस्त हो चुकी थी कि उसके पति उसके मनोभावों की पूर्ती कभी नहीं कर पाएँगे, कारण वे अपने घर–परिवार में ही उलझे रहेंगे। वह न तो कभी वर्षा को पहाड़ों की सैर ही करा पायेगें, न विदेशी दुनिया की रंगिनी ही दिखा पायेगें, तब वह उब गई। जब उसने लालसाओं को चकनाचूर होते देखा तब उसने अपने माँ–पापा का सहारा लिया और कोर्ट जा पहुँची। वहाँ आसानी से उसे तलाक मिल गया। वह बहुत खुश थी, तभी उसका चिर परिचित विनय आ पहुँचा। वह चहक उठी और उसी विनय के साथ शीघ्र ही अपने गनतव्य की ओर बढ़ चली।

केशव अब अकेला था। वह तनकर चलने लगा था। वह खुश था, फिर भी यही सोचता रहता कि इस एक पहिए की अपने जीवन की गाड़ी को वह कबतक और कैसे दौड़ा पायेगा। अब मन अशान्त रहने लगा था, कि विधि के विधान ने उसके लिए कुछ और सोच लिया। अचानक एक निमंत्रण किसी दूर–दराज के गाँव के रिश्तेदारी से आ पहुँचा। उसका वहाँ जाना आवश्यक था। वहाँ पहुँचते ही वहाँ के वातावरण ने उसे आभास करा दिया कि लगता है उसके जीवन में एक नया विहान आने वाला है। वह गाँव दूर तो था पर वहाँ के रहने वाले सभी उसके रिश्ते–नाते में मामा–नाना ही लगते थे।

केशव को वहाँ देख लोगो ने उससे अपने गाँव की बेटी कीनू की बात करनी चाहीं। सबने उसके गुणों और कार्यों का ही ब खान केशव से किया। इतना ही नहीं साथ–साथ उसकी बदसूरती बताने में भी वे नहीं चुके। सब सुन जानकर केशव ने आत्ममंथन किया, फिर चल दिया कीनू के घर, उसके माता–पिता से उसका हाथ माँगने।

कीनू के घर आते ही उसने अपना परिचय कीनू के पिताजी से एक तलाक शुदा नामक बनकर बताया। उसने कहा, मैं केशव हूँ, पर अकेला हूँ।

पतिदेव ने सब सुना, उसे ठीक से देखा, फिर मन ही मन सोचा कि शायद मेरे शबरी का संयोग मेरे सामने आ चुका है। राम भी तो अचानक ही आए थे।

वह पत्नी से सब कुछ–शीघ्र ही बताना चाहते थे, पर उनकी स्थिति कुछ अजीब हो गई थी। शायद वे किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो चुके थे। फिर बोले– केशव तलाकशुदा है। उसके बावजूद भी वह कीनू के माँ–बाप से उनकी बेटी का हाथ माँगने आया है।

केशव जब अपने बारे में बता रहा था, तभी उसकी आँखे डबडबा आयीं थी। वह रो पड़ा था और अपने काँपते हाथों से कीनू के पिता का पाँव पकड़ लिया था। वे उसे देखते रह गये। उसकी विनम्रता ने उन्हें विवश एंव निरुत्तर बना दिया, तब भी वे झुककर उसका हाथ पकड़े और बोल पड़े– "हाँ" हाँ बोलते ही उन्होंने एक गिरे को उठा लिया। उन्हें कुछ भी सोचने, कहने या बोलने का मौका ही केशव ने नहीं दिया।

आगे वे अपनी पत्नी से बोले कि– केशव अभी–अभी मेरी हाँ के बाद चुटकी भर सिन्दूर लेने बाजार यह कहते हुए गया है कि हम दोनों सपरिवार अपनी प्यारी बेटी के साथ, माँ काली के मंदिर में आ जाँय। वहाँ देवी की आज्ञा से वह सिन्दूर कीनू के माँग में भरेगा।

माँ झटककर अन्दर चली गई। बेटी को उठाकर गले लगाया। वह रो रही थी। पर कीनू आवाक थी। जब कीनू ने माँ से सारी बातें जान लिया, तब वह हतप्रभ सी हो गई। सोच नहीं पा रही थी, कि माँ के आँखों में से कैसे आँसू हैं– खुशी के कि बिछोह के।

इसी बीच केशव सिन्दूर की डिबिया एवं चुनरी हाथ में लेकर आ पहुँचा। आते ही उसने फिर कहा– अब हम सब लोग मंदिर चलें। मुझे आपकी कीनू को नहीं अपनी किशुना के काले बालों के बीच एक लाल लकीर खिंचनी है तथा सम्पूर्ण शरीर पर यह चुनरी ओढ़ानी है।

माँ–बाप ने सपरिवार मंदिर में ही यह सब कुछ देखा और तभी देवी माँ को हाथ जोड़ते हुए ही कहा– जा बेटी तुझे सुखी संसार मिले।

कीनू के सम्पूर्णा शरीर पर टेसू के लाल फूल खिले थे– तभी तो यह अहिवात अमर रहे– की गूँज से मंदिर भी गूँज उठा। कीनू–केशव के साथ चली जा रही थी, पर बीच–बीच में, उलट–उलटकर माँ को अपने अश्रुपूरित आँखों से देख लेती– मानो बोलना चाहती हो कि हम दोनो फिर आएँगें माँ। ■■

❑ डी–II / 1, काका नगर, नई–दिल्ली–03

बुलबुल नहीं आई

हिंदी / लघुकथा

डॉ. जगमोहन सिंह

आज पिंकी सुबह से ही उदास बैठी थी। दोपहर होने को आया था, किन्तु उसने अन्न का एक दाना तक मुँह में नहीं लिया था। वह छोटे से कटोरे में दाने लिए बैठी थी। जैस–जैसे दाने को देखती थी, उसकी पीड़ा और बढ़ती जाती थी। वह किसी की प्रतीक्षा कर रही थी। पास खड़े दादाजी पिंकी को बहुत देर से दे ख रहे थे। वे पिंकी की मनःस्थिति को समझते थे। उन्होंने पिंकी की तंद्रा को भंग करते हुए कहा, ''बेटी...तुम किसकी बाट जोह रही हो? सुबह से तुमने अन्न का एक दाना तक मुँह में नहीं डाला है। यू अशांत...खोई हुई क्यों बैठी हो? अब लाकडाउन भी समाप्त हो गया है! सभी अपने–अपने काम–धंधे में पुनः लग गए हैं। पृथ्वी सचल हो गई है...बेटी! अब भय की कोई बात नहीं है। देख नहीं रही हो कि शोर कितना बढ़ गया है! इंसान अपने लय में पुनः लौट आया है। ऐसे में तुम क्यों अशांत बैठी हो? जाओ... बाहर खेलो। तुम्हारी सखियाँ प्रतीक्षा कर रही हैं। अब मन मारकर बैठे रहने से क्या लाभ?''

पिंकी दादाजी की बात सुनकर अचानक बोल पड़ी, ''किन्तु दादाजी... मेरी बुलबुल न जाने कहाँ चली गई है? वह नहीं आई। मैं कब से उसकी बाट जोह रही हूँ। उसके लिए दाने की कटोरी भी भर लाई हूँ। आज तीसरा दिन है...दादाजी ! प्रत्येक दिन वह आ जाया करती थी। वह अकेले भी नहीं आती थी। उसके साथ उसका पूरा परिवार होता था। मैं उसे दाना खिड़की से ही डाल दिया करती थी। पूरे लॉकडाउन में वह यहाँ आती रही है, किन्तु अब सब कुछ ठीक हो गया है...तब मेरी बुलबुल ना जाने कहाँ चली गई?'' एक ही साँस में पिंकी से सब कुछ कहकर मुँह लटका लिया। दादाजी सब समझ गए। उन्होंने पिंकी को पुचकारते हुए कहा, ''बेटी... तुम उदास क्यों होती हो ? बुलबुल अपने परिवार के साथ सगे–संबंधियों से मिलने गई होगी! उन सबका एक बहुत बड़ा परिवार होता है। वे अपने हृदय में कोई भेद–भाव नहीं रखते हैं। इसी कारण अपने सगे–संबंधियों से मिल आते हैं। तुम अशांत मत होओ। देखना कुछ दिन बाद बुलबुल अवश्य आ जाएगी।'' यह सुनकर पिंकी आनंद से उछल पड़ी। कूदती हुई दादाजी को कटोरा पकड़ाकर बाहर भाग गई। दूसरी ओर दादाजी गहरी पीड़ा में डूबते हुए सोचने लगे कि श्बुलबुल अब कहाँ आएगी ! उसने कोई अन्य ठिकाना ढूँढ लिया होगा। उसे शांति प्रिय है। अब कोलाहल में आकर उसे बीमार थोड़े ही होना है!''

यह कहते–कहते दादाजी आकाश की ओर ताकने लगे। शायद अभी भी उन्हें बुलबुल के आने की आस थी। कई दिन बीत गए, किन्तु बुलबुल नहीं आई। आज भी पिंकी दाने से भरा कटोरा लिए खड़ी रहती है और दादाजी, उनसे कुछ कहते नहीं बनता। ■■

❑ सहायक प्रवक्ता, हिंदी विभाग, रानीगंज गर्ल्स कॉलेज
सियरसोल राजबाड़ी, पश्चिम बर्द्धमान (प. बंगाल)

फर्क

हिंदी / लघुकथा

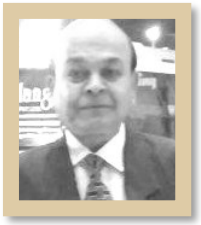

संदीप नारद

लॉकडाउन खुलने के बाद आज कामवाली बाई जैन साहब के यहाँ काम करने आयी थी। उसने काफी फर्क महसूस किया। अब बर्तनों की संख्या भी सीमित हो गई थी। जहाँ आठ गिलास निकलते थे, वहाँ अब सिर्फ चार लोगों के चार गिलास और उसी हिसाब से बर्तनों की संख्या भी कम हो गई थी। पोंछा लगाते समय भी उसने फर्क महसूस किया। लॉकडाउन के पहले जहाँ सारा घर तितर–बितर हुआ करता था, अब सारा सामान बिलकुल करीने से, जमा हुआ था। उसे भी झाड़ू–पोंछा करने में ज्यादा समय नहीं लगा लेकिन उसने आज दिल लगा कर पूरा काम किया। शाम को जब वह अपनी बस्ती में पहुँची तो सारी की सारी बाइयों ने अपनी अपनी मालकिनों की तारीफ करना शुरू कर दी। सबको यह समझ में नहीं आया कि यह सब कोरोना की करामात है जिसने क्या अमीर, क्या मध्यमवर्गीय और क्या गरीब, सबको काम की महत्ता और खुद का काम करने की आदत डाल दी। सभी बाइयों ने दिल से कोरोना को धन्यवाद दिया। ■■

❑ तुलसी नगर, सरस्वती मंदिर के पास, इंदौर (म.प्र.) 452010 / मो– 9630778225

रिक्शावाला

हिंदी/लघुकथा

अनिता रश्मि

रमेश सदा खिच–खिच करता। अपनी जिद से टस से मस नहीं होता। रिक्शेवाले से उलझना रोज का काम। आज भी वह लंबी दूरी तय कर गंतव्य पर पहुँचते ही उतरा और रिक्शेवाले की ओर आदतन कम पैसे बढ़ाए।

''इतना कम?... ना साब! और दस रुपये दें।''

''चल, आगे बढ़। कितना भी दो, तुमलोगों का पेट ही नहीं भरता।''

''इसीलिए भाड़ा तय करके आना ठीक रहता है।''

रिक्शेवाला बुदबुदाया लेकिन हथेली नहीं बढ़ाई। रमेश ने रुपये सीट पर रख दिए। आवाज चाबुक की तरह पड़ी, ''ये भी उठा लो सॉब। इससे मैं अमीर नहीं बन जाऊँगा।''

''अरे! बहस किए जा रहा है। मुझे ऑटो से आना चाहिए था। समय भी बचता, कम पैसे भी लगते।...लेना है लो, नहीं तो जाओ भाड़ में।''

रमेश पलटा, जाने लगा। फिर ठिठका अचानक।

''रिक्शा डिजल, पेटरोल से नहीं चलता साब। हमारा खून से चलता है।''

सुनते ही उसका हाथ पैंट की जेब के अंदर जा पहुँचा। ■■

❑ 1सी/डी, सत्यभामा ग्रैंड, कुसई, डोरंडा, राँची

रात अभी बाकी है

हिंदी/कविता

कनक किशोर

गजल बाकी है गीत बाकी है
चाँदनी थोड़ा ठहर रात अभी बाकी है।

चाँद अब तू बता जाता कहाँ
मिलन की प्यास तेरी आंखों में
कभी छूपता कभी उगता जहाँ
वो आकाश तेरी मुट्ठी में।
अब तू धीरे चलो रात अभी बाकी है।

सुरमई रात बहे सुन्दर पवन
चाँदनी संग संग फिर कहाँ चले
हो व्याकुल चाल कह रही तेरी
आगे शुन्य है कौन मिलेगा गले।
बस तू एही ठहर रात अभी बाकी है।

मादक पव बसंत ऋतु देख
बहकी–बहकी है तेरी चाल
लिए आगोश झुरमुट में छिपते
चाँदनी हुई शर्म से लाल।
चाँद तू जल्दी निकल रात अभी बाकी है।

मैं न सोचा था चाँद तू ऐसा है
प्रेम में बावरा बना तू बैठा है
मन कहता है तू खुद गजल है
सच कहूँ चाँद तूही तो गीत है।
चाँदनी थोड़ा ठहर रात अभी बाकी है।
■■

❑ राँची (झारखंड)

नदी का बहना

हिंदी/कविता

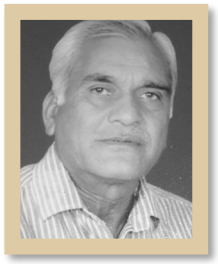

शिव डोयले

बहुत बचाकर
चलती है नदी
घर,गाँव की मिट्टी
नन्हे पौधों की हँसी
और जीने की उम्मीद में
खड़ी फसल को
सुरक्षित रखते हुए

नदी गाती है
हरियाली के घर
पानी के गीत
किनारों को थपथपाती
संगत करते वन,वृक्ष

रहकर भी प्यासी
बुझाती है सबकी प्यास
पिघल जाता
पहाड़ का बैरागी मन

नदी की क्रियाशीलता
तोड़ देती है
ठहराव के अहम् को
दूर तलक
टुकड़ों–टुकड़ों में बाँट
बहा ले जाती है

नदी तुम बहती रहना
अपनी गति से ■■

❑ झूलेलाल कालोनी, हरिपुरा, विदिशा (म.प्र.) 464001

सपने होंगे पूरे

हिंदी / कविता

आशा बिधुड़ी

देखे जो सपने वे होंगे पूरे,
कब से देखे थे, जो ख़्वाब थे अधूरे।
चाहे आए कितनी मुश्किलें,परेशानियाँ,
पर वादा है आएँगी जीवन में खुशियाँ।
मेहनत है सफलता की सीढ़ी,
जो ले जाएगी आगे,
मेहनत से तो आलस भी कोसों दूर भागे।
अब नहीं रुकेंगे ये बढ़ते हुए कदम,
विघ्न–बाधाओं को पार करे आगे बढ़े हम।
ठान ली है मन में यही बात,
कर देंगे सपने पूरे
करने के लिए दिन–एक रात।
कोई भी न दे पाएगा अब हमें मात,
सपने पूरे होंगे गाए अब यही मेरा गात।
दिखाना है दुनिया को
कि रुकेंगे नहीं अब पद,
दुनिया देखेगी अब सदैव मेरा ऊँचा कद।
चींटी गिरती उठती फिर आगे बढ़ती,
मौका पाकर हिम्मत जुटाकर
फिर दीवार पर चढ़ती।
चींटी की सीख को अब अपना लिया है,
सपनों को पूरा करना है,
ख़्वाब यह सजा लिया है।

■■

❑ के आर मंलगम् वर्ल्ड स्कूल, जीके–2, नई दिल्ली

ऐ मेरी दुखमयी रातें

हिंदी / कविता

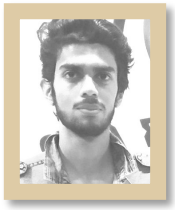

केतन यादव

ऐ मेरी दुखमयी रातें
क्यों बिलखकर रो न लेती ?

हैं उमड़ते मेघ तेरे इस हृदय स्नेहिल पटल पर
टूटते मिटते गरजते हैं बिखरते इस अचल पर
क्यों न तुम खुद के बरसकर
इस नयन में हो न लेती
ऐ मेरी दुखमयी रातें
क्यों बिलखकर रो न लेती ?

क्षण भर उजाला बस लिए
आकाश में बिजली चमकती
वेदना के फिर अँधेरों में मेरी रातें सिमटती
सिसकियाँ भर कर लिपटकर
गोद में क्यों रो न लेती
ऐ मेरी दुखमयी रातें
क्यों बिलखकर रो न लेती ?

खिड़कियों से झाँक आ तू
रात में यह कौन जागा
यूँ विरह में रो रहा वह कौन है इतना अभागा
उसके चिर संतप्त मन के–
ताप छू कर धो न लेती
ऐ मेरी दुखमयी रातें
क्यों बिलखकर रो न लेती ? ■■

❑ दिलेजाकपुर, आर्य नगर, गोरखपुर (उ.प्र.)

आज सोचती हूँ

हिंदी / कविता

डॉ. रितू शर्मा मनोचा

जी हाँ, कभी–कभी हमको भी,
खुद से मिलने का समय मिलता है!
तो कुछ सोच लेती हूँ,
अपने बारे में जानने की
बड़ी तीव्र इच्छा उत्पन्न हो जाती है।
यह स्वाभाविक प्रवृत्ति ही है,
मनुष्य सबको ही,
सब कुछ ही जानना चाहता है
पर जनाब! अपने विषय में भी
जानने की कोई इच्छा होती है?
बड़ा उटोपिया है!
जी हाँ! मगर मैं अपने बारे में जानना चाहती हूँ
रोज ही मैं शीशा देखती हूँ
मगर ध्यान केवल कपड़ों, शृंगार
और बालों पर ही जाता है।
मैं चाह कर भी
अपने आप से नहीं मिल पाती हूँ
वक्त इतनी भी मोहलत नहीं देता
कि एक मिनट से ज्यादा मैं
आइने में अपने आप को देखूँ।
जिम्मेदारियाँ गुहार लगाकर बुला लेती हैं,
सोचती हूँ, शीशा तो देखा था, मगर क्या देखा?
यह प्रश्न विगत कई सालों से
मुझे परेशान करने लगा है।
यंत्रवत ज़िंदगी कहाँ से कहाँ आ गई!
दिन बदले, साल बदले, मौसम बदले पर
जीवन से रिश्ता वही बेइमानी रहा।
आप से पूछना चाहती हूँ
क्या आपने स्वयं को शीशे में देखा है?
या मेरे मन के भीतर का हाहाकार है
जो मुझे इसप्रकार के प्रश्नों में उलझा देता है।
या व्यक्तित्व की पहचान है जो
आज सिर उठा कर प्रश्न की तरह
खड़ा हो गया है।
कुछ भी हो, यह प्रश्न आजकल सता रहा है
कुछ पिछले पन्नों में उलझा रहा है।
जी हाँ! मुझे पूरा यकीन है कि एक दिन मैं
इन प्रश्नों का सिरा या उत्तर ढूँढ लूँगी।
और उस दिन मैं अपने आप से आइने में मिलूँगी
हाँ वह दिन अवश्य आएगा।

❑ पालम विहार, गुरुग्राम (हरियाणा)

ठहराव

हिंदी / कविता

शहजादी खातून

मलिनता कि मल पर
श्वेत जल चढ़ाना
प्रवेश द्वार से
गर्जन का ना निकलना
कोने के मेज पर
मूर्तियों को स्थापित करना
आंगन के बीच
पौधों का अंकुरित ना होना
जीने कि चाह को
अंधेरों में कैद कर देना
तल्ख से उन्माद का मिलन
शहर से इलाके का
रिश्ता ना होना
जड़ों का जमीन में
समाहित ना होना
पड़े जूठन, फेके उतरन
को बड़े शौक से ग्रहण करना
उड़ान के गति को
जंजीरों का जकड़न
एक शती से
सती का निकल जाना
एक उम्र से
उम्र का ढल जाना
एक चीर को चील का
उड़ा लें जाना
तत्पश्चात ठहराव
केवल प्रश्नचिन्ह का
ठहराव रह जाना। ■■

❑ आसनसोल (प. बंगाल)

तुम्हारा जाना

हिंदी / कविता

डॉ. सांत्वना श्रीकांत

समाज के अपरिभाषित
तानों से लहूलुहान होकर,
जब झटक दोगे तुम हाथ मेरा,
छुअन भी–
जो वर्षों संजोयी है मैंने,
हथेली की लकीरों पर
तुम्हारी उंगलियों के पोरों से।
अंतस का उजास,
दम तोड़ देगा,
मौन ही,
तुम्हारी बाहों में।
जाने दूंगी फिर तुम्हें,
जानते हुए भी कि
'जाना'
हिंदी की सबसे खौफ़नाक क्रिया है
अग्रज ने बताया था।
महसूस भी किया
जब पिता चले गए थे,
बिना बताए।
तुम्हें जाने दूँगी
क्योंकि
तुम नहीं जानते,
जाना कभी ना लौटने के लिए,
अर्थहीन हो जाता है।
जब–
कोई बंधन ना हो,
पाप–पुण्य का लेखा न लिखना हो,
और तब भी
जिए गए हों कई युग,
कुछ ही लम्हों में। ■■

❑ नई दिल्ली

ऋतुराज

हिंदी / कविता

नवीन जोशी 'नवल'

धानी पगड़ी, पीत वसन तन,
देख सखी ऋतुराज हैं आए!

सकल तमस को किये पराजित,
मंद–मंद मुसकाये दिनकर!
नव बसंत का स्वागत करने,
शगुन गीत मृदु गाये अम्बर,
कुसुम–कली निज लोचन खोले,
नवल बसंत मनहि मुसुकाये
देख सखी ऋतुराज हैं आए!

प्रकट भई माँ हंसवाहिनी,
वीणा अरु पुस्तक ले कर में!
आभूषण धरणी ने धारे,
नव उत्सव यह क्षिति–अम्बर में!
ताल, तलैया, सरिता विहसे,
कोयल मीठे बैन सुनाये,
देख सखी ऋतुराज हैं आए!

वन–उपवन में चहल पहल है,
मंद पवन, चातक आतुर हैं!
कैसी धूम मची धरणी में,
रतिविलास को खग आतुर हैं!
ले मकरंद मधुप सब गूंजत,
सुर दुर्लभ क्षण कहि नहि जाए,
देख सखी ऋतुराज हैं आए!

सकल विटप अब भये पल्लवित,
चहकत शुक–पिक निज ही वाणी,
मानुष, जलचर, खग, चौपाये,
सखी अनंदित हैं सब प्राणी!
अबके फाग हमहि संग खेलो,
जाने न दूं बिन रंग चढ़ाए,
देख सखी ऋतुराज हैं आए!■■

❑ 835/बी, गली– 2, उपकार कॉलोनी, बुराड़ी, दिल्ली

गोरो रंग आजहु कारे पै भारी

ब्रज / आलेख

मनु वाशिष्ठ

अखबार में किराए कूं दुकान मकान, ब्याहु सादी, व्यापार आदि के विज्ञापन वारे कॉलम में निगाह डारी तो एकु विज्ञापन में लिखौ देख्यौरू गोरी, सुंदर, स्मार्ट लड़की चाहिए। अरे दादा! बिंते यौं पूछौ तुमन्ने योग्यता ना चहिए क्हा, गोरे रंग तेई काम चल जायेगौ? सामरे रंग वारिन को जीबो कितेक मुश्किल होए, जी काऊ सामरी छोरी ते पूछौ। काली कलूटी, बैंगन लूटी जैसी कहनावत तौ कईयों बेर सुनिवे कूं मिलै, बाकौ एक नाम काली, कल्लो, मावसिया तो निश्चित ही होयगो। जबतब घरवारे हू दुखियात रिहंगे। कोऊ दही बेसन, कोऊ नीबू, कोऊ कछु क्रीम फ्रीम सी बतामत ही रिंहगे, मैया बापन ते सहानुभूति दिखांगे सो अल्लग, जने कितेक हिमायती हतें।

हत तौ जी गल्त बात ए, पर सच्चाई जेई ए कि आज ऊ गोरौ रंग कारे पै भारी ए। अंग्रेज तौ चले गए, पर गोरे रंग कौ आकर्षण छोड़ गए। नई बात नांए, आजहू गोरो रंग सुंदरता कौ पैमानौ मान्यौ जाए, जबकि सुंदरता कौ गोरे रंग ते कोऊ लैनौ दैनौ नांयं। कईयों तौ गोरेपन के इतेक बावरे होंयें कि, बिंने तौ दूध ऊ भूरी भैंस कौ चहिए। बू गानों तौ सबन्ने सुनौ होएगौ जामें बहू अपने पति ते कह रही ए– कटेमां दही तौ खाऊंगी भूरी भैंस कौ जी!

आजऊ कैऊ जगै, गुणन नें ताक पै धरि कें रंगए महत्व दियौ जाए। देखवे वारेन नै दुल्हन गोरी चहिए! बीवी गोरी चहिए! बहू हू गोरी चाहिए! बच्चा हू गोरे चहिएं! जी कैसौ बावरौ. पन ऐ। भलेई बाद में रोमें, पर पहलें तौ गोरो रंग ई चहिए। मईयाऊ अपनी गोरी छोरिन नें देख कें निहाल होमें, जैसे इन्ने बड़ी मेहनत कौ काम करौ ए। गोरो रंग अतिरिक्त गुण मान्यौ जाए। जब इतेक डिमांड होए तौ छोरिन केउ दिमाग खराब है जाएं, बिन मेंऊं घमंड आत देर नांएं लगै, बे अपनी खूबसूरती के आंगे काऊ ए कछु ना समझें। बैसें सबन पै लागू नांएं होवै जी बात, फिरऊ होवै तौ हत। आजहू गामन में अपनी गोरी चिट्टी छोरी के ब्याह में कहूं दामाद सामरौ मिलगौ तौ, मईया कैसें रोवैगी– अरे मेरी मैदा की लोई ए कौव्वा ले कें उड़ि गयो बिनते जौं पूछौ, बू कऊवा ही तुमाई छोरी ए राखेगो, नखरेन ने झेलेगौ, खवाबेगौ, पिवाबेगौ ओरु सहबेगो। वैसे जी गीत तौ सुनौ होएगो... गोरे रंग पै न इतना गुमान कर / गोरा रंग दो दिन में ढल जाएगा।...जी गीत काऊ फिलम वारे ने सही लिख्यौ ऐ। एक ओरु गीत की बानगी देखो ...

गोरे गोरे मुखड़े पे काला काला चश्मा।/तौबा खुदा खैर करे, क्या खूब है करिश्मा।।

साँवरी ए तौ क्हा वाकौ आत्मविश्वास तौ कम मत करौ, बाऊ ए चश्मा लगाईवे को, जीवे खुस रहवे कौ हकु हत्वै, अरु जी कोऊ खराब बात नांएं। जई मारें हर जगह सामरे रंग वारेन कूं अपने आप कूं साबित करबे काजैं जादा मेहनत करनी परै। (घर, ऑफिस, नौकरी, समाज कहूं देख लेओ) वैसें सुंदरता तौ देखवे वारेन की आंखन में होय।

एक पुरानौ गीत याद आय गयौ–''पानी में जले मेरा गोरा बदन।'' अब जों बताओ गोरे रंग में क्हा कछु रसायनिक प्रक्रिया सुरू है जावे जो कारे, सामरेन में नांएं जायगी। भलौ होय अमरोही साब कौ, जिन् ने जी गीत लिखौ– कहीं एक मासूम नाजुक सी लड़की बहुत खूबसूरत मगर रुसांवली सी।

चलौ, काऊ ने तौ कदर जानी।

बिदेसन में बईयर धूप में डरी डरी, लोट लोट कें कारी होंगिं, ओरु जां लगाय लगाय क्रीम गोरी...

बैसैऊं काऊ साहित्यकारै उठाए कें देख लेओ, सबन की नायिका साँवरी मिलंगी। कालिदास की शकुन्तला सांमरी, वाल्मीकि की सीता मईया सांमरी, पांडवन की द्रौपदी सामरी, गोरे मजनूं की लैला ऊ कारी हती, प्रेमचन्द अरु रवीन्द्र नाथ टैगोर कीऊ नायिकांएं सामरी हतीइं। सुंदरता तौ देखवे वारेन की आंखिन में होय।

जाकौ मतलब इतिहास मेंऊ सुंदरता कौ मतलब गोरो रंग नाओ। जी तौ विज्ञापनन ने ओरू अपनौ सामान बेचवे वारी कंपनीन्नें हमाओ ब्रेनवाश कर दियौ ऐ। गोरेपन की क्रीम, जाए खुद मैंने कई बईयरन कूं पिछले तीस चालीस बरसन ते फेयर एंड लवली क्रीम लगामत देखिं एं, और आज की तारीख मेंऊं, जबकि बे बइयर बानी, दादी नानी बन गई एं, अरु काऊ ऐ कच्छू सफलता नांयं मिली। नौकरी होय चाएं ब्याह सादी, पढ़ाई, योग्यता सब सेकेंडरी लगै, क्हा गोरो होयबो सही में इतेक बड़ी योग्यता ऐ? अब तो मर्दन कें काजें ऊं गोरेपन की क्रीम ... राधे राधे।

बेसें ब्रज में अपने तौ कन्हैया ऊ परेसान, बारम्बार मईया ते पूछें, राधा क्यों गोरी मैं क्यों काला... क्हा बतावें, अपने कन्हैया की जई सांवरी सूरत की तौ गोपी दीवानी है गई हतीं। दुनिया में दो ई रंग हतें कारो ओरु गोरो। सोच कौ फरक ए, चमड़ी कौ रंग चाएं कैसौ हू होय पर मन कारौ नईं होनो चहिए।

जय बंसी वारे की। ■■

❑ ए / 201बी, मंगल भवन, माला रोड, कोटा (राजस्थान)

कोरोना : आपदा या अवसर

हिंदी / लघुकथा

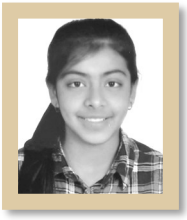

स्वाथी गुराडा

सन् 2020 में कोरोना महामारी ने समग्र विश्व को हिला दिया था। यह बहुत बड़ी आपदा थी किंतु सना के जीवन में एक नया अवसर। सना का कुछ वर्ष पूर्व ही विवाह हुआ था। ईश्वर ने सना और उसके पति रोहन को एक बहुत ही सुंदर कन्या के साथ आशीर्वाद दिया। सना एक विद्यालय के अध्यापिका थी किंतु दिव्या के जन्म के पश्चात वह अपने स्कूल के कार्य पर ध्यान नहीं दे पा रही थी। कई बार उसे अपनी बेटी को रोहन के पास छोड़कर जाना पड़ता था। पति का साथ था किंतु वह भी कहता, ''इस प्रकार कैसे काम करोगी? मेरा भी काम है। दिव्या को कैसे संभालोगी? फिर तुम्हारा स्कूल का काम कैसे होगा?''

यह सब सोचकर सना को बहुत दुख होता था। जीवन असंतुलित हो गया था।

अब करोना के समय घर बैठकर कार्य करना था। 'यह बहुत अच्छा अवसर है। अब मैं बेटी का भी ध्यान रख पाऊँगी और कंप्यूटर पर बच्चों को भी पढ़ा सकूँगी।' –सना ने सोचा।

अब सना घर के सारे काम कर पाती है, अपने परिवार के साथ समय भी बिता पाती है और विद्यालय के काम भी पूरा हो जाते हैं। वास्तव में, करोना एक आपदा ही नहीं, अवसर भी है। ■■

❑ गुरुग्राम (हरियाणा)

TIME OPTIMIZATION

English/ Article

Devisha Bhargava

Take care of minutes and hours will look after themselves.

There was a conclusion from the 1993 British survey carried out by the Industrial Sector that, many people manage time suitably. It was discovered that they drain one-fifth of their time due to telephone interruptions, people dropping by, lack of organizational devising, poor listening skills, irresolution, moving goalposts, switching priorities, and many more like that.

There are seven rules you may follow to run your time better.

SET GOALS AND ASCERTAIN PRIORITIES

Identify explicit but challenging goals for yourself so that your time management has some purpose. Establishing priories makes sure that you spend time on things that matter to you.

SPOT THE TIME WASTRELS

Think about how you spend your time. This might give you some clue about how to save it: traveling, speaking, sleeping, conflict resolution, daydreaming, etc.

LIVE TIME MANAGEMENT

Be ruthlessly self-disciplined and always time conscious. Use every day discreetly. Remember the worth of your time- time past is gone forever.

THINK QUALITY NOT QUANTITY

It is all about using your time better, not fundamentally working harder. You must use as little time as possible to accomplish your work goals so that you can give more time to your loved ones. So, organize yourself.

- **METHODIZE YOURSELF FOR TRIUMPH**

1. Act purposefully and positively
2. Stay healthy in body and mind
3. Battle with paper
4. Upgrade your filing and storage- Have to hand items that you need often should be near you.
5. Clear your desk
6. Elude interruptions
7. Don't get bogged down in detail
8. Don't believe anyone who says" it will only take a minute"
9. Prioritize
10. Look before you leap

WRITE A DAILY TIME LOG

Japanese people always carry a dairy (called 日記 'Nikki' in Japanese) to organize their daily meetings and goals. In spite of the burgeoning technology, they follow the rites of writing the dairy each day, supporting them to become more efficient and prolific.

WORK TO SUIT YOUR PREFERRED LIFESTYLE

Make sure your work satisfies your individual needs as far as possible. It must match the way you want to direct your life. So, mould your career to your requirements. ■■

❑ Gurugram (Haryana)

सितारे दूर के

हिंदी / कविता

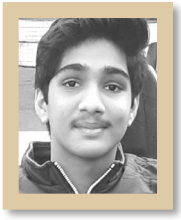

हर्ष लहोटी

सितारे दूर के,
चमकते नूर से,
क्या सुंदर है नज़ारा,
मानो खो ही जाऊँ

नज़ारे सुंदर मिलते नहीं,
उस जगह
जहाँ जहान पास हो।

मुझे आना पड़ा
मीलों दूर,
अब है ना कोई
पास जहाँ।

❑ हैदराबाद (आंध्र–प्रदेश)

उत्तर-प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ और
हिंदुस्तानी भाषा अकादमी, प्रयागराज से पुरस्कृत पुस्तकें

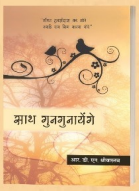

साथ गुनगुनायेंगे
दुष्यंत कुमार
पुरस्कार

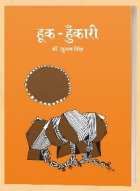

हूक-हुँकारी
भिखारी ठाकुर
पुरस्कार

आखर आखर गीत
भिखारी ठाकुर
भोजपुरी सम्मान

सर्वभाषा ट्रस्ट, नई दिल्ली
E-mail : mail@sarvbhashatrust.com • Contact : 8178694606

लोकगीतों के संकलन, सवर्द्धन और संरक्षण के लिए आप भी आगे आएँ...

अनामिका वर्मा (लोकगीत संग्राहक)

संकलकर्ता : कोहबर काव्य / संचालिका : सुर सखी

anamika.verma.731 sursakhii Sur sakhi

Careng Insitu
(A Complete Home Healthcare Service)

Careng Insitu aims to bring Medical and Caring services to people's home at competitive prices. We wish to restore the mutual trust, warmth and understanding that has been eroded away by overcrowded and profiteering healthcare industry.

Services

- Physiotherapy at Home
- Elder Care
- Parental Care
- Critical Care
- Equipment Rent
- Speech Therapy
- Dietitian
- Mother and Baby Care
- Vaccination
- Sleep Test
- Alternative Treatment
- Psychologist
- Acupressure & Acupuncture
- Yoga

All These Services at Your Home

CARENG INSITU PVT LTD.
E-25B, Jawahar Park, Laxmi Nagar, New Delhi-110092
011-41708443, 9899216225
Email: info@careng.in Website: www.careng.in

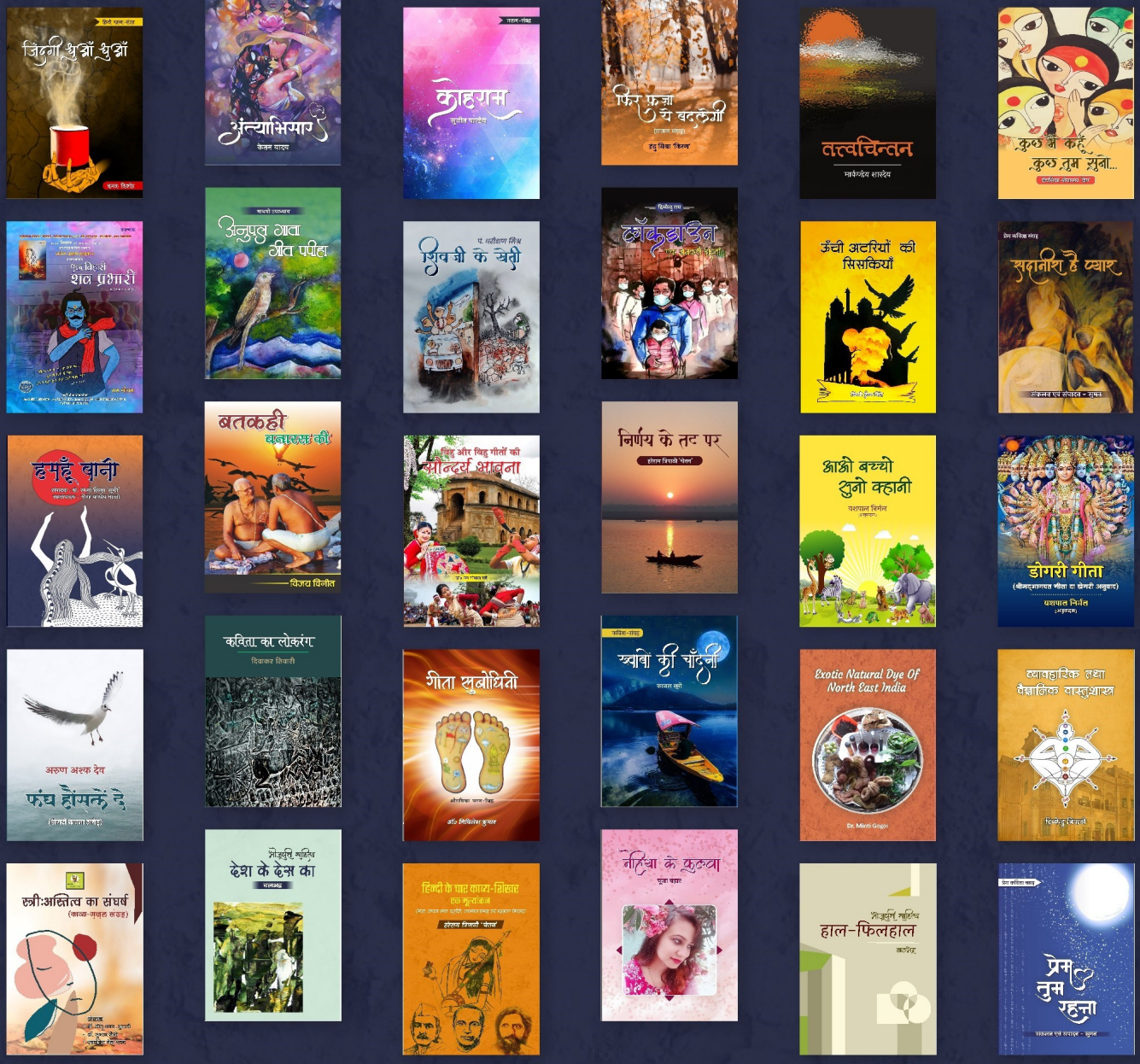

हार्डबाउंड, पेपर बैक, ई-बुक व ऑडियो-बुक ISBN के साथ किसी भी भाषा में प्रकाशन के लिए हमें कॉल करें या लिखें।

सर्व भाषा ट्रस्ट

नई दिल्ली

www.sarvbhashatrust.com

E-mail : sbtpublication@gmail.com | Contact : 8178694606

sbtpublication | sarvbhashatrust | Sarv Bhasha Trust

sarvbhashatrust | sbhashatrust